श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

(सचित्र 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

द्वितीयः खण्डः

(द्वितीयः स्कन्धः तृतीयः स्कन्धश्च)



दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद - २११ ००२

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

(सचित्रं 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

द्वितीयः खण्डः

(द्वितीयः स्कन्धः तृतीयः स्कन्धश्च)



टीकाकर्त्री

श्रीमती दयाकान्ति देवी

धर्मपत्नी—श्रीलोकमणिलाल

दयालोक प्रकाशन संस्थान

१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद, २११००२

प्रकाशक—दयालोक प्रकाशन संस्थान, १८, पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद

विक्रमसंवत् २०४४, प्रथम संस्करण १०००

प्राप्ति-स्थान
दयालोक प्रकाशन संस्थान
१८ पन्नालाल मार्ग, इलाहाबाद—२११००२

मूल्य : ७५.०० रुपये मात्र

मुद्रक—
शाकुन्तल मुद्रणालय
३४, बलरामपुर हाउस, इलाहाबाद

नम्र निवेदन

भक्त पाठको,

भक्त, भक्ति, भगवान् और भागवत --इन शब्दों में एक ही भज् धातु उसी प्रकार ओत-प्रोत है जिस प्रकार एक ही सूत्र पुष्पादि की लंबी माला में अनुस्यूत रहता है। भज् धातु का अर्थ है— सेवा (भज् सेवायाम्-पाणिनि धातुपाठ)। अतएव भक्त का अर्थ हुआ 'सेवक'। भक्ति का अर्थ है— 'सेवा'। भगवान् का अर्थ है– 'सेव्य (षडैश्वर्य सम्पन्न)'। और भागवत का अर्थ है—'भगवान् का स्वरूप या विग्रह। तभी तो पद्मपुराणान्तर्गत श्रीमद्भागवत के माहात्म्य-अध्याय– ३, श्लोक ६१—६२ में स्पष्ट रूप से श्रीमद्भागवत को भगवान् का श्रीविग्रह घोषित किया है—

> 'स्वकीयं यद्भवेत्तेजस्तच्च भागवतेऽदधात्।
> तिरोधाय प्रविष्टोऽयं श्रीमद्भागवतार्णवम्॥
> तेनेयं वाङ्मयी मूर्तिः प्रत्यक्षा वर्तते हरेः।
> सेवनाच्छ्रवणात्पाठाद्दर्शनात्पापनाशिनी ॥'
>
> (दे० हमारे संस्करण प्र० ख० पृ० ११०)

यही कारण है कि आस्तिक समाज में श्रीमद्भागवत पुस्तक की पुजा के बाद ही उसका पारायण होता है। यों तो विष्णु भक्ति से सम्बद्ध होने के कारण विष्णु, नारद, भागवत, गरुड, पद्म और वाराह ये ६ पुराण सात्त्विक माने गये हैं। किन्तु इनमें भागवत पुराण सबमें अग्रणी है। क्योंकि इसके विषय में पाणिनि के सूत्र 'यावदवधारणे' २।१।८। के उदाहरण में 'यावच्छ्लोकम्' प्रयोग आया है। इसका अर्थ प्राचीन परम्परा से यह किया जाता है—यावन्तः श्लोकास्तावन्तोऽच्युतप्रणामाः'— भागवत के जितने श्लोक हैं, उतने विष्णु के प्रणाम के द्योतक हैं अर्थात् भागवत के सभी श्लोकों से प्रकट होता है कि विष्णु प्रणम्य हैं।

ऐसे भागवत ग्रन्थ पर अनेकानेक टीकायें लिखी गई हैं। किन्तु वे सब विद्वानों के लिए ही उपादेय हैं, सर्वसाधारण के लिए नहीं। इसलिए सर्वसाधारण भी भागवत के अर्थों का हृदयंगम करें इस विचार को आदर्श मानकर मैं इस महापुराण के टीका-लेखन कार्य में प्रवृत्त हुई हूँ। आठ खण्डों में प्रकाशित होने वाले संस्करणों का प्रथम खण्ड संवत् २०४१ में प्रकाशित हो चुका है, जिसमें श्रीमद्भागवत-माहात्म्य सहित प्रथम स्कन्ध मुद्रित है। उस संस्करण का सहृदय पाठकों ने स्वागत किया है। उससे प्रोत्साहित होकर मैं यह द्वितीय खण्ड भी पाठकों के हाथ में समर्पित कर रही हूँ। इस खण्ड में द्वितीय तथा तृतीय स्कन्ध मुद्रित हैं। द्वितीय स्कन्ध में भगवान् के विराट् स्वरूप से लेकर भागवत के दश लक्षण तक वर्णित हैं। तृतीय स्कन्ध में उद्धव और विदुर की भेंट वार्ता से लेकर कर्दम ऋषि की पत्नी देवहूति के मोक्षपद प्राप्ति का वृतान्त कहा गया है।

प्रथम खण्ड में पूजन सामग्री, हवन सामग्री तथा श्रीमद्भागवत महापुराण के पूजन एवं पाठ की संक्षिप्त विधि आदि विषय लिखे जा चुके हैं। इसके लिए जिज्ञासु को प्रथम खण्ड देखना चाहिए।

अन्त में मैं इस खण्ड के प्रकाशन में सहयोग करने वाले पं० श्री आज़ाद मिश्र, श्री कमलनयन शर्मा तथा आचार्य श्री तारिणीश झा जी के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

रामनवमी
सं० २०४४, कलि सं० ५०८८, श्रीकृष्ण संवत् ५११३
७ अप्रैल, १९८७

निवेदिका
इयाकान्ति देवी अग्रवाल

सूचना—इस खण्ड में फा० नं० गलत हो जाने से पृष्ठ संख्या ५१२ के बाद ५२१ छप गई है, किन्तु श्लोकसंख्या सर्वत्र सही है। पाठकगण इस त्रुटि के लिए क्षमा करेंगे। पुस्तक में पृष्ठों की संख्या ६३२ है।

श्रीहरिः

विषय सूची

द्वितीय स्कन्ध

तृतीय स्कन्ध

चित्र-सूची

(रंगीन)

रेखाचित्र



श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

द्वितीयः स्कन्धः



यन्नामस्मृतिमात्रेण निःशेषक्लेशसंक्षयः ।
जायते तत्क्षणादेव तं श्रीकृष्णं नमाम्यहम् ॥

श्री मद्भागवत की आरती

आरती अति पावन पुराण की ।
धर्म भक्ति विज्ञान खान की ॥ आ० ॥

महापुराण भागवत निर्मल ।
शुक-मुख-विगलित निगम-कल्प-फल ।
परमानन्द-सुधा-रसमय कल ।
लीला-रति-रस रस-निधान की ॥ आ० ॥

कलि-मल-मथनि त्रिताप-निवारिनि ।
जन्म-मृत्युमय भव-भय-हारिनि ।
सेवत सतत सकल सुख कारिनि ।
सु महौषधि हरि-चरित-गान की ॥ आ० ॥

विषय-विलास-विमोह-विनाशिनि ।
विमल विराग विवेक विकाशिनि ।
भगवत्तत्त्व-रहस्य प्रकाशिनि ।
परम ज्योति परमात्म-ज्ञान की ॥ आ० ॥

परमहंस-मुनि-मन-उल्लासिनि ।
रसिक-हृदय-रस-रास विलासिनि ।
भुक्ति मुक्ति रति प्रेम सुवासिनि ।
कथा अकिञ्चन प्रिय सुजान की ॥ आ० ॥

ॐ तत्सत

श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीयः स्कन्धः

अथ प्रथमः अध्यायः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकहितं नृप ।
आत्मवित्संमतः पुंसां श्रोतव्यादिषु यः परः ॥१॥

पदच्छेद—

वरीयान् एषः ते प्रश्नः, कृतः लोक हितम् नृप ।
आत्मवित् सम्मतः पुंसाम्, श्रोतव्य आदिषु यः परः ॥

शब्दार्थ—

वरीयान्	७.	बहुत उत्तम (है)	आत्मवित्	९.	आत्मज्ञानियों से
एषः	५.	यह	सम्मतः	१०.	मान्य (एवं)
ते	४.	आपका	पुंसाम्	११.	मनुष्यों के
प्रश्नः	६	प्रश्न	श्रोतव्य	१२.	श्रवण
कृतः	३.	किया गया	आदिषु	१३.	स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में
लोक, हितम्	२.	संसार के, कल्याण के लिए	यः	८.	यह
नृप ।	१.	हे राजन् !	परः ॥	१४.	सर्वश्रेष्ठ (है)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! संसार के कल्याण के लिए किया गया आपका यह प्रश्न बहुत उत्तम है। यह आत्मज्ञानियों से मान्य एवं मनुष्यों के श्रवण, स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में सर्वश्रेष्ठ है ।

द्वितीयः श्लोकः

श्रोतव्यादीनि राजेन्द्र नृणां सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यतामात्मतत्त्वं गृहेषु गृहमेधिनाम् ॥२॥

पदच्छेद—

श्रोतव्य आदीनि राजेन्द्र, नृणाम् सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यताम् आत्म तत्त्वम्, गृहेषु गृह मेधिनाम् ॥

शब्दार्थ—

श्रोतव्य	७.	सुनने (और)	सहस्रशः ।	९.	हजारों (बातें)
आदीनि	८.	स्मरण, कीर्तनादि के योग्य	अपश्यताम्	४.	न जानने वाले
राजेन्द्र	१.	हे राजन् !	आत्म तत्त्वम्	३.	आत्मा के स्वरूप को
नृणाम्	६.	मनुष्यों के	गृहेषु	२.	घर में (उलझे हुए तथा)
सन्ति	१०.	हैं	गृहमेधिनाम् ॥	५.	गृहस्थ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! घर में उलझे हुए तथा आत्मा के स्वरूप को न जानने वाले गृहस्थ मनुष्यों के सुनने और स्मरण, कीर्तनादि के योग्य हजारों बातें हैं ।

तृतीयः श्लोकः

निद्रया ह्रियते नक्तं व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्बभरणेन वा ॥३॥

पदच्छेद—

निद्रया ह्रियते नक्तम्, व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा च अर्थ ईहया राजन्, कुटुम्ब भरणेन वा ॥

शब्दार्थ—

निद्रया	२.	नींद से	दिवा	११.	दिन
ह्रियते	१४.	बिता देते हैं	च	१२.	इस प्रकार
नक्तम्	५.	रात	अर्थ, ईहया	७.	धन की, इच्छा से
व्यवायेन	४.	स्त्री प्रसंग से	राजन्	१.	हे राजन् ! (मनुष्य)
च	६.	और	कुटुम्ब	९.	परिवार के
वा	३.	अथवा	भरणेन	१०.	पालन-पोषण से
वयः ।	१३.	(सारी) आयु	वा ॥	८.	अथवा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मनुष्य नींद से अथवा स्त्री-प्रसंग से रात और धन की इच्छा से अथवा परिवार के पालन-पोषण से दिन, इस प्रकार सारी आयु बिता देते हैं ।

चतुर्थः श्लोकः

देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि ।
तेषां प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ॥४॥

पदच्छेद—

देह अपत्य कलत्र आदिषु, आत्म सैन्येषु असत्सु अपि ।
तेषाम् प्रमत्तः निधनम्, पश्यन् अपि न पश्यति ॥

शब्दार्थ—

देह	१.	शरीर	तेषाम्	९.	उनकी
अपत्य	२.	सन्तान	प्रमत्तः	८.	पागल हुआ (मनुष्य)
कलत्र	३.	स्त्री	निधनम्	१०.	मृत्यु को
आदिषु	४.	इत्यादि	पश्यन्	११.	देखता हुआ
आत्म सैन्येषु	५.	अपने सम्बन्धियों के	अपि	१२.	भी
असत्सु	६.	असत् होने पर	न	१३.	नहीं
अपि ।	७.	भी (उनके मोह में)	पश्यति ॥	१४.	देखता है

श्लोकार्थ—शरीर, सन्तान, स्त्री इत्यादि अपने सम्बन्धियों के असत् होने पर भी उनके मोह में पागल हुआ मनुष्य उनकी मृत्यु को देखता हुआ भी नहीं देखता है ।

पञ्चमः श्लोकः

तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम् ॥५॥

पदच्छेद—

तस्मात् भारत सर्व आत्मा, भगवान् ईश्वरः हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मतव्यः च इच्छता अभयम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिए	श्रोतव्यः	१२.	श्रवण
भारत	२.	हे परीक्षित् !	कीर्तितव्यः	११.	कीर्तन
सर्व	५.	सब की	च	१३.	और
आत्मा	६.	आत्मा (एवं)	स्मर्तव्यः	१४.	स्मरण करना चाहिए
भगवान्	८.	भगवान्	च	१०.	ही
ईश्वरः	७.	सर्वशक्तिमान्	इच्छता	४.	चाहने वाले (प्राणियों) को
हरिः ।	९.	श्री हरि की (लीलाओं का)	अभयम् ॥	३.	अभयपद

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! अभयपद चाहने वाले प्राणियों को सबकी आत्मा एवं सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का ही कीर्तन, श्रवण और स्मरण करना चाहिए ।

षष्ठः श्लोकः

एतावान् सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया ।
जन्मलाभः परः पुंसामन्ते नारायणस्मृतिः ॥६॥

पदच्छेद—

एतावान् सांख्य योगाभ्याम्, स्व धर्म परिनिष्ठया ।
जन्म लाभः परः पुंसाम्, अन्ते नारायण स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	३.	यही	लाभः	५.	फल (है कि)
सांख्य	७.	ज्ञान	परः	४.	सर्वोत्तम
योगाभ्याम्	८.	भक्ति (तथा)	पुंसाम्	१.	मनुष्यों के
स्व, धर्म	६.	अपने, धर्म में	अन्ते	६.	मृत्यु के समय
परिनिष्ठया।	१०.	श्रद्धा के कारण	नारायण	११.	भगवान् नारायण का
जन्म	२.	शरीर धारण का	स्मृतिः ॥	१२	स्मरण रहे

श्लोकार्थ—मनुष्यों के शरीर धारण का यही सर्वोत्तम फल है कि मृत्यु के समय ज्ञान, भक्ति तथा अपने धर्म में श्रद्धा के कारण भगवान् नारायण का स्मरण रहे ।

सप्तमः श्लोकः

प्रायेण मुनयो राजन्निवृत्ता विधिषेधतः ।
नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म गुणानुकथने हरेः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रायेण मुनयः राजन्, निवृत्ताः विधि षेधतः ।
नैर्गुण्यस्थाः रमन्ते स्म, गुण अनुकथने हरेः ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	६.	अधिकतर	नैर्गुण्यस्थाः	५.	निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर(भी)
मुनयः	४.	मुनिजन	रमन्ते स्म	१०.	रमे रहते हैं
राजन्	१.	हे परीक्षित् !	गुण	८	अनन्त लीलाओं के
निवृत्ताः	३.	संन्यास लिए हुए	अनुकथने	६.	कीर्तन में
विधि, षेधतः।	२.	(शास्त्रीय) विधि, और निषेध से	हरेः॥	७.	श्री हरि की

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! शास्त्रीय विधि और निषेध से संन्यास लिए हुए मुनिजन निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर भी अधिकतर श्री हरि की अनन्त लीलाओं के कीर्तन में रमे रहते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
अधीतवान् द्वापरादौ पितुर्द्वैपायनादहम् ॥८॥

पदच्छेद—

इदम् भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
अधीतवान द्वापर आदौ, पितुः द्वैपायनात् अहम् ॥

शब्दार्थ—

इदम्	६.	इस	अधीतवान्	१२.	पढ़ा था
भागवतम्	४.	श्रीमद्भागवत	द्वापर	१०.	द्वापर युग के
नाम	५.	नाम के	आदौ	११.	प्रारम्भ में
पुराणम्	७.	पुराण को	पितुः	८.	पिता
ब्रह्म	२.	वेद के	द्वैपायनात्	९.	वेदव्यास जी से
सम्मितम् ।	३.	समान ही	अहम् ॥	१	मैंने

श्लोकार्थ—मैंने वेद के समान ही श्रीमद्भागवत नाम के इस पुराण को पिता वेदव्यास जी से द्वापर युग के प्रारम्भ में पढ़ा था ।

नवमः श्लोकः

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्य उत्तमश्लोकलीलया ।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥९॥

पदच्छेद—

परिनिष्ठितः अपि नैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया ।
गृहीत चेताः राजर्षे, आख्यानम् यत् अधीतवान् ॥

शब्दार्थ—

परिनिष्ठितः	३.	श्रद्धा होने पर	गृहीत	८.	खिंच जाने से
अपि	४.	भी	चेताः	७.	हृदय के
नैर्गुण्ये	२.	निर्गुण ब्रह्म में	राजर्षे	१.	हे राजन् !
उत्तम श्लोक	५.	पवित्र कीर्ति (श्री कृष्ण की)	आख्यानम्	१०.	कथा
लीलया ।	६.	लीलाओं में	यत्	९.	(मैंने) जो
			अधीतवान् ॥	११.	पढ़ी थी (उसे कहूँगा)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निर्गुण ब्रह्म में श्रद्धा होने पर भी पवित्र-कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं में हृदय के खिंच जाने से मैंने जो कथा पढ़ी थी, उसे कहूँगा ।

दशमः श्लोकः

तदहं तेऽभिधास्यामि महापौरुषिको भवान् ।
यस्य श्रद्दधतामाशु स्यान्मुकुन्दे मतिः सती ॥१०॥

पदच्छेद—

तद् अहम् ते अभिधास्यामि, महापौरुषिकः भवान् ।
यस्य श्रद्दधताम् आशु, स्यात् मुकुन्दे मतिः सती ॥

शब्दार्थ—

तद्	५.	वह (कथा)	श्रद्दधताम्	८.	श्रद्धा रखने वाले (प्राणियों) की
अहम्	३.	मैं	आशु	१२.	तत्काल
ते	४.	आपको	स्यात्	१३.	लग जाती है
अभिधास्यामि	६.	सुनाऊँगा	मुकुन्दे	११.	भगवान् श्रीकृष्ण में
महापौरुषिकः	२.	परम भक्त (हैं अतः)	मतिः	१०.	बुद्धि
भवान् ।	१.	आप	सती ॥	९.	उत्तम
यस्य	७.	जिस पर			

श्लोकार्थ--आप परम भक्त हैं; अतः मैं आपको वह कथा सुनाऊँगा, जिस पर श्रद्धा रखने वाले प्राणियों की उत्तम बुद्धि भगवान् श्रीकृष्ण में तत्काल लग जाती है।

एकादशः श्लोकः

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ॥११॥

पदच्छेद—

एतद् निर्विद्यमानानाम्, इच्छताम् अकुतोभयम् ।
योगिनाम् नृप निर्णीतम्, हरेः नाम अनुकीर्तनम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	२.	सांसारिक विषयों से	नृप	१.	हे राजन् !
निर्विद्यमानानाम्	३.	विरक्त (तथा)	निर्णीतम्	१०.	निश्चित किया गया है
इच्छताम्	५.	इच्छुक	हरेः	७.	श्रीहरि के
अकुतोभयम् ।	४.	अभयपद के	नाम	८.	नाम का
योगिनाम्	६.	योगियों के लिए	अनुकीर्तनम् ॥	९.	कीर्तन

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सांसारिक विषयों से विरक्त तथा अभयपद के इच्छुक योगियों के लिए श्रीहरि के नाम का कीर्तन निश्चित किया गया है।

द्वादशः श्लोकः

किं प्रमत्तस्य बहुभिः परोक्षैर्हायनैरिह ।
वरं मुहूर्त्तं विदितं घटेत श्रेयसे यतः ।।१२।।

पदच्छेद—

किम् प्रमत्तस्य बहुभिः, परोक्षैः हायनैः इह ।
वरम् मुहूर्त्तम् विदितम्, घटेत श्रेयसे यतः ।।

शब्दार्थ—

किम्	६. क्या (लाभ ? इसके विपरीत)	वरम्	९. उत्तम (है)
प्रमत्तस्य	२. असावधान (प्राणियों) को	मुहूर्त्तम्	८. एक क्षण (भी)
बहुभिः	४. अनेकों	विदितम्	७. ज्ञान-पूर्वक बिताया हुआ
परोक्षैः	३. अज्ञान में बीतने वाले	घटेत	१२. प्रयास किया जाता है
हायनैः	५. वर्षों से	श्रेयसे	११. परम कल्याण के लिए
इह ।	१. इस संसार में	यतः ।।	१०. जिसमें

श्लोकार्थ—इस संसार में असावधान प्राणियों को अज्ञान में बीतने वाले अनेकों वर्षों से क्या लाभ ? इसके विपरीत, ज्ञान-पूर्वक बिताया हुआ एक क्षण भी उत्तम है, जिसमें परम कल्याण के लिए प्रयास किया जाता है ।

त्रयोदशः श्लोकः

खट्वाङ्गो नाम राजर्षिर्ज्ञात्वेयत्तामिहायुषः ।
मुहूर्त्तात्सर्वमुत्सृज्य गतवानभयं हरिम् ।।१३।।

पदच्छेद—

खट्वाङ्गः नाम राजर्षिः, ज्ञात्वा इयत्ताम् इह आयुषः ।
मुहूर्त्तात् सर्वम् उत्सृज्य, गतवान अभयम् हरिम् ।।

शब्दार्थ—

खट्वाङ्गः	१. खट्वाङ्ग	मुहूर्तात्	७. दो घड़ी में (ही)
नाम, राजर्षिः	२. नाम के, राजा ने	सर्वम्	८. सबका
ज्ञात्वा	६. जानने के पश्चात्	उत्सृज्य	९. त्याग कर
इयत्ताम्	५. अवधि को	गतवान्	१२. प्राप्त कर लिया था
इह	३. संसार में	अभयम्	११. धाम को
आयुषः ।	४. (अपनी) आयु की	हरिम् ।।	१०. श्रीहरि के

श्लोकार्थ—खट्वाङ्ग नाम के राजा ने संसार में अपनी आयु की अवधि को जानने के पश्चात् दो घड़ी में ही सबका त्याग कर श्रीहरि के धाम को प्राप्त कर लिया था ।

चतुर्दशः श्लोकः

तवाप्येतर्हि कौरव्य सप्ताहं जीवितावधिः ।
उपकल्पय तत्सर्वं तावद्यत्सांपरायिकम् ।।१४।।

पदच्छेद—

तव अपि एतर्हि कौरव्य, सप्ताहम् जीवित अवधिः ।
उपकल्पय तत् सर्वम्, तावत् यत् सांपरायिकम् ।।

शब्दार्थ—

तव अपि	२.	तुम्हारे तो	उपकल्पय	१०.	कर लो
एतर्हि	५.	अभी	तत्	८.	वह
कौरव्य	१.	हे कुरु नन्दन परीक्षित्	सर्वम्	९.	सब
सप्ताहम्	६.	सात दिनों की (है)	तावत्	७	इस बीच (तुम)
जीवित	३.	जीवन की	यत्	११.	जो
अवधिः ।	४.	अवधि	सांपरायिकम् ।।	१२.	परम कल्याण को देने वाला (है)

श्लोकार्थ—हे कुरु नन्दन परीक्षित् ! तुम्हारे तो जीवन की अवधि अभी सात दिनों की है । इस बीच तुम वह सब कर लो, जो परम कल्याण को देने वाला है ।

पञ्चदशः श्लोकः

अन्तकाले तु पुरुष आगते गतसाध्वसः ।
छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृहां देहेऽनु ये च तम् ।।१५।।

पदच्छेद—

अन्तकाले तु पुरुषः, आगते गत साध्वसः ।
छिन्द्यात् असङ्ग शस्त्रेण, स्पृहाम् देहे अनु ये च तम् ।।

शब्दार्थ—

अन्तकाले	२.	अन्त काल	शस्त्रेण	७.	शस्त्र से
तु	१.	तथा	स्पृहाम्	१३.	ममता-बन्धन को
पुरुषः	४.	मनुष्य को	देहे	८.	शरीर के
आगते	३.	आने पर	अनु	११.	सम्बन्धी (हैं)
गत साध्वसः ।	५.	निडर होकर	ये	१०.	जो
छिन्द्यात्	१४.	काट देना चाहिए	च	९.	और
असङ्ग	६.	वैराग्य रूप	तम् ।।	१२.	उनके (भी)

श्लोकार्थ—तथा अन्त काल आने पर मनुष्य को निडर होकर वैराग्य रूप शस्त्र से शरीर के और जो सम्बन्धी हैं, उनके भी ममता-बन्धन को काट देना चाहिए ।

षोडशः श्लोकः

गृहात् प्रव्रजितो धीरः पुण्यतीर्थजलाप्लुतः ।
शुचौ विविक्त आसीनो विधिवत्कल्पितासने ।।१६।।

पदच्छेद—

गृहात् प्रव्रजितः धीरः, पुण्य तीर्थ जल आप्लुतः ।
शुचौ विविक्ते आसीनः, विधिवत् कल्पित आसने ।।

शब्दार्थ—

गृहात्	२.	(उस समय) घर से	शुचौ	७.	शुद्ध
प्रव्रजितः	३.	संन्यास लेकर (तथा)	विविक्ते	८.	एकान्त स्थान में
धीरः	१.	स्थिर-चित्त (मनुष्य)	आसीनः	१२.	बैठे
पुण्य, तीर्थ	४.	पवित्र, तीर्थ के	विधिवत्	९.	विधान पूर्वक
जल	५.	जल में	कल्पित	१०.	लगाये हुए
आप्लुतः ।	६.	स्नान करके	आसने ।।	११.	आसन पर

श्लोकार्थ—स्थिर-चित्त मनुष्य उस समय घर से संन्यास लेकर तथा पवित्र तीर्थ के जल में स्नान करके शुद्ध एकान्त स्थान में विधान-पूर्वक लगाये हुए आसन पर बैठे ।

सप्तदशः श्लोकः

अभ्यसेन्मनसा शुद्धं त्रिवृद्ब्रह्माक्षरं परम् ।
मनो यच्छेज्जितश्वासो ब्रह्मबीजमविस्मरन् ।।१७।।

पदच्छेद—

अभ्यसेत् मनसा शुद्धम्, त्रिवृत् ब्रह्म अक्षरम् परम् ।
मनः यच्छेत् जित श्वासः, ब्रह्म बीजम् अविस्मरन् ।।

शब्दार्थ—

अभ्यसेत्	७.	जप करे	परम् ।	३.	सर्वोत्तम
मनसा	६	मन से	मनः	९.	मन को
शुद्धम्	२.	पवित्र (एवम्)	यच्छेत्	१०.	वश में करे (तथा)
त्रिवृत्	१.	अ उ म तीन मात्राओं वाले	जित श्वासः	८.	प्राणवायु को जीतकर
ब्रह्म	४.	ॐ कार	ब्रह्म बीजम्	११.	प्रणव मन्त्र को
अक्षरम्	५.	मन्त्र का	अविस्मरन् ।।	१२.	न भूले

श्लोकार्थ—'अ उ म' तीन मात्राओं वाले पवित्र एवं सर्वोत्तम ॐ कार मन्त्र का मन से जप करे, प्राणवायु को जीतकर मन को वश में करे तथा प्रणव-मन्त्र को न भूले ।

अष्टादशः श्लोकः

नियच्छेद्विषयेभ्योऽक्षान्मनसा बुद्धिसारथिः ।
मनः कर्मभिराक्षिप्तं शुभार्थे धारयेद्धिया ।।१८।।

पदच्छेद—

नियच्छेत् विषयेभ्यः अक्षान्, मनसा बुद्धि सारथिः ।
मनः कर्मभिः आक्षिप्तम्, शुभ अर्थे धारयेत् धिया ।।

शब्दार्थ—

नियच्छेत्	६.	अलग करे (तथा)	मनः	९.	मन को
विषयेभ्यः	५.	विषयों से	कर्मभिः	७.	कर्मों से
अक्षान्	४.	इन्द्रियों को	आक्षिप्तम्	८.	घबड़ाये हुए
मनसा	३.	मन के द्वारा	शुभ अर्थे	११.	मंगलमय श्रीहरि के ध्यान में
बुद्धि	१.	बुद्धि को	धारयेत्	१२.	लगावे
सारथिः ।	२.	सारथि बनाकर (मनुष्य)	धिया ।।	१०.	बुद्धि के सहारे

श्लोकार्थ --बुद्धि को सारथि बनाकर मनुष्य मन के द्वारा इन्द्रियों को विषयों से अलग करे तथा कर्मों से घबड़ाये हुए मन को बुद्धि के सहारे मंगलमय श्रीहरि के ध्यान में लगावे ।

एकोनविंशः श्लोकः

तत्रैकावयवं ध्यायेदव्युच्छिन्नेन चेतसा ।
मनो निर्विषयं युक्त्वा ततः किञ्चन न स्मरेत् ।
पदं तत्परमं विष्णोर्मनो यत्र प्रसीदति ।।१९।।

पदच्छेद—

तत्र एक अवयवम् ध्यायेत्, अव्युच्छिन्नेन चेतसा ।
मनः निर्विषयम् युक्त्वा, ततः किञ्चन न स्मरेत् ।
पदम् तत् परमम् विष्णोः, मनः यत्र प्रसीदति ।।

शब्दार्थ—

तत्र	१.	भगवान् के श्रीविग्रह में से	ततः	९.	तदनन्तर
एक, अवयवम्	२.	किसी एक, अंग का	किञ्चन	१०.	कुछ भी
ध्यायेत्	५	ध्यान करे	न स्मरेत् ।	११.	स्मरण न करे
अव्युच्छिन्नेन	३.	स्थिर	पदम्	१६.	धाम है
चेतसा ।	४.	चित्त से	तत, परमम्	१५.	वही, परम
मनः	८.	मन को (ईश्वर में)	विष्णोः	१४.	भगवान् विष्णु का
निर्विषयम्	७.	विषयों से रहित	मनः, यत्र	१२.	मन, जहाँ
युक्त्वा	९.	लगाकर	प्रसीदति ।।	१३.	आनन्द मग्न हो जाता है

श्लोकार्थ--भगवान् के श्रीविग्रह में से किसी एक अंग का स्थिर चित्त से ध्यान करे । तदनन्तर विषयों से रहित मन को ईश्वर में लगाकर कुछ भी स्मरण न करे । जहाँ मन आनन्द-मग्न हो जाता है, भगवान् विष्णु का वही परम धाम है ।

विंशः श्लोकः

रजस्तमोभ्यामाक्षिप्तं विमूढं मन आत्मनः ।
यच्छेद्धारणया धीरो हन्ति या तत्कृतं मलम् ॥२०॥

पदच्छेद—

रजः तमोभ्याम् आक्षिप्तम्, विमूढम् मनः आत्मनः ।
यच्छेत् धारणया धीरः, हन्ति या तत् कृतम् मलम् ॥

शब्दार्थ—

रजः तमोभ्याम्	२.	रजोगुण और तमोगुण से	धारणया	६.	धारणा शक्ति से
आक्षिप्तम्	३.	चंचल (तथा)	धीरः	१.	धैर्यशाली (मनुष्य)
विमूढम्	४.	अज्ञानी	हन्ति	१२.	नष्ट कर देती है
मनः	५.	मन को	या	९.	जो (धारणा शक्ति)
आत्मनः ।	७.	अपने	तत्कृतम्	१०.	रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न
यच्छेत्	८.	वश में करे	मलम् ॥	११.	दोषों को

श्लोकार्थ—धैर्यशाली मनुष्य रजोगुण और तमोगुण से चंचल तथा अज्ञानी मन को धारणा शक्ति से अपने वश में करे, जो धारणा शक्ति रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न दोषों को नष्ट कर देती है।

एकविंशः श्लोकः

यस्यां संधार्यमाणायां योगिनो भक्तिलक्षणः ।
आशु संपद्यते योग आश्रयं भद्रमीक्षतः ॥२१॥

पदच्छेद—

यस्याम् संधार्यमाणायाम्, योगिनः भक्ति लक्षणः ।
आशु संपद्यते योगः, आश्रयम् भद्रम् ईक्षतः ॥

शब्दार्थ—

यस्याम्	१.	जिस (धारणा शक्ति) के	संपद्यते	१०.	प्राप्त कर लेते हैं
संधार्यमाणायाम्	२.	उत्पन्न हो जाने पर	योगः	९.	भक्तियोग को
योगिनः	३.	योगिजन	आश्रयम्	५.	भगवान् का
भक्ति लक्षणः ।	८.	भक्ति स्वरूप वाले	भद्रम्	४.	मंगलमय
आशु	७.	तत्काल	ईक्षतः ॥	६.	ध्यान करते हुए

श्लोकार्थ—जिस धारणा शक्ति के उत्पन्न हो जाने पर योगिजन मंगलमय भगवान् का ध्यान करते हुए तत्काल भक्ति स्वरूप वाले भक्तियोग को प्राप्त कर लेते हैं।

द्वाविंश: श्लोक:

राजोवाच—

यथा सधार्यते ब्रह्मन् धारणा यत्र सम्मता ।
यादृशी वा हरेदाशु पुरुषस्य मनोमलम् ॥२२॥

पदच्छेद—

यथा संधार्यते ब्रह्मन्, धारणा यत्र सम्मता ।
यादृशी वा हरेत् आशु, पुरुषस्य मनोमलम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	५.	किस साधन से	यादृशी	८.	किस प्रकार
संधार्यते	६.	की जाती है	वा	७.	तथा
ब्रह्मन्	१.	हे शुकदेव जी !	हरेत्	१२.	दूर करती है
धारणा	२.	धारणा शक्ति	आशु	११.	शीघ्र
यत्र	३.	किसमें	पुरुषस्य	९.	पुरुष के
सम्मता ।	४.	मानी गयी है (और)	मनोमलम् ॥	१०.	मन के दोषों को

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! धारणा शक्ति किसमें मानी गयी है और किस साधन से की जाती है तथा किस प्रकार पुरुष के मन के दोषों को शीघ्र दूर करती है ?

त्रयोविंश: श्लोक:

श्रीशुक उवाच—

जितासनो जितश्वासो जितसङ्गो जितेन्द्रियः ।
स्थूले भगवतो रूपे मनः संधारयेद् धिया ॥२३॥

पदच्छेद—

जित आसनः जित श्वासः, जित सङ्गः जित इन्द्रियः ।
स्थूले भगवतः रूपे, मनः संधारयेत् धिया ॥

शब्दार्थ—

जित	२.	जीतकर	स्थूले	११.	विराट्
आसनः	१.	आसन को	भगवतः	१०.	भगवान् के
जित	४.	रोककर	रूपे	१२.	रूप में
श्वासः	३.	प्राणवायु को	मनः	९.	मन को
जित	६.	त्याग कर (तथा)	संधारयेत्	१३.	लगावे
सङ्गः	५.	आसक्ति को	धिया ॥	८.	बुद्धि के द्वारा
जित इन्द्रियः ।	७.	इन्द्रियों पर विजय करके (मनुष्य)			

श्लोकार्थ – हे राजन् ! आसन को जीतकर, प्राणवायु को रोककर, आसक्ति को त्याग कर तथा इन्द्रियों पर विजय करके मनुष्य बुद्धि के द्वारा मन को भगवान् के विराट् रूप में लगावे ।

चतुर्विंशः श्लोकः

विशेषस्तस्य देहोऽयं स्थविष्ठश्च स्थवीयसाम् ।
यत्रेदं दृश्यते विश्वं भूतं भव्यं भवच्च सत् ॥२४॥

पदच्छेद—

विशेषः तस्य देहः अयम्, स्थविष्ठः च स्थवीयसाम् ।
यत्र इदम् दृश्यते विश्वम्, भूतम् भव्यम् भवत् च सत् ॥

शब्दार्थ—

विशेषः	३.	विराट्	इदम्	१३.	यह
तस्य	१.	उस (भगवान्) का	दृश्यते	१६.	दिखलाई देता है
देहः	४.	शरीर	विश्वम्	१४.	संसार
अयम्	२.	यह	भूतम्	९.	बीता हुआ
स्थविष्ठः	७	स्थूल (है)	भव्यम्	१०.	आने वाला
च	६.	भी	भवत्	१२.	वर्तमान
स्थवीयसाम् ।	५.	स्थूलों में	च	११	और
यत्र	८.	जिसमें	सत् ॥	१५.	सत्यरूप में

श्लोकार्थ—उस भगवान् का यह विराट् शरीर स्थूलों में भी स्थूल है; जिसमें बीता हुआ, आने वाला और वर्तमान यह संसार सत्यरूप में दिखलाई देता है।

पञ्चविंशः श्लोकः

आण्डकोशे शरीरेऽस्मिन् सप्तावरणसंयुते ।
वैराजः पुरुषो योऽसौ भगवान् धारणाश्रयः ॥२५॥

पदच्छेद—

आण्डकोशे शरीरे अस्मिन्, सप्त आवरण संयुते ।
वैराजः पुरुषः यः असौ, भगवान् धारणा आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

आण्डकोशे	४.	ब्रह्माण्ड	वैराजः	७.	विराट्
शरीरे	५.	शरीर में	पुरुषः	८.	पुरुष
अस्मिन्	३.	इस	यः	६.	जो
सप्त आवरण	१.	सात आवरणों से	असौ	१०.	उन्हीं की
संयुते ।	२.	घिरे हुए	भगवान्	९.	भगवान् श्रीहरि (हैं)
			धारणा आश्रयः ॥	११.	धारणा की जाती है

श्लोकार्थ—सात आवरणों से घिरे हुए इस ब्रह्माण्ड शरीर में जो विराट् पुरुष भगवान् श्री हरि हैं, उन्हीं की धारणा की जाती है।

षड्विंशः श्लोकः

पातालमेतस्य हि पादमूलं, पठन्ति पार्ष्णिप्रपदे रसातलम् ।
महातलं विश्वसृजोऽथ गुल्फौ, तलातलं वै पुरुषस्य जङ्घे ॥२६॥

पदच्छेद—

पातालम् एतस्य हि पाद मूलम्, पठन्ति पार्ष्णि प्रपदे रसातलम् ।
महातलम् विश्वसृजः अथ गुल्फौ, तलातलम् वै पुरुषस्य जङ्घे ॥

शब्दार्थ—

पातालम्	६.	पाताल लोक	महातलम्	११.	महातल लोक
एतस्य	२.	इस	विश्वसृजः	१.	विश्व के रचयिता
हि	५.	ही	अथ	१२.	तथा
पाद, मूलम्	४.	पैर का, तलवा	गुल्फौ,	१०.	एड़ी के ऊपर की गाँठे
पठन्ति	१६.	बताई गयी हैं	तलातलम्	१५.	तलातल लोक
पार्ष्णि	७.	एड़ी और	वै	१४.	ही
प्रपदे	८.	पंजे	पुरुषस्य	३.	विराट् पुरुष के
रसातलम् ।	९.	रसातल लोक	जङ्घे ॥	१३.	पिंडलियाँ

श्लोकार्थ—विश्व के रचयिता इस विराट् पुरुष के पैर का तलवा ही पाताल लोक, एड़ी और पंजे रसातल लोक, एड़ी के ऊपर की गाँठे महातल लोक तथा पिंडलियाँ ही तलातल लोक बताई गयी हैं।

सप्तविंशः श्लोकः

द्वे जानुनी सुतलं विश्वमूर्त्ते-रूरुद्वयं वितलं चातलं च ।
महीतलं तज्जघनं महीपते, नभस्तलं नाभिसरो गृणन्ति ॥२७॥

पदच्छेद—

द्वे जानुनी सुतलम् विश्वमूर्त्तेः, ऊरुद्वयम् वितलम् च अतलम् च ।
महीतलम् तद् जघनम् महीपते, नभस्तलम् नाभि सरः गृणन्ति ॥

शब्दार्थ—

द्वे, जानुनी	३.	दोनों, घुटने	महीतलम्	१२.	भू लोक (और)
सुतलम्	४.	सुतल लोक	तद्	१०.	उसका
विश्वमूर्त्तेः,	२.	विराट् पुरुष के	जघनम्	११.	नितम्ब
ऊरु द्वयम्	५.	दोनों जाँघे	महीपते,	१.	हे राजन् !
वितलम्	६.	वितल	नभस्तलम्	१५.	आकाश मण्डल
च	७.	और	नाभि	१३.	नाभि रूप
अतलम्	८.	अतल लोक	सरः	१४.	सरोवर को
च ।	९.	तथा	गृणन्ति ॥	१६.	कहते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! विराट् पुरुष के दोनों घुटने सुतल लोक, दोनों जाँघे वितल और अतल लोक तथा उसका नितम्ब भूलोक और नाभिरूप सरोवर को आकाश मण्डल कहते हैं ।

अष्टाविंशः श्लोकः

उरःस्थलं ज्योतिरनीकमस्य, ग्रीवा महर्वदनं वै जनोऽस्य ।
तपो रराटीं विदुरादिपुंसः, सत्यं तु शीर्षाणि सहस्रशीर्ष्णः ॥२८॥

पदच्छेद— उरःस्थलम् ज्योतिः अनीकम् अस्य, ग्रीवा महः वदनम् वै जनः अस्य ।
तपः रराटीम् विदुः आदि पुंसः, सत्यम् तु शीर्षाणि सहस्र शीर्ष्णः ॥

शब्दार्थ—

उरः स्थलम्	२.	वक्षस्थल	तपः	१४.	तपोलोक
ज्योतिः अनीकम्	३.	स्वर्गलोक (एवं)	रराटीम्	१३.	ललाट को
अस्य,	१.	इस (भगवान्) का	विदुः	१८.	कहते हैं
ग्रीवा	४.	गर्दन	आदि पुंसः,	१०.	आदि पुरुष के
महः	५.	महर्लोक (है)	सत्यम्	१७.	सत्यलोक
वदनम्	११.	मुखमण्डल को	तु	१५.	और
वै	६.	इसी प्रकार	शीर्षाणि	१६.	मस्तक को
जनः	१२.	जनलोक	सहस्र	७.	हजार
अस्य ।	९.	इस	शीर्ष्णः ॥	८.	सिरों वाले

श्लोकार्थ— इस भगवान् का वक्षस्थल स्वर्गलोक एवं गर्दन महर्लोक है । इसी प्रकार हजार सिरों वाले इस आदि पुरुष के मुखमण्डल को जनलोक, ललाट को तपोलोक और मस्तक को सत्यलोक कहते हैं ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

इन्द्रादयो बाहव आहुरुस्राः, कर्णौ दिशः श्रोत्रममुष्य शब्दः ।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे, घ्राणोऽस्य गन्धो मुखमग्निरिद्धः ॥२९॥

पदच्छेद – इन्द्र आदयः बाहवः आहुः उस्राः, कर्णौ दिशः श्रोत्रम् अमुष्य शब्दः ।
नासत्यदस्रौ परमस्य नासे, घ्राणः अस्य गन्धः मुखम् अग्निः इद्धः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्र आदयः	३.	इन्द्र इत्यादि	नासत्यदस्रौ	११.	अश्विनीकुमार
बाहवः	२.	भुजायें	परमस्य, नासे,	१०.	परम पुरुष के, नासिकाछिद्र
आहुः	८.	कहे गये हैं (इसी प्रकार)	घ्राणः	१२.	घ्राणेन्द्रिय
उस्राः,	४.	देवता	अस्य	९.	इस
कर्णौ, दिशः	५.	कान, दिशायें (और)	गन्धः	१३.	गन्ध (और)
श्रोत्रम्	६.	श्रवणेन्द्रिय	मुखम्	१४.	मुख
अमुष्य	१.	इस (विराट् पुरुष) की	अग्निः	१६.	आग (है)
शब्दः ।	७.	शब्द	इद्धः ॥	१५.	धधकती हुई

श्लोकार्थ—इस विराट् पुरुष की भुजायें इन्द्र इत्यादि देवता, कान दिशायें और श्रवणेन्द्रिय शब्द कहे गये हैं । इसी प्रकार इस परम पुरुष के नासिका छिद्र अश्विनीकुमार, घ्राणेन्द्रिय गन्ध और मुख धधकती हुई आग है ।

त्रिंशः श्लोकः

द्यौरक्षिणी चक्षुरभूत्पतङ्गः, पक्ष्माणि विष्णोरहनी उभे च ।
तद्भ्रूविजृम्भः परमेष्ठिधिष्ण्य-मापोऽस्य तालू रस एव जिह्वा ।।३०।।

पदच्छेद— द्यौः अक्षिणी चक्षुः अभूत् पतङ्गः, पक्ष्माणि विष्णोः अहनी उभे च ।
तद् भ्रू विजृम्भः परमेष्ठि धिष्ण्यम्, आपः अस्य तालुः रसः एव जिह्वा ।।

शब्दार्थ—

द्यौः	१. आकाश		
अक्षिणी	३. दोनों आँखें	तद् भ्रू, विजृम्भः	११. उनके भौहों का, विलास
चक्षुः	५. आँखों की पुतली	परमेष्ठि, धिष्ण्यम्,	१०. ब्रह्मा का, धाम
अभूत्	९. हैं	आपः	१२. जल
पतङ्गः,	४. सूर्य	अस्य	१३. इस का
पक्ष्माणि	८. पलकें	तालुः	१४. तालु भाग
विष्णोः	२. विराट् पुरुष की	रसः	१६. रस
अहनी उभे	७. दिन और रात, दोनों	एव	१५. और
च ।	६. तथा	जिह्वा ।।	१७ रसना इन्द्रिय (है)

श्लोकार्थ—आकाश विराट् पुरुष की दोनों आँखें, सूर्य आँखों की पुतली तथा दिन और रात दोनों पलकें हैं । ब्रह्मा का धाम उनके भौहों का विलास, जल इसका तालुभाग और रस रसना-इन्द्रिय है ।

एकत्रिंशः श्लोकः

छन्दांस्यनन्तस्य शिरो गृणन्ति, दंष्ट्रा यमः स्नेहकला द्विजानि ।
हासो जनोन्मादकरी च माया, दुरन्तसर्गो यदपाङ्गमोक्षः ।।३१।।

पदच्छेद— छन्दांसि अनन्तस्य शिरः गृणन्ति, दंष्ट्रा यमः स्नेह कला द्विजानि ।
हासः जन उन्मादकरी च माया, दुरन्त सर्गः यद् अपाङ्ग मोक्षः ।।

शब्दार्थ—

छन्दांसि	१. वेद को	हासः	११. मुस्कान (है)
अनन्तस्य	२. विराट् पुरुष का	जन उन्मादकरी	९. लोगों को पागल बनाने वाली
शिरः	३. मस्तक	च	१२. तथा
गृणन्ति,	८. कहा गया है	माया,	१०. मायाशक्ति
दंष्ट्रा	५. डाढ़ (तथा)	दुरन्त	१३. अनन्त
यमः	४. यमराज को	सर्गः	१४. सृष्टि
स्नेह कला	६. प्रेम और कलाओं को	यद्	१५. जिनकी
द्विजानि ।	७. दाँत	अपाङ्ग मोक्षः ।।	१६. तिरछी नजर (है)

श्लोकार्थ वेद को विराट् पुरुष का मस्तक, यमराज को डाढ़ तथा प्रेम और कलाओं को दाँत कहा गया है । लोगों को पागल बनाने वाली मायाशक्ति मुस्कान है तथा अनन्त सृष्टि जिनकी तिरछी नजर है ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

व्रीडोत्तरोष्ठोऽधर एव लोभो, धर्मःस्तनोऽधर्मपथोऽस्य पृष्ठम् ।
कस्तस्य मेढ्रं वृषणौ च मित्रौ, कुक्षिः समुद्रा गिरयोऽस्थिसंघाः ॥३२॥

पदच्छेद—

व्रीडा उत्तरोष्ठः अधरः एव लोभः, धर्मः स्तनः अधर्मपथः अस्य पृष्ठम् ।
कः तस्य मेढ्रम् वृषणौ च मित्रौ, कुक्षिः समुद्राः गिरयः अस्थि संघाः ॥

शब्दार्थ—

व्रीडा	१.	लज्जा	कः	१०.	ब्रह्मा
उत्तरोष्ठः	४.	ऊपर का होठ	तस्य, मेढ्रम्	११.	उस (पुरुष) की, जननेन्द्रिय
अधरः	६.	नीचे का होठ	वृषणौ	१३.	अण्डकोश
एव	२.	ही	च	१६.	तथा
लोभः,	५.	लोभ	मित्रौ,	१२.	मित्र और वरुण देवता
धर्मः स्तनः	७.	धर्म स्तन (और)	कुक्षिः	१५.	कोख
अधर्म पथः	८.	अन्याय मार्ग	समुद्राः	१४.	समुद्र
अस्य	३.	इस (पुरुष) के	गिरयः	१७.	पर्वत
पृष्ठम् ।	९.	पीठ (है)	अस्थि, संघाः ।	१८.	हड्डियों का, समूह (है)

श्लोकार्थः—लज्जा ही इस पुरुष के ऊपर का होठ, लोभ नीचे का होठ, धर्म स्तन और अन्याय-मार्ग पीठ है। ब्रह्मा उस पुरुष की जननेन्द्रिय, मित्र और वरुण देवता अण्डकोश, समुद्र कोख तथा पर्वत हड्डियों का समूह है।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

नद्योऽस्य नाड्योऽथ तनूरुहाणि, महीरुहा विश्वतनोर्नृपेन्द्र ।
अनन्तवीर्यः श्वसितं मातरिश्वा, गतिर्वयः कर्म गुणप्रवाहः ॥३३॥

पदच्छेद—

नद्यः अस्य नाड्यः अथ तनूरुहाणि, महीरुहाः विश्वतनोः नृपेन्द्र ।
अनन्त वीर्यः श्वसितम् मातरिश्वा, गतिः वयः कर्म गुण प्रवाहः ॥

शब्दार्थ—

नद्यः, अस्य	२.	नदियाँ, इस	अनन्त वीर्यः	८.	अपार शक्तिशाली
नाड्यः	४.	नाड़ियाँ	श्वसितम्	१०.	(उसका) स्वास
अथ	५.	तथा	मातरिश्वा,	९	वायु
तनूरुहाणि,	७.	रोमावलियाँ (हैं)	गतिः, वयः	११.	चाल, आयु (और)
महीरुहाः	६.	वृक्ष	कर्म	१४.	कर्म है
विश्वतनोः	३.	विराट् पुरुष की	गुण	१२.	सत्त्व, रज एवं तम की
नृपेन्द्र ।	१.	हे राजेन्द्र !	प्रवाहः ॥	१३.	अविरल धारा

श्लोकार्थः—हे राजेन्द्र ! नदियाँ इस विराट् पुरुष की नाड़ियाँ तथा वृक्ष रोमावलियाँ हैं। अपार शक्तिशाली वायु उसका श्वास; चाल आयु और सत्त्व, रज एवं तम की अविरल धारा कर्म है।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ईशस्य केशान् विदुरम्बुवाहान्, वासस्तु संध्यां कुरुवर्य भूम्नः ।
अव्यक्तमाहुर्हृदयं मनश्च, स चन्द्रमाः सर्वविकारकोशः ॥३४॥

पदच्छेद—

ईशस्य केशान् विदुः अम्बुवाहान्, वासः तु संध्याम् कुरुवर्य भूम्नः ।
अव्यक्तम् आहुः हृदयम् मनः च, सः चन्द्रमाः सर्व विकार कोशः ॥

शब्दार्थ—

ईशस्य, केशान्	४.	पुरुष का, केश	अव्यक्तम्	८.	प्रकृति को
विदुः	७.	समझा जाता है	आहुः	१०.	कहते हैं
अम्बुवाहान्,	२.	बादलों को	हृदयम्	९.	अन्तःकरण
वासः	६.	वस्त्र	मनः	१४.	मन है
तु, संध्याम्	५.	तथा, संध्या को	च,	११.	और
कुरुवर्य	१.	हे राजन् !	सः चन्द्रमाः	१३.	वह चन्द्रमा (उसका)
भूम्नः ।	३.	विराट्	सर्व विकार कोशः ॥	१२.	सभी विकारों का भण्डार

श्लोकार्थ—हे राजन् ! बादलों को विराट् पुरुष का केश तथा संध्या को वस्त्र समझा जाता है। प्रकृति को अन्तःकरण कहते हैं और सभी विकारों का भण्डार वह चन्द्रमा उसका मन है।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

विज्ञानशक्तिं महिमामनन्ति, सर्वात्मनोऽन्तःकरणं गिरित्रम् ।
अश्वाश्वतर्युष्ट्रगजा नखानि, सर्वे मृगाः पशवः श्रोणिदेशे ॥३५॥

पदच्छेद—

विज्ञान शक्तिम् महिमा आमनन्ति, सर्व आत्मनः अन्तःकरणम् गिरित्रम् ।
अश्व अश्वतरी उष्ट्र गजाः नखानि, सर्वे मृगाः पशवः श्रोणि देशे ॥

शब्दार्थ—

विज्ञान शक्तिम्	१.	महत्तत्त्व को	अवश्तरी	८.	खच्चर
महिमा	५.	अहंकार	उष्ट्र गजाः	९.	ऊँट और हाथी
आमनन्ति,	६.	मानते हैं	नखानि,	१०.	(उनके) नख हैं (तथा)
सर्व आत्मनः	२.	विराट् पुरुष का	सर्वे	११.	सभी
अन्तःकरणम्	३.	चित्त और	मृगाः	१२.	जंगली
गिरित्रम् ।	४.	रुद्र को	पशवः	१३.	पशु
अश्व	७.	घोड़े	श्रोणिदेशे ॥	१४.	(उनके) कटिभाग में (हैं)

श्लोकार्थ—महत्तत्त्व को विराट् पुरुष का चित्त और रुद्र को अहंकार मानते हैं। घोड़े, खच्चर, ऊँट और हाथी उनके नख हैं तथा सभी जंगली पशु उनके कटिभाग में स्थित हैं।

षट्त्रिंशः श्लोकः

वयांसि तद्व्याकरणं विचित्रं, मनुर्मनीषा मनुजो निवासः ।
गन्धर्वविद्याधरचारणाप्सरः–स्वरस्मृतीरसुरानीकवीर्यः ॥३६॥

पदच्छेद—

वयांसि तद् व्याकरणम् विचित्रम्, मनुः मनीषा मनुजः निवासः ।
गन्धर्व विद्याधर चारण अप्सरः, स्वर स्मृतीः असुर अनीक वीर्यः ॥

शब्दार्थ—

वयांसि	१.	पक्षी गण	गन्धर्व, विद्याधर	९.	गन्धर्व, विद्याधर
तद्	२.	उस (विराट् पुरुष) की	चारण	१०.	चारण और
व्याकरणम्	४.	रचना (हैं)	अप्सरः,	११.	अप्सरायें
विचित्रम्,	३.	अद्भुत	स्वर	१२.	षड्जादि सातों स्वरों की
मनुः	५.	वैवस्वत मनु	स्मृतीः	१३.	लय और तानें (हैं तथा)
मनीषा	६.	बुद्धि (और)	असुर	१४.	दैत्यों का
मनुजः	७.	मनुष्य	अनीक	१५.	समूह
निवासः ।	८.	निवास स्थान (हैं)	वीर्यः ॥	१६.	पराक्रम (है)

श्लोकार्थः—पक्षीगण उस विराट् पुरुष की अद्भुत रचना है, वैवस्वत मनु बुद्धि और मनुष्य निवास स्थान हैं। गन्धर्व, विद्याधर, चारण और अप्सरायें षड्ज इत्यादि सातों स्वरों की लय और तानें हैं तथा दैत्यों का समूह पराक्रम है।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

ब्रह्माननं क्षत्रभुजो महात्मा, विड्रुरङ्घ्रिश्रितकृष्णवर्णः ।
नानाभिधाभीज्यगणोपपन्नो, द्रव्यात्मकः कर्म वितानयोगः ॥३७॥

पदच्छेद—

ब्रह्म आननम् क्षत्रभुजः महात्मा, विड् ऊरुः अङ्घ्रि श्रित कृष्णवर्णः ।
नाना अभिधा अभीज्य गण उपपन्नः, द्रव्य आत्मकः कर्म वितान योगः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्म	१.	ब्राह्मण	नाना अभिधा	१०.	अनेक नामों वाले
आननम्	३.	मुख (हैं)	अभीज्य	११.	यज्ञों के
क्षत्र भुजः	४.	क्षत्रिय बाहु (हैं)	गण	१२.	समूह का
महात्मा,	२.	विराट् पुरुष के	उपपन्नः,	९.	सम्पन्न होने वाले
विड् ऊरुः	५.	वैश्य जंघा (तथा)	द्रव्य आत्मकः	८.	होमादि द्रव्यों के द्वारा
अङ्घ्रि श्रित	७.	चरणों में स्थित (हैं)	कर्म	१४.	कर्म (हैं)
कृष्णवर्णः ।	६.	शूद्र	वितानयोगः ॥	१३.	विस्तार (उनके)

श्लोकार्थः—ब्राह्मण विराट् पुरुष के मुख हैं, क्षत्रिय बाहु हैं, वैश्य जंघा तथा शूद्र चरणों में स्थित हैं। होमादि द्रव्यों के द्वारा सम्पन्न होने वाले तथा अनेक नामों वाले यज्ञों के समूह का विस्तार उनके कर्म हैं।

अष्टात्रिंश: श्लोक:

इयानसावीश्वरविग्रहस्य, यः संनिवेशः कथितो मया ते ।
संधार्यतेऽस्मिन् वपुषि स्थविष्ठे, मनः स्वबुद्धया न यतोऽस्ति किंचित् ॥३८॥

पदच्छेद— इयान् असौ ईश्वर विग्रहस्य, यः संनिवेशः कथितः मया ते ।
संधार्यते अस्मिन् वपुषि स्थविष्ठे, मनः स्व बुद्धया न यतः अस्ति किंचित् ॥

शब्दार्थ—

इयान्	७.	इतना बड़ा (है)	अस्मिन्	८.	इसी
असौ	६.	वह	वपुषि	१०.	शरीर में
ईश्वर विग्रहस्य,	१.	विराट् पुरुष के शरीर का	स्थविष्ठे,	९.	विराट्
यः संनिवेशः	२.	जो आकार	मनः स्व बुद्धया	११.	मन को अपनी बुद्धि से
कथितः	५.	बताया है	न	१५.	नहीं
मया	३.	मैंने	यतः	१३.	क्योंकि (इससे भिन्न)
ते ।	४.	आपको	अस्ति	१६.	है
संधार्यते	१२.	धारण करते हैं	किंचित् ॥	१४.	कोई (धारणा का आश्रय)

श्लोकार्थ:—विराट् पुरुष के शरीर का जो आकार मैंने आपको बताया है, वह इतना बड़ा है। इसी विराट् शरीर में अपनी बुद्धि से मन को धारण करते हैं; क्योंकि इससे भिन्न कोई धारणा का आश्रय नहीं है।

एकोनचत्वारिंश: श्लोक:

स सर्वधीवृत्त्यनुभूतसर्व, आत्मा यथा स्वप्नजनेक्षितैकः ।
तं सत्यमानन्दनिधिं भजेत, नान्यत्र सज्जेद् यत आत्मपातः ॥३९॥

पदच्छेद— सः सर्व धी वृत्ति अनुभूत सर्वः, आत्मा यथा स्वप्न जन ईक्षित एकः ।
तम् सत्यम् आनन्द निधिम् भजेत, न अन्यत्र सज्जेत् यतः आत्मपातः ॥

शब्दार्थ—

सः	७.	वह	तम् सत्यम्	९.	उस सत्यस्वरूप
सर्व धी वृत्ति	५.	सभी बुद्धि व्यवहारों से	आनन्द निधिम्	१०.	आनन्द के सागर
अनुभूत सर्वः	६.	सबका अनुभव करने वाला	भजेत,	११.	भजन करना चाहिए
आत्मा	८.	परमात्मा (एक है)	न	१३.	नहीं
यथा	१.	जिस प्रकार	अन्यत्र	१२.	दूसरी वस्तुओं में
स्वप्न जन	२.	स्वप्न में मनुष्य	सज्जेत्	१४.	आसक्त होना चाहिए
ईक्षित	४.	देखता है	यतः	१५.	क्योंकि (उससे)
एकः ।	३.	एक अपने को ही	आत्मपातः ॥	१६.	जीवात्मा का पतन (होता है)

श्लोकार्थ:—जिस प्रकार स्वप्न में मनुष्य एक अपने को ही देखता है, उसी प्रकार सब रूपों में सभी बुद्धि व्यवहारों से सबका अनुभव करने वाला वह परमात्मा एक है। उस सत्यस्वरूप आनन्द के सागर परमात्मा का भजन करना चाहिए। दूसरी वस्तुओं में आसक्त नहीं होना चाहिए; क्योंकि उससे जीवात्मा का पतन होता है।

इति श्रीमदभागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
महापुरुषसंस्थानुवर्णने प्रथमः अध्यायः ॥१॥

द्वितीयः स्कन्धः

अथ द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

एवं पुरा धारणयाऽऽत्मयोनि-र्नष्टां स्मृतिं प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ।
तथा ससर्जेदममोघदृष्टि-र्यथाप्ययात् प्राग्व्यवसायबुद्धिः ॥१॥

पदच्छेद— एवम् पुरा धारणया आत्मयोनिः, नष्टाम् स्मृतिम् प्रत्यवरुध्य तुष्टात् ।
तथा ससर्ज इदम् अमोघ दृष्टिः, यथा अपि अयात् प्राग् व्यवसाय बुद्धिः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार की	ससर्ज	१३.	सृष्टि की
पुरा	१.	सृष्टि के प्रारम्भ में	इदम्	११.	इस (संसार) की
धारणया	३.	धारण के द्वारा	अमोघ दृष्टिः,	८.	सफल दर्शन और
आत्मयोनिः,	७.	ब्रह्माजी ने	यथा अपि	१४.	जैसी कि
नष्टाम् स्मृतिम्	५.	खोई हुई स्मरण शक्ति को	अयात्	१६.	थी
प्रत्यवरुध्य	६.	पाकर	प्राग्	१५.	(प्रलय से) पहले
तुष्टात् ।	४.	प्रसन्न किये गये (भगवान्) से	व्यवसाय	६.	निश्चयात्मक
तथा	१२.	वैसी ही	बुद्धिः ॥	१०.	ज्ञान के द्वारा

श्लोकार्थ—सृष्टि के प्रारम्भ में इस प्रकार की धारणा के द्वारा प्रसन्न किये गये भगवान् से खोई हुई स्मरण शक्ति को पाकर ब्रह्माजी ने सफल दर्शन और निश्चयात्मक ज्ञान के द्वारा इस संसार की वैसी ही सृष्टि की, जैसी कि प्रलय से पहले थी ।

द्वितीयः श्लोकः

शाब्दस्य हि ब्रह्मण एष पन्था, यन्नामभिर्ध्यायति धीरपार्थैः ।
परिभ्रमंस्तत्र न विन्दतेऽर्थान्, मायामये वासनया शयानः ॥२॥

पदच्छेद— शाब्दस्य हि ब्रह्मणः एषः पन्थाः, यत् नामभिः ध्यायति धीः अपार्थैः ।
परिभ्रमन् तत्र न विन्दते अर्थान्, मायामये वासनया शयानः ॥

शब्दार्थ—

शाब्दस्य	१.	शब्द	अपार्थैः ।	८.	झूठे
हि	४.	ही	परिभ्रमन्	१५.	भटकता हुआ
ब्रह्मणः	२.	ब्रह्म वेद का	तत्र	१४.	उन (लोकों) में
एषः	३.	यह	न	१७.	नहीं
पन्थाः,	५.	मार्ग (है)	विन्दते	१८.	पाता है
यत्	६.	कि	अर्थान्,	१६.	सच्चे सुख को
नामभिः	९.	नामों के	मायामये	१३.	माया से निर्मित
ध्यायति	१०.	चक्कर में पड़ जाती है	वासनया	११.	वासना से
धीः	७.	बुद्धि	शयानः ॥	१२.	सोया हुआ (मनुष्य)

श्लोकार्थ—शब्द-ब्रह्म वेद का यही मार्ग है कि बुद्धि झूठे नामों के चक्कर में पड़ जाती है; फलस्वरूप वासना से सोया हुआ मनुष्य माया से निर्मित उन लोकों में भटकता हुआ सच्चे सुख को नहीं पाता है ।

तृतीयः श्लोकः

अतः कविर्नामसु यावदर्थः, स्यादप्रमत्तो व्यवसायबुद्धिः ।
सिद्धेऽन्यथार्थे न यतेत तत्र, परिश्रमं तत्र समीक्षमाणः ।।३।।

पदच्छेद—

अतः कविः नामसु यावद् अर्थः, स्यात् अप्रमत्तः व्यवसाय बुद्धिः ।
सिद्धे अन्यथा अर्थे न यतेत तत्र, परिश्रमम् तत्र समीक्षमाणः ।।

शब्दार्थ—

अतः	१.	इसलिये	सिद्धे	११.	प्राप्त हो जाय (तो)
कविः	२.	विद्वान् को (चाहिए कि)	अन्यथा	१०.	दूसरे प्रकार से
नामसु	३.	(उन) नामों में	अर्थे	९.	(यदि) प्रयोजन
यावद् अर्थः,	४.	जितने से प्रयोजन	न यतेत	१६.	प्रयत्न न करे
स्यात्	५.	हो	तत्र,	१५.	उस विषय में
अप्रमत्तः	६.	सावधान होकर	परिश्रमम्	१३.	श्रम को
व्यवसाय	७.	निश्चयात्मक	तत्र	१२.	उसमें
बुद्धिः ।	८.	ज्ञान से (उतना ही कर्म करे)	समीक्षमाणः ।।	१४.	व्यर्थ जानकर

श्लोकार्थ—इसलिये विद्वान् को चाहिए कि उन नामों में जितने से प्रयोजन हो, सावधान होकर निश्चयात्मक ज्ञान से उतना ही कर्म करे । यदि वह प्रयोजन दूसरे प्रकार से प्राप्त हो जाय तो उसमें श्रम को व्यर्थ जानकर उस विषय में प्रयत्न न करे ।

चतुर्थः श्लोकः

सत्यां क्षितौ किं कशिपोः प्रयासै-र्बाहौ स्वसिद्धे ह्युपबर्हणैः किम् ।
सत्यञ्जलौ किं पुरुधान्नपात्र्या, दिग्वल्कलादौ सति किं दुकूलैः ।।४।।

पदच्छेद—

सत्याम् क्षितौ किम् कशिपोः प्रयासैः, बाहौ स्व सिद्धे हि उपबर्हणैः किम् ।
सति अञ्जलौ किम् पुरुधा अन्नपात्र्या, दिग् वल्कल आदौ सति किम् दुकूलैः ।।

शब्दार्थ—

सत्याम्	२.	रहते	सति	९.	रहते
क्षितौ	१.	पृथ्वी के	अञ्जलौ	८.	अँजुली के
किम्	४.	क्या (लाभ है)	किम्	११.	क्या (जरूरत है)
कशिपोः, प्रयासैः,	३.	पलंग के लिए, प्रयत्न करने से	पुरुधा, अन्नपात्र्या,	१०.	बहुत से, बर्तनों की
बाहौ, स्वसिद्धे	५.	बाहुओं के, अपने पास रहते	दिग् वल्कल	१३.	आकाश और वृक्षों की छाल
हि	१२.	तथा	आदौ सति	१४.	इत्यादि के रहते
उपबर्हणैः	६.	तकियों की	किम्	१६.	क्या (काम है ?)
किम् ।	७.	क्या (आवश्यकता है)	दुकूलैः ।।	१५.	वस्त्रों का

श्लोकार्थ—पृथ्वी के रहते पलंग के लिए प्रयत्न करने से क्या लाभ है, बाहुओं के अपने पास रहते तकियों की क्या आवश्यकता है, अँजुली के रहते बहुत से बर्तनों की क्या जरूरत है तथा आकाश और वृक्षों की छाल इत्यादि के रहते वस्त्रों का क्या काम है ?

पञ्चमः श्लोकः

चीराणि किं पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षां,
नैवाङ्घ्रिपाः परभृतः सरितोऽप्यशुष्यन् ।
रुद्धा गुहाः किमजितोऽवति नोपसन्नान्,
कस्माद् भजन्ति कवयो धनदुर्मदान्धान् ॥५॥

पदच्छेद—

चीराणि किम् पथि न सन्ति दिशन्ति भिक्षाम्,
न एव अङ्घ्रिपाः परभृतः सरितः अपि अशुष्यन् ।
रुद्धाः गुहाः किम् अजितः अवति न उपसन्नान्,
कस्मात् भजन्ति कवयः धन दुर्मद अन्धान् ॥

शब्दार्थ—

चीराणि	३.	फटे-पुराने चीथड़े	रुद्धाः	१६.	बन्द कर दी गयी हैं ? (तथा क्या)
किम्	१.	क्या (पहनने के लिए)	गुहाः	१५.	गुफायें
पथि	२.	रास्ते में	किम्	१४.	क्या (निवास के लिए)
न	४.	नहीं	अजितः	१७.	भगवान् अजित
सन्ति	५.	पड़े हैं ? (क्या)	अवति	२०.	रक्षा करते हैं (फिर)
दिशन्ति	१०.	देते हैं ? (क्या)	न	१९.	नहीं
भिक्षाम्,	८.	फलरूप भीख	उपसन्नान्,	१८.	शरणागत जनों की
न एव	९.	नहीं	कस्मात्	२१.	क्यों
अङ्घ्रिपाः	७.	वृक्ष (खाने के लिए)	भजन्ति	२६.	चापलूसी करते हैं
परभृतः	६.	दूसरों के पोषक	कवयः	२२.	विद्वान् लोग
सरितः	११.	नदियाँ	धन	२३.	धन के
अपि	१२.	भी	दुर्मद	२४.	घमण्ड में
अशुष्यन् ।	१३.	सूख गयी हैं ?	अन्धान् ॥	२५.	अन्धे (लोगों) की

श्लोकार्थ—क्या पहिनने के लिए रास्ते में फटे-पुराने चीथड़े नहीं पड़े हैं ? क्या दूसरों के पोषक वृक्ष खाने के लिए फलरूप भीख नहीं देते हैं ? क्या नदियाँ भी सूख गयी हैं ? क्या निवास के लिए गुफायें बन्द कर दी गयी हैं ? तथा क्या भगवान् अजित शरणागत जनों की रक्षा नहीं करते हैं ? फिर क्यों विद्वान् लोग धन के घमण्ड में अन्धे लोगों की चापलूसी करते हैं ?

षष्ठः श्लोकः

एवं स्वचित्ते स्वत एव सिद्ध, आत्मा प्रियोऽर्थो भगवाननन्तः ।
तं निर्वृतो नियतार्थो भजेत, संसारहेतूपरमश्च यत्र ॥६॥

पदच्छेद—

एवम् स्व चित्ते स्वतः एव सिद्धः, आत्मा प्रियः अर्थः भगवान् अनन्तः ।
तम् निर्वृतः नियतार्थः भजेत, संसार हेतु उपरमः च यत्र ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार (धारणा से)	तम्	११.	उनका
स्व चित्ते	२.	अपने हृदय में	निर्वृतः	९.	आनन्द-मग्न (मनुष्य) को
स्वतः एव	७.	अपने आप ही	नियतार्थः	१०.	दृढ़ निश्चय करके
सिद्धः,	८.	विराजमान हो जाते हैं	भजेत,	१२.	भजन करना चाहिए
आत्मा	४.	परमात्मा	संसार हेतु	१५.	जन्म-मरण के कारण का
प्रियः अर्थः	३.	प्रिय मनोरथ	उपरमः	१६.	नाश हो जाता है
भगवान्	५.	भगवान्	च	१३	क्योंकि
अनन्तः ।	६.	श्री हरि	यत्र ॥	१४.	इस (भजन) से

श्लोकार्थ—इस प्रकार धारणा करने से अपने हृदय में प्रिय मनोरथ परमात्मा भगवान् श्री हरि अपने आप ही विराजमान हो जाते हैं। आनन्द-मग्न मनुष्य को दृढ़ निश्चय करके उनका भजन करना चाहिए; क्योंकि इस भजन से जन्म-मरण के कारण का नाश हो जाता है।

सप्तमः श्लोकः

कस्तां त्वनादृत्य परानुचिन्ता—मृते पशूनसतीं नाम युञ्ज्यात् ।
पश्यञ्जनं पतितं वैतरण्यां, स्वकर्मजान् परितापाञ्जुषाणम् ॥७॥

पदच्छेद—

कः ताम् तु अनादृत्य पर अनुचिन्ताम्, ऋते पशून् असतीम् नाम युञ्ज्यात् ।
पश्यन् जनम् पतितम् वैतरण्याम्, स्व कर्मजान् परितापान् जुषाणम् ॥

शब्दार्थ—

कः, ताम्	१२.	कौन (व्यक्ति), उस	युञ्ज्यात् ।	१६.	आसक्त रहेगा
तु	३.	तथा	पश्यन्	८.	देखता हुआ
अनादृत्य	१४.	अनादर करके	जनम्	७.	लोगों को
पर,अनुचिन्ताम्	१३.	परमात्मा के, चिन्तन का	पतितम्	२.	गिरे हुए
ऋते	१०.	छोड़कर	वैतरण्याम्,	१.	वैतरणी में
पशून्	९.	पशुओं को	स्वकर्मजान्	४.	अपने कर्मों से उत्पन्न
असतीम्	१५.	असत् विषयों में	परितापान्	५.	दुःखों को
नाम	११.	भला	जुषाणम् ॥	६.	भोगते हुए

श्लोकार्थ—वैतरणी में गिरे हुए तथा अपने कर्मों से उपत्न्न दुःखों को भोगते हुए लोगों को देखता हुआ, पशुओं को छोड़कर भला कौन व्यक्ति उस परमात्मा के चिन्तन का अनादर करके असत् विषयों में आसक्त रहेगा ?

अष्टमः श्लोकः

केचित् स्वदेहान्तर्हृदयावकाशे, प्रादेशमात्रं पुरुषं वसन्तम् ।
चतुर्भुजं कञ्जरथाङ्गशङ्ख—गदाधरं धारणया स्मरन्ति ॥८॥

पदच्छेद—

केचित् स्व देह अन्तर् हृदय अवकाशे, प्रादेशमात्रम् पुरुषम् वसन्तम् ।
चतुर्भुजम् कञ्ज रथाङ्ग शङ्ख, गदाधरम् धारणया स्मरन्ति ॥

शब्दार्थ—

केचित्	१.	कुछ लोग	चतुर्भुजम्	११.	चार भुजाधारी
स्व देह	२.	अपने शरीर के	कञ्ज	७.	कमल
अन्तर् हृदय	३.	अन्दर हृदय के	रथाङ्ग	८.	चक्र
अवकाशे,	५.	देश में	शङ्ख,	९.	शंख (और)
प्रादेशमात्रम्	४.	बित्ता-भर	गदाधरम्	१०.	गदा धारण करनेवाले
पुरुषम्	१२.	परम-पुरुष का	धारणया	१३.	धारणा के द्वारा
वसन्तम् ।	६.	निवास करने वाले (तथा)	स्मरन्ति ॥	१४.	ध्यान करते हैं

श्लोकार्थ—कुछ लोग अपने शरीर के अन्दर हृदय के बित्ता-भर देश में निवास करने वाले तथा कमल, चक्र, शंख और गदा धारण करनेवाले चार भुजाधारी परम-पुरुष का धारणा के द्वारा ध्यान करते हैं ।

नवमः श्लोकः

प्रसन्नवक्त्रं नलिनायतेक्षणं, कदम्बकिञ्जल्कपिशङ्गवाससम् ।
लसन्महारत्नहिरण्मयाङ्गदं, स्फुरन्महारत्नकिरीटकुण्डलम् ॥९॥

पदच्छेद— प्रसन्न वक्त्रम् नलिन आयत ईक्षणम्, कदम्ब किञ्जल्क पिशङ्ग वाससम् ।
लसत् महारत्न हिरण्मय अङ्गदम्, स्फुरत् महारत्न किरीट कुण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

प्रसन्न वक्त्रम्	१.	प्रसन्न मुख	लसत्	१२.	सुशोभित (तथा)
नलिन	२.	कमल के समान	महारत्न	९.	श्रेष्ठ रत्नों से जड़े हुए
आयत	३.	विशाल	हिरण्मय	१०.	सुवर्ण के
ईक्षणम्,	४.	नेत्र	अङ्गदम्,	११.	बाजूबन्द से
कदम्ब	५.	कदम्ब पुष्प के	स्फुरत्	१३.	चमकीले
किञ्जल्क	६.	पराग के समान	महारत्न	१४.	मणियों से जड़े हुए
पिशङ्ग	७.	पीले	किरीट	१५.	मुकुट और
वाससम् ।	८.	वस्त्र (और)	कुण्डलम् ॥	१६.	कुण्डलों से युक्त (भगवान् का हृदय में दर्शन करे)

श्लोकार्थ—प्रसन्न-मुख, कमल के समान विशाल नेत्र, कदम्ब पुष्प के पराग के समान पीले वस्त्र और श्रेष्ठ रत्नों से जड़े हुए सुवर्ण के बाजूबन्द से सुशोभित तथा चमकीले मणियों से जड़े हुए मुकुट और कुण्डलों से युक्त भगवान् का हृदय में दर्शन करें ।

दशमः श्लोकः

उन्निद्रहृत्पङ्कजकर्णिकालये, योगेश्वरास्थापितपादपल्लवम् ।
श्रीलक्ष्मणं कौस्तुभरत्नकन्धर–मम्लानलक्ष्म्या वनमालयाऽऽचितम् ॥१०॥

पदच्छेद—

उन्निद्र हृत् पङ्कज कर्णिकालये, योगेश्वर आस्थापित पाद पल्लवम् ।
श्रीलक्ष्मणम् कौस्तुभ रत्न कन्धरम्, अम्लान लक्ष्म्या वनमालया आचितम् ॥

शब्दार्थ—

उन्निद्र	४.	खिले हुए	श्रीलक्ष्मणम्	१०.	श्रीवत्स की सुनहली रेखा
हृत्	५.	हृदय	कौस्तुभ	११.	कौस्तुभ
पङ्कज	६.	कमल की	रत्न	१२.	मणि (और)
कर्णिकालये,	७.	पंखुड़ियों पर	कन्धरम्,	९.	(उनका) वक्षःस्थल
योगेश्वर	३.	योगिराजों के	अम्लान	१३.	सदाबहार
आस्थापित	८.	विराजमान हैं	लक्ष्म्या	१४.	शोभावाली
पाद	१.	(श्री हरि के) चरण	वनमालया	१५.	वनमाला से
पल्लवम् ।	२.	कमल	आचितम् ॥	१६.	सुशोभित है

श्लोकार्थ—श्री हरि के चरण-कमल योगिराजों के खिले हुए हृदय-कमल की पंखुड़ियों पर विराजमान हैं। उनका वक्षःस्थल श्रीवत्स की सुनहली रेखा, कौस्तुभ मणि और सदाबहार शोभावाली वनमाला से सुशोभित है।

एकादशः श्लोकः

विभूषितं मेखलयाङ्गुलीयकै-र्महाधनैर्नूपुरकङ्कणादिभिः ।
स्निग्धामलाकुञ्चितनीलकुन्तलै-र्विरोचमानाननहासपेशलम् ॥११॥

पदच्छेद—

विभूषितम् मेखलया अङ्गुलीयकैः, महाधनैः नूपुर कङ्कण आदिभिः ।
स्निग्ध अमल आकुञ्चित नील कुन्तलैः, विरोचमान आनन हास पेशलम् ॥

शब्दार्थ—

विभूषितम्	७.	सुशोभित है	स्निग्ध	९.	चिकने
मेखलया	१	(श्री हरि) करधनी	अमल	१०.	कोमल और
अङ्गुलीयकैः,	२.	अँगूठी	आकुञ्चित	११.	घुँघराले (हैं तथा वे)
महाधनैः	३.	वहुमूल्य	नील कुन्तलैः,	८.	(उनके) काले बाल
नूपुर	४.	पाजेब और	विरोचमान	१२.	दमकते
कङ्कण	५.	कंगन	आनन हास	१३.	मुख एवं मुसकान से
आदिभिः ।	६.	आदि आभूषणों से	पेशलम् ॥	१४.	सुन्दर (लगते हैं)

श्लोकार्थ—श्री हरि करधनी, अँगूठी, बहुमूल्य पाजेब और कंगन आदि आभूषणों से सुशोभित है। उनके काले बाल चिकने, कोमल और घुँघराले हैं तथा वे दमकते मुख एवं मुसकान से सुन्दर लगते हैं।

द्वादशः श्लोकः

अदीनलीलाहसितेक्षणोल्लसद्—भ्रूभङ्गसंसूचितभूर्यनुग्रहम् ।
ईक्षेत चिन्तामयमेनमीश्वरं, यावन्मनो धारणयावतिष्ठते ॥१२॥

पदच्छेद— अदीन लीला हसित ईक्षण उल्लसत्, भ्रू भङ्ग संसूचित भूरि अनुग्रहम् ।
ईक्षेत चिन्तामयम् एनम् ईश्वरम्, यावत् मनः धारणया अवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

अदीन	२.	खुली	ईक्षेत	१२.	दर्शन करे
लीला	१.	लीला से पूर्ण	चिन्तामयम्	९.	ध्यान में स्थित
हसित	३.	हँसी और	एनम्	१०.	इस
ईक्षण	४.	चितवन से	ईश्वरम्,	११.	भगवान् का (तबतक)
उल्लसत्,	५.	शोभित	यावत्	१३.	जबतक
भ्रू भङ्ग	६.	तिरछी भौहों से	मनः	१४.	मन
संसूचित	८.	वर्षा करने वाले	धारणया	१५.	धारणा शक्ति से (उनमें)
भूरि अनुग्रहम् ।	७.	अनन्त कृपा की	अवतिष्ठते ॥	१६.	स्थिर रहे

श्लोकार्थ—लीला से पूर्ण खुली हँसी और चितवन से शोभित तिरछी भौहों से अनन्त कृपा की वर्षा करने वाले, ध्यान में स्थित इस भगवान् का तब तक दर्शन करे, जब तक मन धारणा शक्ति से उनमें स्थिर रहे ।

त्रयोदशः श्लोकः

एकैकशोऽङ्गानि धियानुभावयेत्, पादादि यावद्धसितं गदाभृतः ।
जितं जितं स्थानमपोह्य धारयेत्, परं परं शुद्धयति धीर्यथा यथा ॥१३॥

पदच्छेद— एकैकशः अङ्गानि धिया अनुभावयेत्, पाद आदि यावत् हसितं गदाभृतः ।
जितम् जितम् स्थानम् अपोह्य धारयेत्, परम् परम् शुद्धयति धीः यथा यथा ॥

शब्दार्थ—

एकैकशः	७.	एक-एक करके	जितम् जितम्	९.	(तदनन्तर) ध्यान किये हुए
अङ्गानि	५	सभी अंगों का	स्थानम्	१०.	अंगों को
धिया	६.	बुद्धि से	अपोह्य	११.	छोड़कर
अनुभावयेत्,	८.	ध्यान करे	धारयेत्,	१३.	ध्यान करे (उस समय)
पाद आदि	२.	पैर से लेकर	परम् परम्	१२.	दूसरे-दूसरे अंगों का
यावत्	४.	तक	शुद्धयति	१६.	निर्मल होगी (चित्त स्थिर होगा)
हसितम्	३.	मुख	धीः	१५.	बुद्धि
गदाभृतः ।	१.	गदाधारी श्री हरि के	यथा यथा ॥	१४.	जैसे-जैसे

श्लोकार्थ—गदाधारी श्रीहरि के पैर से लेकर मुख तक सभी अंगों का बुद्धि से एक-एक करके ध्यान करे । तदनन्तर ध्यान किए हुए अंगों को छोड़कर दूसरे-दूसरे अंगों का ध्यान करे । उस समय जैसे-जैसे बुद्धि निर्मल होगी, चित्त स्थिर होगा ।

चतुर्दशः श्लोकः

यावन्न जायेत परावरेऽस्मिन्, विश्वेश्वरे द्रष्टरि भक्तियोगः ।
तावत्स्थवीयः पुरुषस्य रूपं, क्रियावसाने प्रयतः स्मरेत ।।१४।।

पदच्छेद— यावत् न जायेत पर अवरे अस्मिन्, विश्व ईश्वरे द्रष्टरि भक्ति योगः ।
तावत् स्थवीयः पुरुषस्य रूपम्, क्रिया अवसाने प्रयतः स्मरेत ।।

शब्दार्थ—

यावत्	५.	जब तक	तावत्	६.	तब तक
न	७.	नहीं	स्थवीयः	१३.	विराट्
जायेत	८.	उत्पन्न हो जाय	पुरुषस्य	१२.	आदि पुरुष के
पर अवरे	१.	परात्पर	रूपम्,	१४.	रूप का
अस्मिन्,	३.	इस	क्रिया	१०.	(नित्य नैमित्तिक) कर्म के
विश्व ईश्वरे	४.	जगदीश में	अवसाने	११.	अन्त में
द्रष्टरि	२.	द्रष्टा रूप	प्रयतः	१५.	नियम से
भक्ति योगः ।	६.	भक्ति योग	स्मरेत ।।	१६	स्मरण करना चाहिए

श्लोकार्थ—परात्पर द्रष्टारूप इस जगदीश में जब तक भक्ति-योग उत्पन्न नहीं हो जाय, तब तक नित्य-नैमित्तिक कर्म के अन्त में आदि पुरुष के विराट् रूप का नियम से स्मरण करना चाहिए ।

पञ्चदशः श्लोकः

स्थिरं सुखं चासनमाश्रितो यति—र्यदा जिहासुरिममङ्ग लोकम् ।
काले च देशे च मनो न सज्जयेत्, प्राणान् नियच्छेन्मनसा जितासुः ।।१५।।

पदच्छेद— स्थिरम् सुखम् च आसनम् आश्रितः यतिः, यदा जिहासुः इमम् अङ्ग लोकम् ।
काले च देशे च मनः न सज्जयेत्, प्राणान् नियच्छेत् मनसा जित असुः ।।

शब्दार्थ—

स्थिरम् सुखम् च	७.	स्थायी और सुखदायी	काले च देशे	१०.	काल और देश में
आसनम्	८.	आसन पर	च	१३.	तथा
आश्रितः	९.	बैठकर	मनः	११.	मन को
यतिः,	२.	साधक	न सज्जयेत्	१२.	आसक्त न करे
यदा	३.	जब	प्राणान्	१७.	प्राणों को
जिहासुः	६.	छोड़ना चाहे (तब)	नियच्छेत्	१८.	वश में करे
इमम्	४.	इस	मनसा	१४	मन से
अङ्ग	१.	हे परीक्षित् !	जित	१६.	जीतकर
लोकम् ।	५.	संसार को	असुः ।।	१५.	इन्द्रियों को

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! साधक जब इस संसार को छोड़ना चाहे, तब स्थायी और सुखदायी आसन पर बैठकर काल और देश में मन को आसक्त न करे तथा मन से इन्द्रियों को जीतकर प्राणों को वश में करे ।

षोडशः श्लोकः

मनः स्वबुद्ध्यामलया नियम्य, क्षेत्रज्ञ एतां निनयेत् तमात्मनि ।
आत्मानमात्मन्यवरुध्य धीरो, लब्धोपशान्तिर्विरमेत कृत्यात् ॥१६॥

पदच्छेद— मनः स्व बुद्ध्या अमलया नियम्य, क्षेत्रज्ञे एताम् निनयेत् तम् आत्मनि ।
आत्मानम् आत्मनि अवरुध्य धीरः, लब्ध उपशान्तिः विरमेत कृत्यात् ॥

शब्दार्थ—

मनः	४.	मन को	आत्मानम्	१०.	अन्तरात्मा को
स्व	१.	अपनी	आत्मनि	११.	परमात्मा में
बुद्ध्या	३.	बुद्धि से	अवरुध्य	१२.	लीन करके
अमलया	२.	निर्मल	धीरः,	१५.	(वह)धीर पुरुष
नियम्य,	५.	वश में करके	लब्ध	१४	पाया हुआ
क्षेत्रज्ञे	७.	क्षेत्रज्ञ में (तथा)	उपशान्तिः	१३.	परम शान्ति को
एताम्	६.	(मन से युक्त) इस बुद्धि को	विरमेत	१७.	छोड़ देवे
निनयेत्	९.	लीन करे (तदनन्तर)	कृत्यात् ॥	१६.	सांसारिक कर्मों को
तम् आत्मनि ।	८.	उस (क्षेत्रज्ञ) को अन्तरात्मा में			

श्लोकार्थ—अपनी निर्मल बुद्धि से मन को वश में करके मन से युक्त इस बुद्धि को क्षेत्रज्ञ में तथा उस क्षेत्रज्ञ को अन्तरात्मा में लीन करे । तदनन्तर अन्तरात्मा को परमात्मा में लीन करके परम शान्ति को पाया हुआ वह धीर पुरुष सांसारिक कर्मों को छोड़ देवे ।

सप्तदशः श्लोकः

न यत्र कालोऽनिमिषां परः प्रभुः, कुतो नु देवा जगतां य ईशिरे ।
न यत्र सत्त्वं न रजस्तमश्च, न वै विकारो न महान् प्रधानम्॥१७॥

पदच्छेदः— न यत्र कालः अनिमिषाम् परः प्रभुः, कुतः नु देवाः जगताम् ये ईशिरे ।
न यत्र सत्त्वम् न रजः तमः च, न वै विकारः न महान् प्रधानम् ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं है	ये	८.	जो
यत्र	१.	जहाँ	ईशिरे ।	१०.	शासन करते हैं (वे)
कालः	५.	काल	न यत्र सत्त्वम्	१३.	न जहाँ सत्त्वगुण (है)
अनिमिषाम्	२.	देवताओं पर	न रजः	१४.	न रजोगुण (है)
परः	४.	महान्	तमः	१६	तमोगुण (है)
प्रभुः,	३.	शासन करने वाला	च,	१५.	और (न)
कुतः	१२.	कैसे (रह सकते हैं ?)	न	१७.	न (वहाँ)
नु	७.	फिर	वै	२०.	और (वहाँ)
देवाः	११.	देवता (वहाँ)	विकारः	१८.	अहंकार है
जगताम्	९.	संसार के प्राणियों पर	न महान्	१९.	न महत्तत्त्व (है)
			प्रधानम् ॥	२१.	प्रकृति (भी नहीं है)

श्लोकार्थ—जहाँ देवताओं पर शासन करने वाला महान् काल नहीं है, फिर जो संसार के प्राणियों पर शासन करते हैं, वे देवता वहाँ कैसे रह सकते हैं ? न जहाँ सत्त्वगुण है, न रजोगुण है और न तमोगुण है । न वहाँ अहंकार है, न महत्तत्त्व है और वहाँ प्रकृति भी नहीं है ।

अष्टादशः श्लोकः

परं पदं वैष्णवमामनन्ति तद्, यन्नेति नेतीत्यतदुत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यमनन्यसौहृदा, हृदोपगुह्यार्हपदं पदे पदे ॥१८॥

पदच्छेद— परम् पदम् वैष्णवम् आमनन्ति तद्, यद् न इति न इति इति अतद् उत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यम् अनन्य सौहृदा, हृदा उपगुह्य अर्ह पदम् पदे पदे ॥

शब्दार्थ—

परम् परम्	१७.	परम धाम	उत्सिसृक्षवः।	५.	छोड़ने की इच्छा रखने वाले
वैष्णवम्	१६.	भगवान् विष्णु का	विसृज्य	७.	त्याग करके (तथा)
आमनन्ति	१८.	कहते हैं	दौरात्म्यम्	६.	शरीरादि में आत्मबुद्धि का
तद्,	१५.	उसको	अनन्य	१३.	अनुपम
यद्	८.	जिस	सौहृदा,	१४.	प्रेम से परिपूर्ण (रहते हैं)
न इति	१.	यह नहीं है	हृदा	११.	हृदय से
न इति	२.	यह नहीं है	उपगुह्य	१२.	आलिङ्गन करके
इति	३.	इस प्रकार	अर्ह पदम्	९.	पूज्य स्वरूप का
अतद्	४.	(परमात्मा से)भिन्न वस्तुओं को	पदे पदे ॥	१०.	पग-पग पर

श्लोकार्थ—"यह नहीं है, यह नहीं है" इस प्रकार परमात्मा से भिन्न वस्तुओं को छोड़ने की इच्छा रखने वाले योगीजन शरीरादि में आत्मबुद्धि का त्याग करके तथा जिस पूज्य स्वरूप का पग-पग पर हृदय से आलिङ्गन करके अनुपम प्रेम से परिपूर्ण रहते हैं, उसको भगवान् विष्णु का परम धाम कहते हैं।

एकोनविंशः श्लोकः

इत्थं मुनिस्तूपरमेद् व्यवस्थितो, विज्ञानदृग्वीर्यसुरन्धिताशयः ।
स्वपार्ष्णिनाऽऽपीड्य गुदं ततोऽनिलं, स्थानेषु षट्सून्नमयेज्जितक्लमः ॥१९॥

पदच्छेद—इत्थम् मुनिः तु उपरमेत् व्यवस्थितः, विज्ञान दृक् वीर्य सुरन्धित आशयः ।
स्व पार्ष्णिना आपीड्य गुदम् ततः अनिलम्, स्थानेषु षट्सु उन्नमयेत् जित क्लमः ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	८.	इस प्रकार	स्व पार्ष्णिना	१०	(वह पहले) अपनी एड़ी से
मुनिः तु	७.	योगी को तो	आपीड्य	१२	दबा लेवे
उपरमेत्	९.	शरीर त्यागना चाहिए	गुदम्	११.	गुदा को
व्यवस्थितः,	६.	ब्रह्मनिष्ठ	ततः	१३.	तदनन्तर
विज्ञान	१	ज्ञान	अनिलम्,	१५.	प्राणवायु को
दृक्	२.	दृष्टि के	स्थानेषु	१७.	स्थानों से
वीर्य	३.	बल से	षट्सु	१६	छहों
सुरन्धित	५.	नष्ट किये हुए	उन्नमयेत्	१८.	ऊपर ले जावे
आशयः।	४.	वासनाओं को	जित क्लमः ॥	१४	बिना घबराहट के

श्लोकार्थ—ज्ञान-दृष्टि के बल से वासनाओं को नष्ट किये हुए ब्रह्मनिष्ठ योगी को तो इस प्रकार शरीर त्यागना चाहिए— वह पहले अपनी एड़ी से गुदा को दबा लेवे, तदनन्तर बिना घबराहट के प्राणवायु को छहों स्थानों से ऊपर ले जावे।

विंशः श्लोकः

नाभ्यां स्थितं हृद्यधिरोप्य तस्मा—दुदानगत्योरसि तं नयेन्मुनिः ।
ततोऽनुसन्धाय धिया मनस्वी, स्वतालुमूलं शनकैर्नयेत ॥२०॥

पदच्छेद—नाभ्याम् स्थितम् हृदि अधिरोप्य तस्मात्, उदान गत्या उरसि तम् नयेत् मुनिः ।
ततः अनुसन्धाय धिया मनस्वी, स्व तालु मूलम् शनकैः नयेत ॥

शब्दार्थ—

नाभ्याम्	२.	नाभिचक्र (मणिपूरक) में	मुनिः ।	१.	योगिपुरुष
स्थितम्	३.	विद्यमान (प्राणवायु) को	ततः	११.	उसके बाद
हृदि	४.	हृदय (अनाहत चक्र) में	अनुसन्धाय	१४	सोच-समझकर
अधिरोप्य	५.	रोक कर	धिया	१३.	बुद्धि से
तस्मात्,	६.	वहाँ से	मनस्वी,	१२.	बुद्धिमान् योगी
उदानगत्या	८.	उदान वायु के द्वारा	स्व	१६.	अपने
उरसि	९.	कण्ठदेश (विशुद्ध चक्र) में	तालु मूलम्	१७.	विशुद्ध चक्र के अग्रभाग में
तम्	७.	उसे	शनकैः	१५.	धीरे से (उस वायु को)
नयेत्	१०.	ले जावे	नयेत ॥	१८.	चढ़ा देवे

श्लोकार्थ—योगिपुरुष नाभिचक्र (मणिपूरक) में विद्यमान प्राणवायु को हृदय (अनाहत चक्र) में रोक कर वहाँ से उसे उदान वायु के द्वारा कण्ठदेश (विशुद्ध चक्र) में ले जावे। उसके बाद बुद्धिमान् योगी बुद्धि से सोच-समझकर धीरे से उस वायु को अपने विशुद्ध चक्र के अग्रभाग में चढ़ा देवे ।

एकविंशः श्लोकः

तस्माद् भ्रुवोरन्तरमुन्नयेत, निरुद्धसप्तायतनोऽनपेक्षः ।
स्थित्वा मुहूर्तार्धमकुण्ठदृष्टि—र्निर्भिद्य मूर्धन् विसृजेत्परं गतः ॥२१॥

पदच्छेद— तस्मात् भ्रुवोः अन्तरम् उन्नयेत, निरुद्ध सप्त आयतनः अनपेक्षः ।
स्थित्वा मुहूर्त अर्धम् अकुण्ठ दृष्टिः, निर्भिद्य मूर्धन् विसृजेत् परम् गतः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	५.	वहाँ से	मुहूर्त	१४.	घड़ी
भ्रुवोः	६.	भौहों के	अर्धम्	१३.	एक
अन्तरम्	७.	मध्य (आज्ञा चक्र) में	अकुण्ठ	९.	विशुद्ध
उन्नयेत,	८.	ले जावे (वहाँ)	दृष्टिः,	१०.	ज्ञान-दृष्टि से
निरुद्ध	४.	बन्द करके (उस प्राणवायु को)	निर्भिद्य	१७.	भेदन कर (शरीर को)
सप्त	२.	(इन) सातों	मूर्धन्	१६.	ब्रह्मरन्ध्र का
आयतनः	३.	छिद्रों को	विसृजेत्	१८.	छोड़ देवे
अनपेक्षः ।	१.	इच्छा-रहित (वह योगी)	परम्	११.	परमात्मा में
स्थित्वा	१५.	विश्राम करके (तदनन्तर)	गतः ॥	१२.	स्थित हुआ (योगी)

श्लोकार्थ—इच्छा-रहित वह योगी दो आँख, दो कान, दो नासा छिद्र और एक मुख इन सातों छिद्रों को बन्द करके उस प्राणवायु को वहाँ से भौहों के मध्य आज्ञा चक्र में ले जावे। वहाँ विशुद्ध ज्ञान-दृष्टि से परमात्मा में स्थित हुआ योगी एक घड़ी विश्राम करके तदनन्तर ब्रह्मरन्ध्र का भेदन कर शरीर को छोड़ देवे ।

द्वाविंश: श्लोक:

यदि प्रयास्यन् नृप पारमेष्ठ्यं, वैहायसानामुत यद् विहारम् ।
अष्टाधिपत्यं गुणसन्निवाये, सहैव गच्छेन्मनसेन्द्रियैश्च ।।२२।।

पदच्छेद:— यदि प्रयास्यन् नृप पारमेष्ठ्यम्, वैहायसानाम् उत यद् विहारम् ।
अष्ट आधिपत्यम् गुण सन्निवाये, सह एव गच्छेत् मनसा इन्द्रियैः च ।।

शब्दार्थ—

यदि	२.	यदि (योगिपुरुष)	आधिपत्यम्	९.	स्वामी होकर
प्रयास्यन्	४.	जाने की इच्छा करता है	गुण	६.	सत्त्व, रजस् और तमोगुण का
नृप	१.	हे राजन् !	सन्निवाये,	७.	समूह रूप ब्रह्माण्ड में
पारमेष्ठ्यम्,	३.	ब्रह्मलोक में	सह	१६.	साथ लेकर
वैहायसानाम्	१०.	आकाशचारी सिद्धों के	एव	१७.	ही
उत	५.	अथवा	गच्छेत्	१८.	(शरीर से) निकले
यद्	११.	प्रसिद्ध	मनसा	१३.	मन
विहारम् ।	१२.	आनन्द को	इन्द्रियैः	१५.	इन्द्रियों को
अष्ट	८.	आठों सिद्धियों का	च ।।	१४.	और

श्लोकार्थ :—हे राजन् ! यदि योगिपुरुष ब्रह्मलोक में जाने की इच्छा करता है अथवा सत्त्व, रजस् और तमोगुण का समूह रूप ब्रह्माण्ड में आठों सिद्धियों का स्वामी होकर आकाशचारी सिद्धों के प्रसिद्ध आनन्द को पाना चाहता है तो वह मन और इन्द्रियों को साथ लेकर ही शरीर से निकले ।

त्रयोविंश: श्लोक:

योगेश्वराणां गतिमाहुरन्त-र्बहिस्त्रिलोक्याः पवनान्तरात्मनाम् ।
न कर्मभिस्तां गतिमाप्नुवन्ति, विद्यातपोयोगसमाधिभाजाम् ।।२३।।

पदच्छेद:— योगेश्वराणाम् गतिम् आहुः अन्तर्, बहिः त्रिलोक्याः पवन अन्तरात्मनाम् ।
न कर्मभिः ताम् गतिम् आप्नुवन्ति, विद्या तपः योग समाधि भाजाम् ।।

शब्दार्थ—

योगेश्वराणाम्	६.	योगिराजों को	न	१५.	नहीं
गतिम्	१०.	विचरण का	कर्मभिः	१२.	(मनुष्य) केवल कर्मों के द्वारा
आहुः	११.	अधिकार है (किन्तु)	ताम्	१३.	उस
अन्तर्,	८.	अन्दर और	गतिम्	१४.	गति को
बहिः	९.	बाहर	आप्नुवन्ति,	१६.	पा सकते हैं
त्रिलोक्याः	७.	त्रिलोकी के	विद्या तपः	१.	ज्ञान तपस्या
पवन	४.	वायु के (समान सूक्ष्म)	योग समाधि	२.	योग और समाधि का
अन्तरात्मनाम् ।	५.	आत्मावाले	भाजाम् ।।	३.	सेवन करने वाले (तथा)

श्लोकार्थ :—ज्ञान, तपस्या, योग और समाधि का सेवन करने वाले तथा वायु के समान सूक्ष्म आत्मावाले योगिराजों को त्रिलोकी के अन्दर और बाहर विचरण का अधिकार है; किन्तु मनुष्य केवल कर्मों के द्वारा उस गति को नहीं पा सकते हैं ।

चतुर्विंशः श्लोकः

वैश्वानरं याति विहायसा गतः, सुषुम्णया ब्रह्मपथेन शोचिषा ।
विधूतकल्कोऽथ हरेरुदस्तात्, प्रयाति चक्रं नृप शैशुमारम् ॥२४॥

पदच्छेद— वैश्वानरम् याति विहायसा गतः, सुषुम्णया ब्रह्मपथेन शोचिषा ।
विधूत कल्कः अथ हरेः उदस्तात्, प्रयाति चक्रम् नृप शैशुमारम् ॥

शब्दार्थ—

वैश्वानरम्	७.	अग्निलोक में	कल्कः	९.	पापों को
याति	८.	जाता है (वहाँ)	अथ	११.	उसके बाद
विहायसा	६.	आकाश मार्ग से	हरेः	१३.	भगवान् विष्णु के
गतः,	५.	जाता हुआ (योगी)	उदस्तात्,	१२.	ऊपर स्थित
सुषुम्णया	२.	सुषुम्णा के द्वारा	प्रयाति	१६.	पहुँचता है
ब्रह्मपथेन	४.	ब्रह्म लोक को	चक्रम्	१५.	लोक में
शोचिषा ।	३.	ज्योतिर्मय	नृप	१.	हे राजन् !
विधूत	१०.	समाप्त करके	शैशुमारम् ॥	१४.	शिशुमार

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सुषुम्णा के द्वारा ज्योतिर्मय ब्रह्मलोक को जाता हुआ योगी आकाशमार्ग से अग्निलोक में जाता है । वहाँ पापों को समाप्त करके उसके बाद ऊपर स्थित भगवान् विष्णु के शिशुमार लोक में पहुँचता है ।

पञ्चविंशः श्लोकः

तद् विश्वनाभिं त्वतिवर्त्य विष्णो-रणीयसा विरजेनात्मनैकः ।
नमस्कृतं ब्रह्मविदामुपैति, कल्पायुषो यद् विबुधा रमन्ते ॥२५॥

पदच्छेद— तद् विश्व नाभिम् तु अतिवर्त्य विष्णोः, अणीयसा विरजेन आत्मना एकः ।
नमस्कृतम् ब्रह्म विदाम् उपैति, कल्प आयुषः यद् विबुधाः रमन्ते ॥

शब्दार्थ—

तद्	५.	उस (शिशुमार चक्र) को	एकः ।	१०.	अकेले ही
विश्व	२.	विश्व ब्रह्माण्ड के	नमस्कृतम्	१२.	वन्दित (महर्लोक) में
नाभिम्	३.	घूमने का केन्द्र	ब्रह्मविदाम्	११.	ब्रह्मज्ञानियों के द्वारा
तु	१.	तदनन्तर (योगी पुरुष)	उपैति,	१३.	पहुँचता है
अतिवर्त्य	६.	पार करके	कल्प	१५,	कल्प पर्यन्त
विष्णोः,	४.	भगवान् विष्णु के	आयुषः	१६.	जीवित रहने वाले
अणीयसा	७.	अत्यन्त सूक्ष्म (और)	यद्	१४.	जहाँ पर
विरजेन	८.	निर्मल	विबुधाः	१७.	देव-गण
आत्मना	९.	शरीर से	रमन्ते ॥	१८.	विहार करते हैं

श्लोकार्थ—तदनन्तर योगी पुरुष विश्व-ब्रह्माण्ड के घूमने का केन्द्र भगवान् विष्णु के उस शिशुमार चक्र को पार करके अत्यन्त सूक्ष्म और निर्मल शरीर से अकेले ही ब्रह्मज्ञानियों के द्वारा वन्दित महर्लोक में पहुँचता है, जहाँ पर कल्प पर्यन्त जीवित रहने वाले देव-गण विहार करते हैं ।

षड्विंशः श्लोकः

अथो अनन्तस्य मुखानलेन, दन्दह्यमानं स निरीक्ष्य विश्वम् ।
निर्याति सिद्धेश्वरजुष्टधिष्ण्यं, यद् द्वैपरार्ध्यं तदु पारमेष्ठ्यम् ॥२६॥

पदच्छेद— अथो अनन्तस्य मुख अनलेन, दन्दह्यमानम् सः निरीक्ष्य विश्वम् ।
निर्याति सिद्धेश्वर जुष्ट धिष्ण्यम्, यद् द्वैपरार्ध्यम् तद् उ पारमेष्ठ्यम् ॥

शब्दार्थ—

अथो	१.	उसके बाद (प्रलय काल में)	निर्याति	१६.	चला जाता है
अनन्तस्य	२.	भगवान् शेषनाग के	सिद्धेश्वर	९.	सिद्धों के द्वारा
मुख	३.	मुख की	जुष्ट	१०.	सेवित
अनलेन,	४.	आग से	धिष्ण्यम्,	११.	स्थान वाले
दन्दह्यमानम्	६.	भस्म होते	यद्	१४.	जो कि
सः	८.	वह (योगी पुरुष)	द्वैपरार्ध्यम्	१५.	दो परार्ध वर्ष तक
निरीक्ष्य	७.	देखकर	तद् उ	१२.	उसी
विश्वम् ।	५.	नीचे के लोकों को	पारमेष्ठ्यम्	१३.	ब्रह्मलोक को

श्लोकार्थ—उसके बाद प्रलय काल में भगवान् शेषनाग के मुख की आग से नीचे के लोकों को भस्म होते देखकर वह योगी पुरुष सिद्धों के द्वारा सेवित स्थानवाले उसी ब्रह्मलोक को, जो कि दो परार्ध वर्ष तक स्थित रहता है, चला जाता है ।

सप्तविंशः श्लोकः

न यत्र शोको न जरा न मृत्यु—र्नार्तिर्न चोद्वेग ऋते कुतश्चित् ।
यच्चित्ततोऽदः कृपयानिदंविदां, दुरन्तदुःखप्रभवानुदर्शनात् ॥२७॥

पदच्छेद— न यत्र शोकः न जरा न मृत्युः, न आर्तिः न च उद्वेगः ऋते कुतश्चित् ।
यत् चित्ततः अदः कृपया अनिदम् विदाम्, दुरन्त दुःख प्रभव अनु दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	न	कुतश्चित् ।	१२.	किसी से
यत्र	११.	वहाँ (किसी को)	यत्	८.	जो
शोकः	१४.	दुःख (है)	चित्ततः	९.	हार्दिक (व्यथा है उसे)
न जरा	१५.	न बुढ़ापा (है)	अदः	१.	उस (ब्रह्मलोक) को
न मृत्युः,	१६.	न मृत्यु (है)	कृपया	७.	दयावश
न आर्तिः	१७.	न भय (है)	अनिदम्	२.	वास्तविक रूप से न
न	१९.	न ही	विदाम्,	३.	जानने वाले (लोगों के)
च	१८.	और	दुरन्त दुःख	४.	घोर संकट-स्वरूप
उद्वेगः	२०.	घबराहट (है)	प्रभव	५.	जन्म-मरण को
ऋते	१०.	छोड़कर	अनुदर्शनात् ॥	६.	देखकर (ब्रह्मलोकवासी)

श्लोकार्थ—उस ब्रह्मलोक को वास्तविक रूप से न जाननेवाले लोगों के घोर संकट-स्वरूप जन्म-मरण को देखकर ब्रह्मलोकवासी लोगों में दयावश जो हार्दिक व्यथा है, उसे छोड़कर वहाँ किसी को किसी से न दुःख है, न बुढ़ापा है, न मृत्यु है, न भय है और न ही घबराहट है ।

अष्टाविंशः श्लोकः

ततो विशेषं प्रतिपद्य निर्भय-स्तेनात्मनापोऽनलमूर्तिरत्वरन् ।
ज्योतिर्मयो वायुमुपेत्य काले, वाय्वात्मना खं बृहदात्मलिङ्गम् ॥२८॥

पदच्छेद— ततः विशेषम् प्रतिपद्य निर्भयः, तेन आत्मना आपः अनल मूर्तिः अत्वरन् ।
ज्योतिर्मयः वायुम् उपेत्य काले, वायु आत्मना खम् बृहत् आत्मन् लिङ्गम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. ब्रह्मलोक का भोग कर लेने पर	ज्योतिर्मयः	९.	तैजसरूप को
विशेषम्	३. सूक्ष्म शरीर को	वायुम्	१०.	वायुरूप में
प्रतिपद्य	४. प्राप्त करके	उपेत्य	११.	विलीन करके
निर्भयः,	२. अभय हुआ (वह योगी)	काले,	१२.	समय आने पर
तेन आत्मना	६. उस पार्थिव शरीर को	वायु आत्मना	१३.	वायु शरीर को
आपः	७. (जल में) जलीय शरीर को	खम्	१६.	आकाशतत्त्व में (विलीन करे)
अनल मूर्तिः	८. तेज में (तथा)	बृहत्	१५.	महान्
अत्वरन् ।	५. स्थिरता के साथ	आत्मन्लिङ्गम् ॥	१४.	परमात्मा का बोध कराने वाले

श्लोकार्थ—ब्रह्मलोक का भोग कर लेने पर अभय हुआ वह योगी सूक्ष्म शरीर को प्राप्त करके स्थिरता के साथ उस पार्थिव शरीर को जल में, जलीय-शरीर को तेज में तथा तैजस-रूप को वायुरूप में विलीन करके समय आने पर वायु शरीर को परमात्मा का बोध करावे वाले महान् आकाश तत्त्व में विलीन करे ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

घ्राणेन गन्धं रसनेन वै रसं, रूपं तु दृष्ट्या श्वसनं त्वचैव ।
श्रोत्रेण चोपेत्य नभोगुणत्वं, प्राणेन चाकूतिमुपैति योगी ॥२९॥

पदच्छेद— घ्राणेन गन्धम् रसनेन वै रसम्, रूपम् तु दृष्ट्या श्वसनम् त्वचा एव ।
श्रोत्रेण च उपेत्य नभोगुणत्वम्, प्राणेन च आकूतिम् उपैति योगी ॥

शब्दार्थ—

घ्राणेन	३. नासिका इन्द्रिय को	एव ।	१४.	ही
गन्धम्	४. गन्ध तन्मात्रा में	श्रोत्रेण	१२.	श्रवणेन्द्रिय को
रसनेन	५. जिह्वा को	च	१६.	तदनन्तर
वै	१. आवरण भेदन के बाद	उपेत्य	१५.	मिलाकर
रसम्,	६. रस तन्मात्रा में	नभोगुणत्वम्,	१३.	शब्द तन्मात्रा में
रूपम्	८. रूप तन्मात्रा में	प्राणेन	१७.	कर्मेन्द्रियों को
तु	११. तथा	च	१८.	भी
दृष्ट्या	७. नेत्रेन्द्रिय को	आकूतिम्	१९.	क्रियाशक्ति में
श्वसनम्	१०. स्पर्श तन्मात्रा में	उपैति	२०.	लीन करे
त्वचा	९. त्वग् इन्द्रिय को	योगी ॥	२.	योगी पुरुष

श्लोकार्थ—आवरण भेदन के बाद योगी पुरुष नासिका इन्द्रिय को गन्ध तन्मात्रा में, जिह्वा को रस तन्मात्रा में, नेत्रेन्द्रिय को रूप तन्मात्रा में, त्वग् इन्द्रिय को स्पर्श तन्मात्रा में तथा श्रवणेन्द्रिय को शब्द तन्मात्रा में ही मिलाकर तदनन्तर कर्मेन्द्रियों को भी क्रियाशक्ति में लीन करे ।

त्रिंशः श्लोकः

स भूतसूक्ष्मेन्द्रियसंनिकर्षं, मनोमयं देवमयं विकार्यम् ।
संसाद्य गत्या सह तेन याति, विज्ञानतत्त्वं गुणसंनिरोधम् ॥३०॥

पदच्छेद सः भूत सूक्ष्म इन्द्रिय संनिकर्षम्, मनोमयम् देवमयम् विकार्यम् ।
संसाद्य गत्यां सह तेन यांति, विज्ञान तत्त्वम् गुण संनिरोधम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह (योगी पुरुष)	संसाद्य	८.	लीन करके
भूत सूक्ष्म	२.	पञ्च तन्मात्राओं को	गत्या	११.	गति के द्वारा
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों को	सह	१०.	साथ
संनिकर्षम्,	६.	(इनके) अधिष्ठाता को	तेन	९.	उस (त्रिविध अहंकार) के
मनोमयम्	७.	सात्त्विक अहंकार में	याति	१४.	पहुँचता है
देवमयम्	५.	राजस अहंकार में (तथा)	विज्ञानतत्त्वम्	१३.	महत्तत्त्व में
विकार्यम् ।	३.	तामस अहंकार में	गुण संनिरोधम्	१२.	तीनों गुणों से रहित

श्लोकार्थ—वह योगी पुरुष पञ्च तन्मात्राओं को तामस अहंकार में, इन्द्रियों को राजस अहंकार में तथा इनके अधिष्ठाता को सात्त्विक अहंकार में लीन करके उस त्रिविध अहंकार के साथ गति के द्वारा तीनों गुणों से रहित महत्तत्त्व में पहुँचता है ।

एकत्रिंशः श्लोकः

तेनात्मनाऽऽत्मानमुपैति शान्त—मानन्दमानन्दमयोऽवसाने ।
एतां गतिं भागवतीं गतो यः, स वै पुनर्नेह विषज्जतेऽङ्ग ॥३१॥

पदच्छेद— तेन आत्मना आत्मानम् उपैति शान्तम्, आनन्दम् आनन्दमयः अवसाने ।
एताम् गतिम् भागवतीम् गतः यः, सः वै पुनः न इह विषज्जते अङ्ग ॥

शब्दार्थ—

तेन	४.	उसी	भागवतीम्	१२.	भगवत्संबन्धी
आत्मना	५.	सूक्ष्म शरीर से	गतः	१४.	पाया है
आत्मानम्	८.	परमात्मा को	यः,	१०.	जिसने
उपैति	९.	प्राप्त करता है	सः	१६.	वह (पुरुष)
शान्तम्,	६.	शान्त और	वै	१५.	निश्चयपूर्वक
आनन्दम्	७.	आनन्द स्वरूप	पुनः	१७.	फिर से
आनन्दमयः	२.	आनन्द रूप (वह योगी)	न	१९.	नहीं
अवसाने ।	३.	प्रलय काल में	इह	१८.	इस संसार में
एताम्	११.	इस	विषज्जते	२०.	फँसता है
गतिम्	१३.	गति को	अङ्ग ॥	१	हे परीक्षित् !

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! आनन्द रूप वह योगी प्रलय काल में उसी सूक्ष्म शरीर से शान्त और आनन्द-स्वरूप परमात्मा को प्राप्त करता है । जिसने इस भगवत्संबन्धी गति को पाया है, निश्चय-पूर्वक वह पुरुष फिर से इस संसार में नहीं फँसता है ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

एते सृती ते नृप वेद गीते, त्वयाभिपृष्टे ह सनातने च।
ये वै पुरा ब्रह्मण आह पृष्ट, आराधितो भगवान् वासुदेवः ॥ ३२ ॥

पदच्छेद— एते सृती ते नृप वेद गीते, त्वया अभिपृष्टे ह सनातने च।
ये वै पुरा ब्रह्मणे आह पृष्टः, आराधितः भगवान् वासुदेवः ॥

शब्दार्थ—

एते	८.	इन दोनों	च	६.	और
सृती	९.	मुक्ति मार्गों को	ये वै	१७.	इन्हीं दोनों (मार्गों) का
ते	१०.	तुमसे (कहा है)	पुरा	११.	सत्ययुग में
नृप	१.	हे राजन् !	ब्रह्मणे	१६.	ब्रह्मा जी से
वेद गीते,	४.	वेदों में वर्णित	आह	१८.	वर्णन किया था
त्वया	२.	तुम्हारे	पृष्टः,	१३.	पूछने पर
अभिपृष्टे	३.	पूछने पर (मैंने)	आराधितः	१२.	प्रसन्न करके
ह	५.	प्रसिद्ध	भगवान्	१४.	भगवान्
सनातने	७.	सनातन	वासुदेवः ॥	१५.	विष्णु ने

श्लोकार्थः—हे राजन ! तुम्हारे पूछने पर मैंने वेदों में वर्णित, प्रसिद्ध और सनातन इन दोनों मुक्ति-मार्गों को तुमसे कहा है। सत्ययुग में प्रसन्न करके पूछने पर भगवान् विष्णु ने ब्रह्मा जी से इन्हीं दोनों मार्गों का वर्णन किया था।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

न ह्यतोऽन्यः शिवः पन्था विशतः संसृताविह।
वासुदेवे भगवति भक्तियोगो यतो भवेत् ॥ ३३ ॥

पदच्छेद— न हि अतः अन्यः शिवः पन्थाः, विशतः संसृतौ इह।
वासुदेवे भगवति, भक्तियोगः यतः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	संसृतौ	२.	संसार में
हि	९.	है	इह।	१.	इस
अतः	४.	इसके	वासुदेवे	१२.	वासुदेव में
अन्यः	५.	अतिरिक्त दूसरा	भगवति	११.	भगवान्
शिवः	६.	कल्याणकारी	भक्तियोगः	१३.	भक्तियोग
पन्थाः,	७.	मार्ग	यतः	१०.	जिससे
विशतः	३.	प्रवेश करने वाले लोगों के लिए	भवेत् ॥	१४.	हो जाय

श्लोकार्थः—इस संसार में प्रवेश करने वाले लोगों के लिए इसके अतिरिक्त दूसरा कल्याणकारी मार्ग नहीं है, जिससे भगवान् वासुदेव में भक्तियोग हो जाय।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

भगवान् ब्रह्म कार्त्स्न्येन त्रिरन्वीक्ष्य मनीषया।
तदध्यवस्यत् कूटस्थो रतिरात्मन् यतो भवेत् ।।३४।।

पदच्छेद— भगवान् ब्रह्म कार्त्स्न्येन, त्रिः अन्वीक्ष्य मनीषया।
तद् अध्यवस्यत् कूटस्थः, रतिः आत्मन् यतः भवेत् ।।

शब्दार्थ—

भगवान्	१. भगवान्	तद्	७. उस (साधन) का
ब्रह्म	२. ब्रह्मा जी ने	अध्यवस्यत्	८. निश्चय किया
कार्त्स्न्येन	३. सम्पूर्ण (वेदों) का	कूटस्थः,	११. अचल
त्रिः	५. तीन बार	रतिः	१२. प्रेम
अन्वीक्ष्य	६. अध्ययन करके	आत्मन्	१०. परमात्मा में
मनीषया।	४. सावधानी के साथ	यतः	९. जिससे
		भवेत् ।।	१३. हो सके

श्लोकार्थ —भगवान् ब्रह्मा जी ने सम्पूर्ण वेदों का सावधानी के साथ तीन बार अध्ययन करके उस साधन का निश्चय किया, जिससे परमात्मा में अचल प्रेम हो सके।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

भगवान् सर्वभूतेषु लक्षितः स्वात्मना हरिः।
दृश्यैर्बुद्धयादिभिर्द्रष्टा लक्षणैरनुमापकैः ।।३५।।

पदच्छेद— भगवान् सर्व भूतेषु, लक्षितः स्वात्मना हरिः।
दृश्यैः बुद्धि आदिभिः द्रष्टा, लक्षणैः अनुमापकैः ।।

शब्दार्थ—

भगवान्	५. भगवान्	दृश्यैः	१०. प्रत्यक्ष
सर्व	१. सभी	बुद्धि	८. बुद्धि
भूतेषु,	२. प्राणियों में	आदिभिः	९. इत्यादि
लक्षितः	४. ज्ञात होने वाले	द्रष्टा,	१२. साक्षिरूप से सिद्ध (हैं)
स्वात्मना	३. आत्मा रूप से	लक्षणैः	११. साधनों के द्वारा
हरिः।	६. वासुदेव	अनुमापकैः ।।	७. अनुमान कराने वाले

श्लोकार्थ —सभी प्राणियों में आत्मा रूप से ज्ञात होने वाले भगवान् वासुदेव अनुमान कराने वाले बुद्धि इत्यादि प्रत्यक्ष साधनों के द्वारा साक्षिरूप से सिद्ध हैं।

षट्त्रिंशः श्लोकः

तस्मात् सर्वात्मना राजन् हरिः सर्वत्र सर्वदा ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यो भगवान्नृणाम् ॥ ३६ ॥

पदच्छेद— तस्मात् सर्व आत्मना राजन्, हरिः सर्वत्र सर्वदा ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मर्तव्यः भगवान् नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिए	श्रोतव्यः	६.	श्रवण
सर्व आत्मना	६.	सभी प्रकार से	कीर्तितव्यः	१०.	कीर्तन
राजन्,	२.	हे परीक्षित्	च,	११.	और
हरिः	८.	श्री हरि का	स्मर्तव्यः	१२.	स्मरण करना चाहिए
सर्वत्र	५.	सब जगह	भगवान्	७.	भगवान्
सर्वदा ।	४.	हमेशा	नृणाम् ॥	३.	मनुष्यों को

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! मनुष्यों को हमेशा सब जगह सभी प्रकार से भगवान् श्रीहरि का श्रवण, कीर्तन और स्मरण करना चाहिए ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पिबन्ति ये भगवत आत्मनः सतां, कथामृतं श्रवणपुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषयविदूषिताशयं, व्रजन्ति तच्चरणसरोरुहान्तिकम् ॥ ३७ ॥

पदच्छेद— पिबन्ति ये भगवतः आत्मनः सताम्, कथा अमृतम् श्रवण पुटेषु सम्भृतम् ।
पुनन्ति ते विषय विदूषित आशयम्, व्रजन्ति तत् चरण सरोरुह अन्तिकम् ॥

शब्दार्थ—

पिबन्ति	८.	पान करते हैं	पुनन्ति	१२.	पवित्र कर देते हैं (तथा)
ये	१.	जो (लोग)	ते	६.	वे (लोग)
भगवतः	६.	भगवान् के	विषय, विदूषित	१०.	विषय-भोगों से, मलिन
आत्मनः	५.	परमात्मा	आशयम्,	११.	अन्तःकरण को
सताम्,	२.	सज्जनों से वर्णित (और)	व्रजन्ति	१६.	पहुँच जाते हैं
कथा, अमृतम्	७.	कथारूपी, अमृतरस का	तत् चरण	१३.	उन (प्रभु) के चरण
श्रवण, पुटेषु	३.	कान रूपी, दोनों में	सरोरुह	१४.	कमल के
सम्भृतम् ।	४.	पूरित	अन्तिकम् ॥	१५.	समीप

श्लोकार्थ—जो लोग सज्जनों से वर्णित और कानरूपी दोनों में पूरित परमात्मा भगवान् के कथारूपी अमृतरस का पान करते हैं, वे लोग विषय-भोगों से मलिन अन्तःकरण को पवित्र कर देते हैं तथा उन प्रभु के चरण-कमल के समीप पहुँच जाते हैं ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
पुरुषसंस्थावर्णन नाम द्वितीयः अध्यायः ॥ २ ॥

द्वितीयः स्कन्धः

अथ तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

एवमेतन्निगदितं पृष्टवान् यद् भवान् मम।
नृणां यन्म्रियमाणानां मनुष्येषु मनीषिणाम्।। १।।

पदच्छेद— एवम् एतद् निगदितम्, पृष्टवान् यद् भवान् मम।
नृणाम् यद् म्रियमाणानाम्, मनुष्येषु मनीषिणाम्।।

शब्दार्थ—

एवम्	११.	इस प्रकार	मम।	२.	मुझसे
एतद्	१०.	उसे	नृणाम्	९.	मनुष्यों को क्या करना चाहिए
निगदितम्	१२.	बता दिया गया	यद्	५.	कि
पृष्टवान्	४.	पूछा था	म्रियमाणानाम्	६.	मरते समय
यद्	३.	जो	मनुष्येषु	७.	मनुष्यों में
भवान्	१.	आपने	मनीषिणाम्।।	८.	बुद्धिमान्

श्लोकार्थ—आपने मुझसे जो पूछा था कि मरते समय मनुष्यों में बुद्धिमान् मनुष्यों को क्या करना चाहिए? उसे इस प्रकार बता दिया गया।

द्वितीयः श्लोकः

ब्रह्मवर्चसकामस्तु यजेत ब्रह्मणस्पतिम्।
इन्द्रमिन्द्रियकामस्तु प्रजाकामः प्रजापतीन्।। २।।

पदच्छेद— ब्रह्मवर्चस कामः तु, यजेत ब्रह्मणस्पतिम्।
इन्द्रम् इन्द्रिय कामः तु, प्रजा कामः प्रजापतीन्।।

शब्दार्थ—

ब्रह्म	१.	ब्रह्म	इन्द्रम्	८.	इन्द्र की
वर्चस	२.	तेज का	इन्द्रिय	६.	इन्द्रिय बल का
कामः	३.	इच्छुक (मनुष्य)	कामः	७.	इच्छुक
तु	५.	और	तु	९.	तथा
यजेत	१२.	उपासना करे	प्रजाकामः	१०.	संतान का अभिलाषी
ब्रह्मणस्पतिम्।	४.	बृहस्पति की	प्रजापतीन्।।	११.	प्रजापतियों की

श्लोकार्थ—ब्रह्मतेज का इच्छुक मनुष्य बृहस्पति की और इन्द्रिय-बल का इच्छुक इन्द्र की तथा संतान का अभिलाषी प्रजापतियों की उपासना करे।

तृतीयः श्लोकः

देवीं मायां तु श्रीकामस्तेजस्कामो विभावसुम् ।
वसुकामो वसून् रुद्रान् वीर्यकामोऽथ वीर्यवान् ॥३॥

पदच्छेद—

देवीम् मायाम् तु श्रीकामः, तेजः कामः विभावसुम् ।
वसु कामः वसून् रुद्रान्, वीर्य कामः अथ वीर्यवान् ॥

शब्दार्थ—

देवीम्	४.	देवी की	वसु कामः	८.	धन की कामना से
मायाम्	३.	माया	वसून्	९.	वसुओं की
तु	५.	तथा	रुद्रान्	१२	रुद्रों की (उपासना करें)
श्रीकामः	२.	लक्ष्मी की कामना से	वीर्य कामः	११.	बल की कामना से
तेजः कामः	६.	तेज की इच्छा से	अथ	१०.	और
विभावसुम् ।	७.	अग्नि की	वीर्यवान् ॥	१.	वीर पुरुष

श्लोकार्थः—वीर पुरुष लक्ष्मी की कामना से माया देवी की तथा तेज की इच्छा से अग्नि की, धन की कामना से वसुओं की और बल की कामना से रुद्रों की उपासना करे ।

चतुर्थः श्लोकः

अन्नाद्यकामस्त्वदितिं स्वर्गकामोऽदितेः सुतान् ।
विश्वान् देवान् राज्यकामः साध्यान् संसाधको विशाम् ॥४॥

पदच्छेद—

अन्नाद्य कामः तु अदितिम्, स्वर्गकामः अदितेः सुतान् ।
विश्वान् देवान् राज्य कामः, साध्यान् संसाधकः विशाम् ॥

शब्दार्थ—

अन्नाद्य कामः	१.	अनाज की कामना से	विश्वान्	७.	विश्वे
तु	९.	तथा	देवान्	८.	देवों की
अदितिम्	२.	अदिति देवमाता की	राज्य कामः	६.	राज्य की कामना से
स्वर्गकामः	३.	स्वर्ग की कामना से	साध्यान्	१२.	साध्य देवों की (उपासना करे)
अदितेः	४.	अदिति के	संसाधकः	११.	अनुकूल करने की इच्छा से
सुतान् ।	५.	पुत्र देवताओं की	विशाम् ॥	१०.	प्रजाओं को

श्लोकार्थः—अनाज की कामना से अदिति देवमाता की, स्वर्ग की कामना से अदिति के पुत्र देवताओं की, राज्य की कामना से विश्वे देवों की तथा प्रजाओं को अनुकल करने की इच्छा से साध्य देवों की उपासना करे ।

पञ्चमः श्लोकः

आयुष्कामोऽश्विनौ देवौ पुष्टिकाम इलां यजेत् ॥
प्रतिष्ठाकामः पुरुषो रोदसी लोकमातरौ ॥५॥

पदच्छेद—

आयुः कामः अश्विनौ देवौ, पुष्टि कामः इलाम् यजेत् ।
प्रतिष्ठा कामः पुरुषः, रोदसी लोकमातरौ ॥

शब्दार्थ—

आयुः कामः	१. आयु की इच्छा वाला (मनुष्य)	**प्रतिष्ठा**	६. सम्मान का
अश्विनौ	२. अश्विनी कुमार	**कामः**	७. अभिलाषी
देवौ	३. देवों की	**पुरुषः**	८. मनुष्य
पुष्टि कामः	४. पुष्टि का इच्छुक	**रोदसी**	९. आकाश (तथा)
इलाम्	५. पृथ्वी की (और)	**लोक**	१०. लोक
यजेत् ।	१२. उपानना करे	**मातरौ ॥**	११. माता पृथ्वी की

श्लोकार्थ—आयु की इच्छा वाला मनुष्य अश्विनी कुमार देवों की, पुष्टि का इच्छुक पृथ्वी की और सम्मान का अभिलाषी मनुष्य आकाश तथा लोकमाता पृथ्वी की उपासना करे ।

षष्ठः श्लोकः

रूपाभिकामो गन्धर्वान् स्त्रीकामोऽप्सर उर्वशीम् ।
आधिपत्यकामः सर्वेषां यजेत परमेष्ठिनम् ॥६॥

पदच्छेद—

रूप अभिकामः गन्धर्वान्, स्त्री कामः अप्सरः उर्वशीम् ।
आधिपत्य कामः सर्वेषाम्, यजेत परमेष्ठिनम् ॥

शब्दार्थ—

रूप	१. सौन्दर्य की	**उर्वशीम् ।**	६. उर्वशी
अभिकामः	२. अभिलाषा से	**आधिपत्य**	९. स्वामी होने की
गन्धर्वान्	३. गन्धर्वों की	**कामः**	१०. कामना से
स्त्री	४. स्त्री प्राप्ति की	**सर्वेषाम्**	८. सबका
कामः	५. कामना से	**यजेत**	१२. आराधना करनी चाहिए
अप्सरः	७. अप्सरा की (तथा)	**परमेष्ठिनम् ॥**	११. ब्रह्मा जी की

श्लोकार्थ—सौन्दर्य की अभिलाषा से गन्धर्वों की, स्त्री-प्राप्ति की कामना से उर्वशी अप्सरा की तथा सबका स्वामी होने की कामना से ब्रह्मा जी की आराधना करनी चाहिए ।

सप्तमः श्लोकः

यज्ञं यजेद् यशस्कामः कोशकामः प्रचेतसम् ।
विद्याकामस्तु गिरिशं दाम्पत्यार्थं उमां सतीम् ।।७।।

पदच्छेद—

यज्ञम् यजेत् यशः कामः, कोश कामः प्रचेतसम् ।
विद्या कामः तु गिरिशम्, दाम्पत्य अर्थः उमाम् सतीम् ।।

शब्दार्थ—

यज्ञम्	२.	यज्ञ भगवान् की	कामः	६.	इच्छा से
यजेत्	१२.	आराधना करनी चाहिए	तु	८.	तथा
यशः कामः	१.	कीर्ति की कामना से	गिरिशम्	७.	भगवान् शंकर की
कोश कामः	३.	खजाने की लालसा से	दाम्पत्य अर्थः	९.	पति-पत्नी में प्रेम के निमित्त
प्रचेतसम्	४.	वरुण की	उमाम्	११.	पार्वती की
विद्या ।	५.	विद्या-प्राप्ति की	सतीम् ।।	१०.	सती

श्लोकार्थ—कीर्ति की कामना से यज्ञ भगवान् की, खजाने की लालसा से वरुण की, विद्या-प्राप्ति की इच्छा से भगवान् शंकर की तथा पति-पत्नी में प्रेम के निमित्त सती पार्वती की आराधना करनी चाहिए ।

अष्टमः श्लोकः

धर्मार्थं उत्तमश्लोकं तन्तुं तन्वन् पितॄन् यजेत् ।
रक्षाकामः पुण्यजनानोजस्कामो मरुद्गणान् ।।८।।

पदच्छेद—

धर्मार्थः उत्तम श्लोकम्, तन्तुम् तन्वन् पितॄन् यजेत् ।
रक्षा कामः पुण्यजनान्, ओजः कामः मरुद् गणान् ।।

शब्दार्थ—

धर्मार्थः	१.	धर्म के लिए	रक्षा	६.	रक्षा की
उत्तम श्लोकम्	२.	भगवान् विष्णु की	कामः	७.	कामना से
तन्तुम्	३.	वंश परम्परा की	पुण्यजनान्	८.	यक्षों की (और)
तन्वन्	४.	वृद्धि के लिए	ओजः	९.	बल-प्राप्ति की
पितॄन्	५.	पितरों की	कामः	१०.	इच्छा से
यजेत् ।	१२.	उपासना करनी चाहिए	मरुद्गणान् ।।	११.	मरुद्गणों की

श्लोकार्थ—धर्म के लिए भगवान् विष्णु की, वंश-परम्परा की वृद्धि के लिए पितरों की, रक्षा की कामना से यक्षों की और बल-प्राप्ति की इच्छा से मरुद्गणों की उपासना करनी चाहिए ।

नवमः श्लोकः

राज्यकामो मनून् देवान् निर्ऋतिं त्वभिचरन् यजेत् ।
कामकामो यजेत् सोमसकामः पुरुषं परम् ॥९॥

पदच्छेद—

राज्य कामः मनून् देवान्, निर्ऋतिम् तु अभिचरन् यजेत् ।
काम कामः यजेत् सोमम्, अकामः पुरुषम् परम् ॥

शब्दार्थ—

राज्य कामः	१. राज्य की कामना से	यजेत् ।	७. आराधना करे
मनून्	२. मन्वन्तर के अधिपति	काम कामः	८. भोगों की लालसा से
देवान्	३. देवों की	यजेत्	१३. उपासना करे
निर्ऋतिम्	६. निर्ऋति की	सोमम्	९. सोम की (और)
तु	४. तथा	अकामः	१०. निष्काम होने पर
अभिचरन्	५. अभिचार की इच्छा से	पुरुषम्	१२. पुरुष नारायण की
		परम् ॥	११. आदि

श्लोकार्थ—राज्य की कामना से मन्वन्तर के अधिपति देवों की तथा अभिचार की इच्छा से निर्ऋति की आराधना करे। भोगों की लालसा से सोम की और निष्काम होने पर आदि पुरुष नारायण की उपासना करे।

दशमः श्लोकः

अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन, यजेत पुरुषं परम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अकामः सर्व कामः वा, मोक्ष कामः उदारधीः ।
तीव्रेण भक्ति योगेन, यजेत पुरुषम् परम् ॥

शब्दार्थ—

अकामः	३. निष्काम भावना	तीव्रेण	७. दृढ़
सर्व कामः	४. समस्त कामना	भक्ति	८. भक्ति
वा	५. अथवा	योगेन	९. भाव के द्वारा
मोक्ष कामः	६. मुक्तिकी इच्छा से	यजेत	१२. उपासना करे
उदार	१. विशाल	पुरुषम्	११. पुरुष नारायण की
धीः	२. बुद्धिशाली (मनुष्य)	परम् ॥	१०. परम

श्लोकार्थ—विशाल बुद्धिशाली मनुष्य निष्काम भावना, समस्त कामना अथवा मुक्ति की इच्छा से दृढ़ भक्ति-भाव के द्वारा परम पुरुष नारायण की उपासना करे।

एकादशः श्लोकः

एतावानेव यजतामिह निःश्रेयसोदयः ।
भगवत्यचलो भावो यद् भागवतसङ्गतः ॥ ११ ॥

पदच्छेद— एतावान् एव यजताम्, इह निःश्रेयसा उदयः ।
भगवति अचलः भावः, यद् भागवत सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	४.	यह	भगवति	१०.	भगवान में
एव	५.	ही	अचलः	११.	दृढ़
यजताम्	२.	उपासना करने वाले मनुष्यों की	भावः	१२.	भक्ति (हो जाय)
इह	१.	इस संसार में	यद्	७.	कि
निः श्रेयसा	३.	परम कल्याण के साथ	भागवत	८.	भगवद्भक्तों की
उदयः ।	६.	उन्नति है	सङ्गतः ।	९.	संगति से (उनकी)

श्लोकार्थ—इस संसार में उपासना करने वाले मनुष्यों की परम कल्याण के साथ यही उन्नति है कि भगवद्भक्तों की संगति से उनकी भगवान् में दृढ़ भक्ति हो जाय ।

द्वादशः श्लोकः

ज्ञानं यदा प्रतिनिवृत्तगुणोर्मिचक्र-मात्मप्रसाद उत यत्र गुणेष्वसङ्गः ।
कैवल्यसम्मतपथस्त्वथ भक्तियोगः, को निर्वृतो हरिकथासु रतिं न कुर्यात् ॥ १२ ॥

पदच्छेद— ज्ञानम् यदा प्रतिनिवृत्त गुण ऊर्मि चक्रम्, आत्मन् प्रसादः उत यत्र गुणेषु, असङ्गः ।
कैवल्य सम्मत पथः तु अथ भक्ति योगः, कः निर्वृतः हरि कथासु रतिम् न कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	५.	ज्ञान	कैवल्य	१२.	कैवल्य मोक्ष का
यदा	६.	जब (हो जाता है तब)	सम्मत पथः	१३.	मान्य साधन
प्रतिनिवृत्त	४.	समाप्त कर देने वाला	तु	१५.	अतः
गुण	२.	तीनों गुणों के	अथ	११.	तदनन्तर
ऊर्मि चक्रम्,	३.	तरंग जाल को	भक्ति योगः,	१४.	भगवद्भक्ति (मिल जाती है)
आत्म प्रसादः	७.	आत्मा प्रसन्न हो जाती है	कः	१६.	कौन
उत	८.	तथा	निर्वृतः	१७.	आत्मानन्दी (मनुष्य)
यत्र	१.	जिस (सत्संगति) से	हरि कथासु	१८.	श्रीहरि की कथाओं में
गुणेषु	९.	विषयों में	रतिम्	१९.	प्रेम
असङ्गः ।	१०.	आसक्ति नहीं रहती है	न कुर्यात् ।	२३.	नहीं करेगा

श्लोकार्थ—जिस सत्संगति से तीनों गुणों के तरंग-जाल को समाप्त कर देने वाला ज्ञान जब हो जाता है तब आत्मा प्रसन्न हो जाती है तथा विषयों में आसक्ति नहीं रहती है । तदनन्तर कैवल्य-मोक्ष का मान्य-साधन भगवद्भक्ति मिल जाती है; अतः कौन आत्मानन्दी मनुष्य श्री हरि की कथाओं में प्रेम नहीं करेगा ।

त्रयोदशः श्लोकः

शौनक उवाच

इत्यभिव्याहृतं राजा निशम्य भरतर्षभः ।
किमन्यत्पृष्टवान् भूयो वैयासकिमृषिं कविम् ।।१३।।

पदच्छेद—

इति अभिव्याहृतम् राजा, निशम्य भरत ऋषभः ।
किम् अन्यत् पृष्टवान् भूयः, वैयासकिम् ऋषिम् कविम् ।।

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	अन्यत्	१०.	और
अभिव्याहृतम्	४.	कही गयी (बात) को	पृष्टवान्	१२.	पूछा था
राजा	२.	राजा परीक्षित् ने	भूयः	६.	फिर
निशम्य	५.	सुनकर	वैयासकिम्	७.	व्यास पुत्र शुकदेव
भरत ऋषभः ।	१.	भरतवंशियों में श्रेष्ठ	ऋषिम्	८.	मुनि से
किम्	११.	क्या	कविम् ।।	६.	दूरदर्शी

श्लोकार्थ—भरतवंशियों में श्रेष्ठ राजा परीक्षित् ने इस प्रकार कही गयी बात को सुनकर दूरदर्शी व्यास पुत्र शुकदेव मुनि से फिर और क्या पूछा था ?

चतुर्दशः श्लोकः

एतच्छुश्रूषतां विद्वन् सूत नोऽर्हसि भाषितुम् ।
कथा हरिकथोदर्काः सतां स्युः सदसि ध्रुवम् ।।१४।।

पदच्छेद—

एतद् शुश्रूषताम् विद्वन्, सूत नः अर्हसि भाषितुम् ।
कथा हरिकथा उदर्काः, सताम् स्युः सदसि ध्रुवम् ।।

शब्दार्थ—

एतद्	५.	उस बात को	कथाः	१०.	वार्तालाप
शुश्रूषताम्	३.	सुनने के इच्छुक	हरिकथा	१२.	श्री हरि की लीला कथा को
विद्वन्	१.	हे विद्वान्	उदर्काः	१३.	बताने वाला
सूत	२.	सूत जी ! (आप)	सताम्	८.	सन्तों की
नः	४.	हम लोगों से	स्युः	१४.	होगा
अर्हसि	७.	कृपा करें (क्योंकि)	सदसि	६	सभा में
भाषितुम् ।	६.	बताने की	ध्रुवम् ।।	११.	निश्चय ही

श्लोकार्थ—हे विद्वान् सूत जी ! आप सुनने के इच्छुक हम लोगों से उस बात को बताने की कृपा करें; क्योंकि सन्तों की सभा में वार्तालाप निश्चय ही श्री हरि की लीला कथा को बताने वाला होगा ।

पञ्चदशः श्लोकः

स वै भागवतो राजा पाण्डवेयो महारथः ।
बालक्रीडनकैः क्रीडन् कृष्णक्रीडां य आददे ।। १५ ।।

पदच्छेद—

सः वै भागवतः राजा, पाण्डवेयः महारथः ।
बाल क्रीडनकैः क्रीडन्, कृष्ण क्रीडाम् यः आददे ।।

शब्दार्थ—

सः	५. वे	बाल	८. बाल्यावस्था में
वै	१. प्रसिद्ध है कि	क्रीडनकैः	९. खिलौनों से
भागवतः	२. भगवद् भक्त (एवम्)	क्रीडन्,	१०. खेलते हुए
राजा,	६. राजा परीक्षित्	कृष्ण क्रीडाम्	११. श्रीकृष्ण की लीला का ही
पाण्डवेयः	४. पाण्डु नन्दन	यः	७. जो
महारथः ।	३. महारथी	आददे ।	१२. रस पान करते थे

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध है कि भगवद्भक्त एवम् महारथी पाण्डुनन्दन वे राजा परीक्षित् जो बाल्यावस्था में खिलौनों से खेलते हुए श्रीकृष्ण की लीला का ही रस पान करते थे ।

षोडशः श्लोकः

वैयासकिश्च भगवान् वासुदेवपरायणः ।
उरुगायगुणोदाराः सतां स्युर्हि समागमे ।। १६ ।।

पदच्छेद—

वैयासकिः च भगवान्, वासुदेव परायणः ।
उरुगाय गुण उदाराः, सताम् स्युः हि समागमे ।।

शब्दार्थ—

वैयासकिः	२. शुकदेव मुनि (भी)	गुण	९. लीलाओं की
च	५. अतः	उदाराः	११. चर्चा
भगवान्	१. भगवान्	सताम्	६. सन्तों की
वासुदेव	३. श्रीकृष्ण के	स्युः	१२. हुई होगी
परायणः ।	४. परम अनुरागी (हैं)	हि	१०. ही
उरुगाय	८. श्री हरि के	समागमे ।	७. संगति में

श्लोकार्थ—भगवान् शुकदेव मुनि भी श्रीकृष्ण के परम अनुरागी हैं, अतः सन्तों की संगति में श्री हरि के लीलाओं की ही चर्चा हुई होगी ।

सप्तदशः श्लोकः

आयुर्हरति वै पुंसामुद्यन्नस्तं च यन्नसौ ।
तस्यर्ते यत्क्षणो नीत उत्तमश्लोकवार्तया ॥१७॥

पदच्छेद—

आयुः हरति वै पुंसाम्, उद्यन् अस्तम् च यन् असौ ।
तस्य ऋते यत् क्षणः नीतः, उत्तम श्लोक वार्तया ॥

शब्दार्थ

आयुः	९.	समय को	असौ।	१४.	वे (भगवान् सूर्य)
हरति	१६.	समाप्त कर रहे हैं	तस्य	७.	उससे
वै	१५.	निश्चय ही	ऋते	८.	अतिरिक्त
पुंसाम्	६.	मनुष्यों के	यत्	३.	जो
उद्यन्	१०.	उगते हुए	क्षणः	४.	समय
अस्तम्	१२.	अस्ताचल को	नीतः	५.	बिताया गया
च	११.	और	उत्तमश्लोक	१.	श्री हरि की
यन्	१३.	जाते हुए	वार्तया ॥	२.	चर्चा के द्वारा

श्लोकार्थ—श्री हरि की चर्चा के द्वारा जो समय बिताया गया, मनुष्यों के उससे अतिरिक्त समय को उगते हुए और अस्ताचल को जाते हुए वे भगवान् सूर्य निश्चय ही समाप्त कर रहे हैं।

अष्टादशः श्लोकः

तरवः किं न जीवन्ति भस्त्राः किं न श्वसन्त्युत ।
न खादन्ति न मेहन्ति किं ग्रामपशवोऽपरे ॥१८॥

पदच्छेद—

तरवः किम् न जीवन्ति, भस्त्राः किम् न श्वसन्ति उत ।
न खादन्ति न मेहन्ति, किम् ग्राम पशवः अपरे ॥

शब्दार्थ—

तरवः	२.	वृक्ष	उत।	५.	अथवा
किम्	१.	क्या	न खादन्ति	१४.	नहीं खाते हैं (और)
न	३.	नहीं	न	१५.	नहीं
जीवन्ति	४.	जीते हैं	मेहन्ति	१२.	मल-मूत्र त्यागते हैं
भस्त्राः	७.	लुहार की धौंकनी	किम्	१०.	क्या
किम्	६.	क्या	ग्राम	११.	गाँव के
न	८	नहीं	पशवः	१३.	पशु
श्वसन्ति	९.	साँस लेती है	अपरे ॥	१२.	दूसरे

श्लोकार्थ—क्या वृक्ष नहीं जीते हैं ? अथवा क्या लुहार की धौंकनी साँस नहीं लेती है ? क्या गाँव के दूसरे पशु नहीं खाते हैं और मल-मूत्र नहीं त्यागते हैं ?

एकोनविंश: श्लोकः

श्वविड्वराहोष्ट्रखरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत्कर्ण पथोपेतो जातु नाम गदाग्रजः ॥ १६ ॥

पदच्छेद—

श्वन् विड्वराह उष्ट्र खरैः, संस्तुतः पुरुषः पशुः ।
न यत् कर्ण पथ उपेतः, जातु नाम गदाग्रजः ॥

शब्दार्थ—

श्वन्	६.	कुत्ते	न	५.	नहीं
विड्वराह	१०.	ग्राम सूकर	यत्	१.	जिसके
उष्ट्र खरैः	११.	ऊँट और गधों से भी	कर्णपथ	२.	कान के छिद्र में.
संस्तुतः	१२.	गया-बीता है	उपेतः	६.	पहुँचा
पुरुषः	७.	(वह) मनुष्य (रूपधारी)	जातु नाम	४.	कभी भी
पशुः ।	८.	पशु	गदाग्रजः ॥	३.	भगवान् श्रीकृष्ण का नाम

श्लोकार्थ—जिसके कान के छिद्र में भगवान् श्रीकृष्ण का नाम कभी भी नहीं पहुँचा, वह मनुष्य-रूपधारी पशु कुत्ते, ग्राम-सूकर, ऊँट और गधों से भी गया-बीता है ।

विंश: श्लोकः

बिले बतोरुक्रमविक्रमान् ये, न श्रृण्वतः कर्णपुटे नरस्य ।
जिह्वासती दार्दुरिकेव सूत, न चोपगायत्युरुगायगाथाः ॥ २० ॥

पदच्छेद—

बिले बत उरुक्रम विक्रमान् ये, न श्रृण्वतः कर्णपुटे नरस्य ।
जिह्वा असती दार्दुरिका इव सूत, न च उपगायति उरुगाय गाथाः ॥

शब्दार्थ—

बिले	६.	बिल (हैं)	असती	१८.	मिथ्या (है)
बत	८.	खेद है (वे)	दार्दुरिका	१६.	मेढक की जीभ के
उरुक्रम	२.	भगवान् श्रीहरि के	इव	१७.	समान
विक्रमान्	३.	लीला चरित को	सूत,	१.	हे सूत जी !
ये,	६.	जो	न	१३.	नहीं
नश्रृण्वतः	४.	नहीं सुनने वाले	च	१०.	तथा (जो)
कर्ण पुटे	७.	दोनों कान (हैं)	उपगायति	१४.	गान करती है (वह)
नरस्य ।	५.	मनुष्य के	उरुगाय	११.	भगवान् श्रीकृष्ण की
जिह्वा	१५.	जीभ	गाथाः ॥	१२.	लीलाओं का

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! भगवान् श्रीहरि के लीला-चरित को नहीं सुनने वाले मनुष्य के जो दोनों कान हैं; खेद है; वे बिल हैं तथा जो भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान नहीं करती है, वह जीभ मेढक की जीभ के समान मिथ्या है ।

एकविंशः श्लोकः

भारः परं पट्टकिरीटजुष्ट - मप्युत्तमाङ्गं न नमेन्मुकुन्दम् ।
शावौ करौ नो कुरुतः सपर्यां, हरेर्लसत्काञ्चनकङ्कणौ वा ॥२१॥

पदच्छेद— भारः परम् पट्ट किरीट जुष्टम्, अपि उत्तमाङ्गम् न नमेत् मुकुन्दम् ।
शावौ करौ नो कुरुतः सपर्याम्, हरेः लसत् काञ्चन कङ्कणौ वा ॥

शब्दार्थ—

भारः	१०.	बोझ है	शावौ	२०.	मुर्दे के (हाथ हैं)
परम्	९.	बहुत बड़ा	करौ	१५.	दोनों हाथ (यदि)
पट्ट	५.	रेशमी वस्त्र और	नो	१८.	नहीं
किरीट	६.	मुकुट से	कुरुतः	१९.	करते हैं (तब वे)
जुष्टम्,	७.	सुशोभित होने पर	सपर्याम्,	१७.	सेवा
अपि	८.	भी	हरेः	१६.	भगवान् श्रीकृष्ण की
उत्तमाङ्गम्	१.	(मनुष्य का) सिर	लसत्	१४.	भूषित
न	३.	नहीं	काञ्चन	१२.	सुवर्ण के
नमेत्	४.	झुका (तो वह)	कङ्कणौ	१३.	कंगन से
मुकुन्दम् ।	२.	भगवान् श्रीहरि के (चरणों में)	वा ॥	११.	उसी प्रकार

श्लोकार्थ—मनुष्य का सिर भगवान् श्री हरि के चरणों में नहीं झुका तो वह रेशमी वस्त्र और मुकुट से सुशोभित होने पर भी बहुत बड़ा बोझ है । उसी प्रकार सुवर्ण के कंगन से भूषित दोनों हाथ यदि भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा नहीं करते हैं, तब वे मुर्दे के हाथ हैं ।

द्वाविंशः श्लोकः

बर्हायिते ते नयने नराणां, लिङ्गानि विष्णोर्न निरीक्षतो ये ।
पादौ नृणां तौ द्रुमजन्मभाजौ, क्षेत्राणि नानुव्रजतो हरेर्यौ ॥२२॥

पदच्छेद— बर्हायिते ते नयने नराणाम् लिङ्गानि विष्णोः न निरीक्षतः ये ।
पादौ नृणाम् तौ द्रुम जन्म भाजौ, क्षेत्राणि न अनुव्रजतः हरेः यौ ॥

शब्दार्थ—

बर्हायिते	७.	मोर के पंख की आँख के समान हैं	पादौ	१३.	पैर
ते नयने	६.	वे नेत्र	नृणाम् तौ	१२.	मनुष्यों के वे दोनों
नराणाम्	५.	मनुष्यों के	द्रुम जन्मभाजौ	१४.	पेड़ के जीवन के समान हैं
लिङ्गानि	३.	स्थानों का	क्षेत्राणि	१०.	तीर्थ क्षेत्रों की
विष्णोः	२.	भगवान् विष्णु के	न अनुव्रजतः	११.	यात्रा नहीं करते
न निरीक्षतः	४.	दर्शन नहीं करते	हरेः	९.	भगवान् श्री हरि के
ये ।	१.	जो (नेत्र)	यौ ॥	८.	जो (पैर)

श्लोकार्थ—जो नेत्र भगवान् विष्णु के स्थानों का दर्शन नहीं करते, मनुष्यों के वे नेत्र मोर के पंख की आँख के समान हैं । तथा जो पैर भगवान् श्रीहरि के तीर्थक्षेत्रों की यात्रा नहीं करते, मनुष्यों के वे दोनों पैर पेड़ के जीवन के समान हैं ।

त्रयोविंशः श्लोकः

जीवञ्छवो भागवताङ्घ्रिरेणुं, न जातु मर्त्योऽभिलभेत यस्तु ।
श्रीविष्णुपद्या मनुजस्तुलस्याः, श्वसञ्छवो यस्तु न वेद गन्धम् ॥२३॥

पदच्छेद—

जीवन् शवः भागवत अङ्घ्रि रेणुम्, न जातु मर्त्यः अभिलभेत यः तु ।
श्री विष्णुपद्याः मनुजः तुलस्याः, श्वसन् शवः यः तु न वेद गन्धम् ॥

शब्दार्थ—

जीवन् शवः	७.	जीता हुआ मुर्दा (है)	श्रीविष्णुपद्याः	१२.	भगवान् विष्णु के चरणों की
भागवत	३.	भगवद्भक्तों के	मनुजः	११.	मनुष्य ने
अङ्घ्रिरेणुम्,	४.	चरणों की धूली को	तुलस्याः,	१३.	तुलसी की
न जातु	५.	कभी भी नहीं	श्वसन् शवः	१६.	साँस लेता हुआ मुर्दा है
मर्त्यः	२.	मनुष्य ने	यः	१०.	जिस
अभिलभेत	६.	लगाया (वह)	तु	९.	इसी प्रकार
यः	१.	जिस	न वेद	१५.	अनुभव नहीं किया (वह)
तु	८.	तथा	गन्धम् ॥	१४.	सुगन्ध का

श्लोकार्थ—जिस मनुष्य ने भगवद्भक्तों के चरणों की धूली को कभी भी नहीं लगाया, वह जीता हुआ मुर्दा है तथा इसी प्रकार जिस मनुष्य ने भगवान् विष्णु के चरणों की तुलसी की सुगन्ध का अनुभव नहीं किया, वह साँस लेता हुआ मुर्दा है ।

चतुर्विंशः श्लोकः

तदश्मसारं हृदयं बतेदं, यद् गृह्यमाणैर्हरिनामधेयैः ।
न विक्रियेताथ यदा विकारो, नेत्रे जलं गात्ररुहेषु हर्षः ॥२४॥

पदच्छेद—

तद् अश्मसारम् हृदयम् बत इदम्, यद् गृह्यमाणैः हरि नामधेयैः ।
न विक्रियेत अथ यदा विकारः, नेत्रे जलम् गात्ररुहेषु हर्षः ॥

शब्दार्थ—

तद्	८.	वह (हृदय)	न विक्रियेत	५.	पिघलता नहीं
अश्मसारम्	९.	इस्पात लोहा (है)	अथ	१०.	तथा
हृदयम्	२.	हृदय	यदा	११.	जब (हृदय)
बत	६.	खेद है	विकारः	१२.	पिघलता है (तब)
इदम्,	७	इस प्रकार का	नेत्रे	१३.	आँखों में
यद्	१.	जो	जलम्	१४.	आँसू और
गृह्यमाणैः	४.	कीर्तन से	गात्ररुहेषु	१५.	रोमावलियों में
हरिनामधेयैः ।	३.	भगवन्नाम	हर्षः ॥	१६.	आनन्द (छा जाता है)

श्लोकार्थ—जो हृदय भगवन्नाम-कीर्तन से पिघलता नहीं, खेद है, इस प्रकार का वह हृदय इस्पात लोहा है । तथा जब हृदय पिघलता है, तब आँखों में आँसू और रोमावलियों में आनन्द छा जाता है ।

पञ्चविंशः श्लोकः

अथाभिधेह्यङ्ग मनोऽनुकूलं, प्रभाषसे भागवतप्रधानः ।
यदाह वैयासकिरात्मविद्या—विशारदो नृपतिं साधु पृष्टः ।। २५ ।।

पदच्छेद—

अथ अभिधेहि अङ्ग मनः अनुकूलम्, प्रभाषसे भागवत प्रधानः ।
यद् आह वैयासकिः आत्म विद्या, विशारदः नृपतिम् साधु पृष्टः ।।

शब्दार्थ—

अथ	५.	अतः	यद्	१४.	जो
अभिधेहि	१६.	कहिये	आह	१५.	कहा था (उसे आप)
अङ्ग	१.	हे सूत जी ! (आप)	वैयासकिः	१०.	शुकदेव मुनि ने
मनः	२.	मन को	आत्मविद्या,	८.	अध्यात्म ज्ञान के
अनुकूलम्	३.	भाने वाली (बात)	विशारदः	९.	पण्डित
प्रभाष से	४.	कह रहे हैं	नृपतिम्	११.	राजा के
भागवत	७.	भगवद्भक्त (और)	साधु	१२.	सुन्दर
प्रधानः ।	६.	परम	पृष्टः ।	१३.	प्रश्नों पर

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! आप मन को भानेवाली बात कह रहे हैं; अतः परम भगवद्भक्त और अध्यात्म-ज्ञान के पण्डित शुकदेव मुनि ने राजा के सुन्दर प्रश्नों पर जो कहा था; उसे आप कहिये ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वितीयस्कन्धे
तृतीयः अध्यायः ।।३।।



श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीय स्कन्धः

अथ चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच—

वैयासकेरिति वचस्तत्त्वनिश्चयमात्मनः ।
उपधार्य मतिं कृष्णे औत्तरेयः सतीं व्यधात् ॥ १ ॥

पदच्छेद—

वैयासकेः इति वचः, तत्त्व निश्चयम् आत्मनः ।
उपधार्य मतिम् कृष्णे, औत्तरेयः सतीम् व्यधात् ॥

शब्दार्थ—

वैकेयासकेः	४.	शुकदेव मुनि के	उपधार्य	७.	धारण करके
इति	५.	इस	मतिम्	१०.	बुद्धि को
वचः	६.	वचन को	कृष्णे	११.	भगवान् श्रीकृष्ण में
तत्त्व	२.	भगवत्स्वरूप का	औत्तरेयः	१.	उत्तरा-पुत्र राजा परीक्षित् ने
निश्चयम्	३.	ज्ञान कराने वाले	सतीम्	९.	निर्मल
आत्मनः ।	८.	अपनी	व्यधात् ॥	१२.	लगा दिया

श्लोकार्थ—उत्तरा-पुत्र राजा परीक्षित् ने भगवत्स्वरूप का ज्ञान कराने वाले शुकदेव मुनि के इस वचन को धारण करके अपनी निर्मल बुद्धि को भगवान् श्रीकृष्ण में लगा दिया ।

द्वितीयः श्लोकः

आत्मजायासुतागारपशुद्रविणबन्धुषु ।
राज्ये चाविकले नित्यं विरूढां ममतां जहौ ॥ २ ॥

पदच्छेद—

आत्मन् जाया सुत आगार, पशु द्रविण बन्धुषु ।
राज्ये च अविकले नित्यम्, विरूढाम् ममताम् जहौ ॥

शब्दार्थ—

आत्मन्	१.	(राजा परीक्षित् ने) देह	राज्ये	१०.	राज्य में
जाया	२.	पत्नी	च	८.	और
सुत	३.	पुत्र	अविकले	९.	सम्पूर्ण
आगार	४.	घर	नित्यम्	११.	सदा
पशु	५.	पशु	विरूढाम्	१२.	लगी हुई
द्रविण	६.	धन	ममताम्	१३.	ममता को
बन्धुषु ।	७.	भाई-बन्धु	जहौ ॥	१४.	त्याग दिया

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् ने देह, पत्नी, पुत्र, घर, पशु, धन, भाई-बन्धु और सम्पूर्ण राज्य में सदा लगी हुई ममता को त्याग दिया ।

तृतीयः श्लोकः

पप्रच्छ चेममेवार्थं यन्मां पृच्छथ सत्तमाः ।
कृष्णानुभावश्रवणे श्रद्दधानो महामनाः ।।३।।

पदच्छेद—

पप्रच्छ च इमम् एव अर्थम्, यत् माम् पृच्छथ सत्तमाः ।
कृष्ण अनुभाव श्रवणे, श्रद्दधानः महामनाः ।।

शब्दार्थ—

पप्रच्छ	१०.	पूछा था	पृच्छथ	१४.	पूछ रहे हैं
च	१२.	आप लोग	सत्तमाः ।	१.	हे शौनकादि ऋषियों !
इमम्	७.	इस	कृष्ण	२.	भगवान् श्री कृष्ण की
एव	८.	ही	अनुभाव	३.	लीलाओं को
अर्थम्	९.	प्रश्न को	श्रवणे	४.	सुनने में
यत्	११.	जिसे	श्रद्दधानः	५.	श्रद्धा रखने वाले
माम्	१३.	मुझसे	महामनाः ।।	६.	मनस्वी राजा परीक्षित् ने

श्लोकार्थ—हे शौनकादि ऋषियों ! भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं को सुनने में श्रद्धा रखने वाले मनस्वी राजा परीक्षित् ने इसी प्रश्न को पूछा था, जिसे आप लोग मुझसे पूछ रहे हैं ।

चतुर्थः श्लोकः

संस्थां विज्ञाय संन्यस्य कर्म त्रैवर्गिकं च यत् ।
वासुदेवे भगवति आत्मभावं दृढं गतः ।।४।।

पदच्छेद—

संस्थाम् विज्ञाय संन्यस्य, कर्म त्रैवर्गिकम् च यत् ।
वासुदेवे भगवति, आत्म भावम् दृढम् गतः ।।

शब्दार्थ—

संस्थाम्	१.	(राजा परीक्षित् अपनी) मृत्यु को	यत्	४.	जो
विज्ञाय	२.	जानकर	वासुदेवे	९.	वासुदेव में
संन्यस्य	७.	छोड़कर	भगवति	८.	भगवान्
कर्म	६.	पुरुषार्थ हैं (उन्हें)	आत्मभावम्	११.	अनन्य भाव को
त्रैवर्गिकम्	५.	धर्म, अर्थ और काम तीनों	दृढम्	१०.	अत्यन्त
च	३.	तथा	गतः ।।	१२.	प्राप्त हो गये थे

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् अपनी मृत्यु को जानकर तथा जो धर्म, अर्थ और काम तीन पुरुषार्थ हैं, उन्हें छोड़कर भगवान वासुदेव में अत्यन्त अनन्य-भाव को प्राप्त हो गये थे ।

पञ्चमः श्लोकः

राजोवाच—

समीचीनं वचो ब्रह्मन् सर्वज्ञस्य तवानघ ।
तमो विशीर्यते मह्यं हरेः कथयतः कथाम् ।। ५ ।।

पदच्छेद—

समीचीनम् वचः ब्रह्मन्, सर्वज्ञस्य तव अनघ ।
तमः विशीर्यते मह्यम्, हरेः कथयतः कथाम् ।।

शब्दार्थ—

समीचीनम्	६. बड़ा उत्तम है	तमः	११. (मेरा) अज्ञान
वचः	५. उपदेश	विशीर्यते	१२. दूर होता जा रहा है
ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मज्ञानी	मह्यम्	७. मुझे
सर्वज्ञस्य	३. सब कुछ जानने वाले	हरेः	८. भगवान् श्रीकृष्ण की
तव	४. आपका	कथयतः	१०. सुनाते रहने से
अनघ ।	२. निष्पाप शुकदेव जी !	कथाम् ।।	९. लीलाओं को

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मज्ञानी निष्पाप शुकदेव जी ! सब कुछ जानने वाले आपका उपदेश बड़ा उत्तम है । मुझे भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं को सुनाते रहने से मेरा अज्ञान दूर होता जा रहा है ।।

षष्ठः श्लोकः

भूय एव विवित्सामि भगवानात्ममायया ।
यथेदं सृजते विश्वं दुर्विभाव्यमधीश्वरैः ।।६।।

पदच्छेद—

भूयः एव विवित्सामि, भगवान् आत्म मायया ।
यथा इदम् सृजते विश्वम्, दुर्विभाव्यम् अधीश्वरैः ।।

शब्दार्थ—

भूयः	१०. फिर	यथा	४. जिस प्रकार
एव	११. (उसे) ही (मैं)	इदम्	५. इस
विवित्सामि	१२. जानना चाहता हूँ	सृजते	७. रचते हैं (जिसे)
भगवान्	१. भगवान	विश्वम्	६. ब्रह्माण्ड को
आत्म	२. अपनी	दुर्विभाव्यम्	९. नहीं जान सकते
मायया ।	३. माया से	अधीश्वरैः ।।	८. ब्रह्मादि लोकपाल (भी)

श्लोकार्थ—भगवान् अपनी माया से जिस प्रकार इस ब्रह्माण्ड को रचते हैं, जिसे ब्रह्मादि लोकपाल भी नहीं जान सकते; फिर उसे ही मैं जानना चाहता हूँ ।।

सप्तमः श्लोकः

यथा गोपायति विभुर्यथा संयच्छते पुनः ।
यां यां शक्तिमुपाश्रित्य पुरुशक्तिः परः पुमान् ।
आत्मानं क्रीडयन् क्रीडन् करोति विकरोति च ।। ७ ।।

पदच्छेद—

यथा गोपायति विभुः यथा संयच्छते पुनः ।
याम् याम् शक्तिम् उपाश्रित्य पुरु शक्तिः परः पुमान् ।
आत्मामम् क्रीडयन् क्रीडन् करोति विकरोति च ।।

शब्दार्थ—

यथा	५.	जिस प्रकार (जगत् की)	पुरु शक्तिः	१.	महान् शक्तिशाली
गोपायति	६.	रक्षा करते हैं	परः	३.	परात्पर
विभुः	२.	व्यापक (एवम्)	पुमान् ।	४.	परमात्मा
यथा	७.	जिस प्रकार	आत्मानम्	१३.	अपने को
संयच्छते	८.	संहार करते हैं	क्रीडयन्	१४.	खिलौना बनाकर
पुनः ।	९.	फिर से	क्रीडन्	१५.	खेलते हुए
याम् याम्	१०.	जिस-जिस	करोति	१६.	सृष्टि करते हैं
शक्तिम्	११.	शक्ति के	विकरोति	१८.	संहार करते हैं (उसे बतावें)
उपाश्रित्य	१२.	सहारे	च ।।	१७.	तथा

श्लोकार्थ—महान् शक्तिशाली, व्यापक एवं परात्पर परमात्मा जिस प्रकार जगत् की रक्षा करते हैं, जिस प्रकार संहार करते हैं, फिर से जिस-जिस शक्ति के सहारे अपने को खिलौना बनाकर खेलते हुए सृष्टि करते हैं तथा संहार करते हैं, उसे बतावें ।

अष्टमः श्लोकः

नूनं भगवतो ब्रह्मन् हरेद्भुतकर्मणः ।
दुर्विभाव्यमिवाभाति कविभिश्चापि चेष्टितम् ।। ८ ।।

पदच्छेद—

नूनम् भगवतः ब्रह्मन्, हरेः अद्भुत कर्मणः ।
दुर्विभाव्यम् इव आभाति, कविभि, च अपि चेष्टितम्: ।।

शब्दार्थ—

नूनम्	७.	निश्चय ही	दुर्भाव्यम्	१०.	कठिनाई से जानने योग्य की
भगवतः	४.	भगवान्	इव	११.	भाँति
ब्रह्मन्	१.	हे शुकदेव जी !	आभाति	१२.	प्रतीत होती हैं
हरेः	५.	श्रीकृष्ण की	कविभिः	८.	विद्वानों के द्वारा
अद्भुत	२.	अलौकिक	च अपि	९.	भी
कर्मणः ।	३.	लीलाधारी	चेष्टितम् ।।	६.	लीलायें

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! अलौकिक लीलाधारी भगवान् श्रीकृष्ण की लीलायें निश्चय ही विद्वानों के द्वारा भी कठिनाई से जानने योग्य की भाँति प्रतीत होती हैं ।

नवमः श्लोकः

यथा गुणांस्तु प्रकृतेर्युगपत् क्रमशोऽपि वा ।
बिभर्त्ति भूरिशस्त्वेकः कुर्वन् कर्माणि जन्मभिः ।।९।।

पदच्छेद—

यथा गुणान् तु प्रकृतेः, युगपत् क्रमशः अपि वा ।
बिभर्ति भूरिशः तु एकः, कुर्वन् कर्माणि जन्मभिः ।।

शब्दार्थ—

यथा	१३.	किस प्रकार	बिभर्ति	१४.	धारण करते हैं
गुणान्	९.	गुणों को	भूरिशः	३.	अनेक
तु	१.	हे शुकदेव जी !	तु	७.	ही
प्रकृतेः	८.	प्रकृति के	एकः	६.	अकेले
युगपत्	१०.	एक साथ	कुर्वन्	५.	करते हुए (भगवान्)
क्रमशः	१२.	एक-एक करके	कर्माणि	४.	लीलाओं को
अपिवा ।	११.	अथवा	जन्मभिः ।।	२.	अवतारों के द्वारा

श्लोकार्थ—हे शुकदेव जी ! अवतारों के द्वारा अनेक लीलाओं को करते हुए भगवान् अकेले ही प्रकृति के गुणों को एक साथ अथवा एक-एक करके किस प्रकार धारण करते हैं ?

दशमः श्लोकः

विचिकित्सितमेतन्मे ब्रवीतु भगवान् यथा ।
शाब्दे ब्रह्मणि निष्णातः परस्मिश्च भवान्खलु ।।१०।।

पदच्छेद—

विचिकित्सितम् एतद् मे, ब्रवीतु भगवान् यथा ।
शाब्दे ब्रह्मणि निष्णातः, परस्मिन् च भवान् खलु ।।

शब्दार्थ—

विचिकित्सितम्	१०.	सन्देह को	शाब्दे ब्रह्मणि	४.	शब्द ब्रह्म को
एतद्	९.	इस	निष्णातः	७.	जानने वाले हैं (अतः)
मे	८.	मेरे	परस्मिन्	६.	परब्रह्म को
ब्रवीतु	१२.	दूर करें	च	५.	और
भगवान्	१.	हे मुनिवर !	भवान्	२.	आप
यथा ।	११.	भलीभाँति	खलु ।।	३.	निश्चय ही

श्लोकार्थ—हे मुनिवर ! आप निश्चय ही शब्द-ब्रह्म को और परब्रह्म को जानने वाले हैं; अतः मेरे इस सन्देह को भलीभाँति दूर करें ।

एकादश: श्लोक:

सूत उवाच—

इत्युपामन्त्रितो राज्ञा गुणानुकथने हरेः ।
हृषीकेशमनुस्मृत्य प्रतिवक्तुं प्रचक्रमे ।।११।।

पदच्छेद— इति उपामन्त्रितः राज्ञा, गुण अनुकथने हरेः ।
हृषीकेशम् अनुस्मृत्य, प्रतिवक्तुम् प्रचक्रमे ।।

शब्दार्थ—

इति	५. इस प्रकार	हरेः ।	२. भगवान् श्रीकृष्ण के
उपामन्त्रितः	६. निवेदन करने पर (शुकदेव जी)	हृषीकेशम्	७. इन्द्रियाधीश श्रीकृष्ण का
राज्ञा	१. राजा परीक्षित् के द्वारा	अनुस्मृत्य	८. स्मरण करके
गुण	३. गुणों को	प्रतिवक्तुम्	९. कहना
अनुकथने	४. कहने के लिए	प्रचक्रमे ।।	१०. प्रारम्भ किया

श्लोकार्थ—राजा परीक्षित् के द्वारा भगवान् श्रीकृष्ण के गुणों को कहने के लिए इस प्रकार निवेदन करने पर शुकदेव जी ने इन्द्रियाधीश भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण करके कहना प्रारम्भ किया ।

द्वादश: श्लोक:

श्रीशुक उवाच—

नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे, सदुद्भवस्थाननिरोधलीलया ।
गृहीतशक्तित्रितयाय देहिना—मन्तर्भवायानुपलक्ष्यवर्त्मने ।।१२।।

पदच्छेद— नमः परस्मै पुरुषाय भूयसे, सद् उद्भव स्थान निरोध लीलया ।
गृहीत शक्ति त्रितयाय देहिनाम्, अन्तः भवाय अनुपलक्ष्य वर्त्मने ।।

शब्दार्थ—

नमः	१६. प्रणाम है	गृहीत	१२. धारण करने वाले
परस्मै	१३. परात्पर	शक्ति	११. शक्तियों को
पुरुषाय	१४. परब्रह्म को	त्रितयाय	१०. सत्त्व, रजस् और तमस्
भूयसे,	१५. बार-बार	देहिनाम्,	१. प्राणियों के
सद् उद्भव	६. जगत् की उत्पत्ति	अन्तः	२. अन्तःकरण में
स्थान	७. स्थिति और	भवाय	३. रहने वाले
निरोध	८. प्रलय की	अनुपलक्ष्य	४. अज्ञात
लीलया ।	९. लीला करने वाले	वर्त्मने ।।	५. स्वरूप वाले

श्लोकार्थ—प्राणियों के अन्तःकरण में रहने वाले, अज्ञात स्वरूप वाले; जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की लीला करने वाले; सत्त्व, रजस् और तमस् शक्तियों को धारण करने वाले परात्पर परब्रह्म को बार-बार प्रणाम है ।

त्रयोदशः श्लोकः

भूयो नमः सद्वृजिनच्छिदेऽसता-मसम्भवायाखिलसत्त्वमूर्तये ।
पुंसां पुनः पारमहंस्य आश्रमे, व्यवस्थितानामनुमृग्यदाशुषे ॥१३॥

पदच्छेद— भूयः नमः सद् वृजिन छिदे असताम्, असम्भवाय अखिल सत्त्व मूर्तये ।
पुंसाम् पुनः पारमहंस्ये आश्रमे, व्यवस्थितानाम् अनुमृग्य दाशुषे ॥

शब्दार्थ—

भूयः नमः	१६.	बार-बार प्रणाम है	मूर्तये ।	८.	रूपों में स्थित
सद्	१.	सज्जनों के	पुंसाम्	१३.	मनुष्यों के
वृजिन	२.	दुःख को	पुनः	९.	तथा
छिदे	३.	दूर करने वाले	पारमहंस्ये	१०.	परमहंस
असताम्,	४.	दुष्टों की	आश्रमे,	११.	आश्रम में
असम्भवाय	५.	उत्पत्ति को रोकने वाले	व्यवस्थितानाम्	१२.	रहने वाले
अखिल	६.	सम्पूर्ण	अनुमृग्य	१४.	मनोरथों को
सत्त्व	७.	प्राणियों के	दाशुषे ॥	१५.	पूर्ण करनेवाले (परमात्मा) को

श्लोकार्थ—सज्जनों के दुःख को दूर करने वाले, दुष्टों की उत्पत्ति को रोकने वाले, सम्पूर्ण प्राणियों के रूप में स्थित तथा परमहंस आश्रम में रहने वाले मनुष्यों के मनोरथों को पूर्ण करने वाले परमातमा को बार-बार प्रणाम है ।

चतुर्दशः श्लोकः

नमो नमस्तेऽस्त्वृषभाय सात्वतां, विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा, स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥१४॥

पदच्छेद— नमः नमः ते अस्तु ऋषभाय सात्वताम्, विदूर काष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।
निरस्त साम्य अतिशयेन राधसा, स्व धामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥

शब्दार्थ—

नमः	८.	बार-बार	कुयोगिनाम् ।	३.	भक्तिहीन हठयोगियों से
नमः	९.	प्रणाम	निरस्त	१४.	रहित (आप)
ते	७.	आपको	साम्य	१३.	(अपनी) बराबरी से
अस्तु	१०.	है	अतिशयेन	११.	बहुत अधिक
ऋषभाय	२.	वतसल (एवं)	राधसा,	१२.	तेज के कारण
सात्वताम्,	१.	भक्तों के	स्व धामनि	१६.	अपने धाम में
विदूर	५.	दूर	ब्रह्मणि	१५.	ब्रह्मस्वरूप
काष्ठाय	६.	रहने वाले	रंस्यते	१७.	विहार करते हैं (अतः आपको)
मुहुः	४.	बहुत	नमः ॥	१८.	प्रणाम है

श्लोकार्थ—भक्तों के वत्सल एवं भक्तिहीन हठयोगियों से बहुत दूर रहने वाले आपको बार-बार प्रणाम है । बहुत अधिक तेज के कारण अपनी बराबरी से रहित आप ब्रह्म-स्वरूप अपने धाम में विहार करते हैं; अतः आपको प्रणाम है ।

पञ्चदशः श्लोकः

यत्कीर्तनं यत्स्मरणं यदीक्षणं, यद्वन्दनं यच्छ्रवणं यदर्हणम् ।
लोकस्य सद्यो विधुनोति कल्मषं, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ।।१५।।

पदच्छेद— यद कीर्तनम् यद् स्मरणम् यद् ईक्षणम्, यद वन्दनम् यद् श्रवणम् यद् अर्हणम् ।
लोकस्य सद्यः विधुनोति कल्मषम्, तस्मै सुभद्र श्रवसे नमः नमः ।।

शब्दार्थ—

यद् कीर्तनम्	१.	जिनका कीर्तन	सद्यः	९.	तत्काल
यद् स्मरणम्	२.	जिनका स्मरण	विधुनोति	१०	नष्ट कर देता है
यद् ईक्षणम्,	३.	जिनका दर्शन	कल्मषम्,	८.	पापों को
यद् वन्दनम्	४.	जिनका वन्दन	तस्मै	११.	उन
यद् श्रवणम्	५.	जिनका श्रवण (और)	सुभद्र	१२.	पुण्य
यद् अर्हणम् ।	६.	जिनका पूजन	श्रवसे	१३.	कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण को
लोकस्य	७.	जीवों के	नमः नमः ।।	१४.	बार-बार नमस्कार है

श्लोकार्थ—जिनका कीर्तन, जिनका स्मरण, जिनका दर्शन, जिनका वन्दन, जिनका श्रवण और जिनका पूजन जीवों के पापों को तत्काल नष्ट कर देता है; उन पुण्य कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार नमस्कार है ।

षोडशः श्लोकः

विचक्षणा यच्चरणोपसादनात्, सङ्गं व्युदस्योभयतोऽन्तरात्मनः ।
विन्दन्ति हि ब्रह्मगतिं गतक्लमा-स्तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ।।१६।।

पदच्छेद— विचक्षणाः यद् चरण उपसादनात्, सङ्गम् व्युदस्य, उभयतः अन्तरात्मनः ।
विन्दन्ति हि ब्रह्म गतिम् गत क्लमाः, तस्मै सुभद्रश्रवसे नमः नमः ।।

शब्दार्थ—

विचक्षणाः	१.	विद्वान् लोग	हि	११.	ही
यद्	२.	जिन (भगवान्) के	ब्रह्म	१२.	ब्रह्म
चरण	३.	चरणों की	गतिम्	१३.	लोक को
उपसादनात्,	४.	सन्निधि पाने के बाद	गत	१०.	विना
सङ्गम्	७.	आसक्ति को	क्लमाः,	९.	परिश्रम के
व्युदस्य	८.	समाप्त करके	तस्मै	१५.	उन
उभयतः	६.	इस लोक और परलोक की	सुभद्र	१६.	मंगलमय
अन्तरात्मनः ।	५.	शुद्ध हृदय से	श्रवसे	१७.	कीर्ति वाले भगवान श्रीकृष्णको
विन्दन्ति	१४.	प्राप्त करते हैं	नमः नमः ।।	१८.	बार-बार प्रणाम है

श्लोकार्थ—विद्वान् लोग जिन भगवान् के चरणों की सन्निधि पाने के बाद शुद्ध हृदय से इस लोक और परलोक की आसक्ति को समाप्त करके परिश्रम के विना ही ब्रह्म लोक को प्राप्त करते हैं; उन मंगलमय कीर्ति वाले भगवान् श्रीकृष्ण को बार-बार प्रणाम है ।

सप्तदशः श्लोकः

ज्ञानविज्ञानयोगेन कर्मणामुद्धरञ्जटाः ।
हिरण्यकेशः पद्माक्षः पद्ममुद्रापदाम्बुजः ॥१७॥

पदच्छेद—

ज्ञान विज्ञान योगेन कर्मणाम् उद्धरन् जटाः ।
हिरण्यकेशः पद्मअक्षः पद्ममुद्रा पद अम्बुजः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान	१.	वे तत्त्व ज्ञान (और)	हिरण्यकेशः	७.	उनके सुनहरे बाल हैं
विज्ञान	२.	अध्यात्म ज्ञान के	पद्मअक्ष	८.	कमल के समान विशाल नेत्र हैं और
योगेन	३.	प्रभाव से	पद्ममुद्रा,	११.	कमल के चिह्न से अंकित हैं
कर्मणाम्	४.	कर्मों की	पद	९.	उनके चरण
उद्धरन्	६.	विनाश करते हैं	अम्बुजः ॥	१०.	कमल
जटाः ।	५.	जड़ का			

श्लोकार्थ—वे तत्त्व-ज्ञान और अध्यात्म-ज्ञान के प्रभाव से कर्मों की जड़ का विनाश करते हैं। उनके सुनहरे बाल हैं। कमल के समान विशाल नेत्र हैं और उनके चरण कमल, कमल के चिह्न से अंकित हैं ॥

अष्टदशः श्लोकः

एष मानवि ते गर्भं प्रविष्टः कैटभार्दनः ।
अविद्यासंशयग्रन्थिं छित्त्वा गां विचरिष्यति ॥१८॥

पदच्छेद—

एषः मानवि गर्भम् प्रविष्टः कैटभ अर्दनः ।
अविद्या संशय ग्रन्थिम् छित्त्वा गाम् विचरिष्यति ॥

शब्दार्थ—

एषः	७.	ये	अविद्या	८.	अज्ञान से उत्पन्न
मानवि	१.	हे राजकुमारी !	संशय	९.	मोह के
ते	४.	तुम्हारे	ग्रन्थिम्	१०.	बन्धन को
गर्भम्	५.	गर्भ में	छित्त्वा	११.	काट कर
प्रविष्टः	६.	प्रवेश किये हैं	गाम्	१२.	पृथ्वी पर
कैटभ	२.	कैटभासुर को	विचरिष्यति ॥	१३.	विचरण करेंगे
अर्दनः ।	३.	मारने वाले (भगवान् श्री हरि)			

श्लोकार्थ—हे राजकुमारी ! कैटभासुर को मारने वाले भगवान् श्री हरि तुम्हारे गर्भ में प्रवेश किये हैं। वे अज्ञान से उत्पन्न मोह के बन्धन को काट कर पृथ्वी पर विचरण करेंगे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अयं सिद्धगणाधीशः साङ्ख्याचार्यैः सुसम्मतः ।
लोके कपिल इत्याख्यां गन्ता ते कीर्तिवर्धनः ॥१९॥

पदच्छेद—

अयम् सिद्धगण अधीशः साङ्ख्याचार्यैः सुसम्मतः ।
लोके कपिलः इति आख्याम् गन्ता ते कीर्तिवर्धनः ॥

शब्दार्थ—

अयम्	१.	ये	कपिलः	७.	कपिल
सिद्धगण	२.	सिद्धगणों के	इति	८.	इस
अधीशः	३.	स्वामी है	आख्याम्	९.	नाम
साङ्ख्याचार्यैः	४.	सांख्य शास्त्र के आचार्यों से	गन्ता	१०.	प्रसिद्ध होंगे
सुसम्मतः ।	५.	मान्य (और)	ते	११.	(तथा) तुम्हारे
लोके	६.	संसार में	कीर्तिवर्धनः ॥	१२.	यश को बढ़ायेंगे

श्लोकार्थ—ये सिद्ध गणों के स्वामी हैं सांख्य शास्त्र के आचार्यों से मान्य और संसार में 'कपिल' इस नाम से प्रसिद्ध होंगे तथा तुम्हारे यश को बढ़ायेंगे ॥

त्रिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—तावाश्वास्य जगत्स्रष्टा कुमारैः सहनारदः ।
हंसो हंसेन यानेन त्रिधामपरमं ययौ ॥२०॥

पदच्छेद—

तौ आश्वास्य जगत् स्रष्टा कुमारैः सह नारदः ।
हंस हंसेन यानेन त्रिधाम परमम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

तौ	४.	उन दोनों को	हंस	३.	ब्रह्मा जी
आश्वास्य	५.	आश्वासन देकर	हंसेन	१०.	हंसे से
जगत्	१.	संसार को	यानेन	९.	अपने वाहन
स्रष्टा	२.	बनाने वाले	त्रिधाम	१२.	ब्रह्म लोक को
कुमारैः	६.	सनकादि कुमारों (और)	परमम्	११.	उत्तम
सह	८.	साथ	ययौ ॥	१३.	चले गये
नारदः ।	७.	देवर्षि नारद के			

श्लोकार्थ—संसार को बनाने वाले ब्रह्मा जी उन दोनों को आश्वासन देकर सनकादि कुमारों और देवर्षि नारद के साथ अपने वाहन हंस से उत्तम ब्रह्मलोक को चले गये ॥

एकविंशः श्लोकः

गते शतधृतौ क्षत्तः कर्दमस्तेन चोदितः ।
यथोदितं स्वदुहितॄः प्रादाद्विश्वसृजां ततः ॥२१॥

पदच्छेद—

गते शतधृतौ क्षत्तः कर्दमः तेन चोदितः ।
यथा उदितम् स्वदुहितॄः प्रादात् विश्वसृजाम् ततः ॥

शब्दार्थ—

गते	३.	चले जाने पर	यथा	९.	अनुसार
शतधृतौ	२.	ब्रह्मा जी के	उदितम्	८.	उनके कथन के
क्षत्तः	१.	हे विदुर जी !	स्वदुहितॄः	११.	अपनी कन्याओं
कर्दमः	५.	कर्दम जी ने	प्रादात्	१२.	विधि पूर्वक विवाह किया
तेन	६.	उनसे	विश्वसृजाम्	१०.	मरीचि इत्यादि प्रजापतियों के साथ
चोदितः ।	७.	प्रेरणा पाकर	ततः ॥	४.	तदनन्तर

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! ब्रह्मा जी के चले जाने पर तदनन्तर कर्दम जी ने उनसे प्रेरणा पाकर उनके कथन के अनुसार मरीचि इत्यादि प्रजापतियों के साथ अपनी कन्याओं का विधि पूर्वक विवाह किया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

मरीचये कलां प्रादादनसूयामथात्रये ।
श्रद्धामङ्गिरसेऽयच्छत्पुलस्त्याय हविर्भुवम् ॥२२॥

पदच्छेद—

मरीचये कलाम् प्रादात् अनुसूयाम् अथ अत्रये ।
श्रद्धाम् अङ्गिरसे अयच्छत् पुलस्त्याय हविर्भुवम् ॥

शब्दार्थ—

मरीचये	१.	उन्होंने मरीचि ऋषि को	श्रद्धाम्	८.	श्रद्धा और
कलाम्	२.	कला नाम की पुत्री का	अङ्गिरसे	७.	अङ्गिरा ऋषि को
प्रादात्	६.	विवाह किया	अयच्छत्	११.	प्रदान की
अनुसूयाम्	५.	अनुसूया का	पुलस्त्याय	९.	पुलस्त्य ऋषि को
अथ	३.	और	हविर्भुवम् ॥	१०.	हविर्भू नाम की कन्या
अत्रये ।	४.	अत्रि से			

श्लोकार्थ—उन्होंने मरीचि ऋषि को कला नाम की पुत्री का और अत्रि से अनुसूया का विवाह किया । अङ्गिरा ऋषि को श्रद्धा और पुलस्त्य ऋषि को हविर्भू नाम की कन्या प्रदान की ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पुलहाय गतिं युक्तां क्रतवे च क्रियां सतीम् ।
ख्यातिं च भृगवेऽयच्छद्वसिष्ठायाप्यरुन्धतीम् ॥२३॥

पदच्छेद—

पुलहाय गतिम् युक्ताम् क्रतवे च क्रियाम् सतीम् ।
ख्याति च भृगवे अयच्छत् वशिष्ठाय अपि अरुंधतीम् ॥

शब्दार्थ—

पुलहाय	१. उन्होंने पुलह ऋषि को	ख्याति	१०. ख्याति नाम की कन्या
गतिम	३. गति नाम की कन्या	च	८. तथा
युक्ताम्	२. उनके अनुरूप	भृगवे	९. भृगु ऋषि को
क्रतवे	५. क्रतु ऋषि को	अयच्छत्	१४. प्रदान की
च	४. और	वसिष्ठाय	१२. वसिष्ठ जी को
क्रियाम्	७. क्रिया नाम की कन्या	अपि	११. एवम्
सतीम् ।	६. परम साध्वी	अरुंधतीम् ॥	१३. अरुन्धती नाम की कन्या

श्लोकार्थ—उन्होंने पुलह ऋषि को उनके अनुरूप गति नाम की कन्या और क्रतु ऋषि को परम साध्वी क्रिया नाम की कन्या तथा भृगु ऋषि को ख्याति नाम की कन्या एवम् वसिष्ठ जी को अरुन्धती नाम की कन्या प्रदान की ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अथर्वणेऽददाच्छान्तिं यया यज्ञो वितन्यते ।
विप्रर्षभान् कृतोद्वाहान् सदारान् समलालयत् ॥२४॥

पदच्छेद—

अथर्वणे अददात् शान्तिम् यथा यज्ञः वितन्यते ।
विप्र ऋषभान् कृत उद्वाहान् सदारान् समलालयत् ॥

शब्दार्थ—

अथर्वणे	१. उन्होंने अथर्वा ऋषि को	विप्र	१०. ऋषियों का (उनकी)
अददात्	३. प्रदान की	ऋषभान्	९. उन श्रेष्ठ
शान्तिम्	२. शान्ति नाम की कन्या	कृत	८. करने के बाद
यथा	४. जिससे	उद्वाहान्	७. विवाह संस्कार
यज्ञः	५. यज्ञ कर्म का	सदारान्	११. पत्नियों के साथ
वितन्यते ।	६. विस्तार किया जाता है (अतः)	समलालयत् ॥	१२. खूब सत्कार किया

श्लोकार्थ—उन्होंने अथर्वा ऋषि को शान्ति नाम की कन्या प्रदान की । जिससे यज्ञ कर्म का विस्तार किया जाता है । अतः विवाह संस्कार करने के बाद उन श्रेष्ठ ऋषियों का उनकी पत्नियों के साथ खूब सत्कार किया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ततस्त ऋषयः क्षत्तः कृतदारा निमन्त्र्य तम् ।
प्रातिष्ठन्नन्दिमापन्नाः स्वं स्वमाश्रममण्डलम् ॥२५॥

पदच्छेद—

ततः ते ऋषयः क्षत्तः कृत दाराः निमन्त्र्य तम् ।
प्रातिष्ठन् नन्द्रिम् आपन्नाः स्वम्-स्वम् आश्रम मण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	तदनन्तर	तम्	७.	उन कर्दम जी से
ते	५.	वे	प्रातिष्ठन्	१४.	चले गये
ऋषयः	६.	मुनिगण	नन्दिम्	९.	आनन्द
क्षत्तः	१.	हे विदुर जी !	आपन्नाः	१०.	पूर्वक
कृत	४.	सम्पन्न	स्वम्-स्वम्	११.	अपने-अपने
दाराः	३.	विवाह संस्कार से	आश्रम	१२.	आश्रम
निमन्त्र्य	८.	आज्ञा लेकर	मण्डलम् ॥	१३.	स्थान को

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! तदनन्तर विवाह संस्कार से सम्पन्न वे मुनिगण उन कर्दम जी से आज्ञा लेकर आनन्द पूर्वक अपने-अपने आश्रम स्थान को चले गये ॥

षट्विंशः श्लोकः

स चावतीर्णं त्रियुगमाज्ञाय विबुधर्षभम् ।
विविक्त उपसङ्गम्य प्रणम्य समभाषत ॥२६॥

पदच्छेद—

सः च अवतीर्णम् त्रियुगम् आज्ञाय विबुध ऋषभम् ।
विविक्ते उपसङ्गम्य प्रणम्य समभाषत ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वे कर्दम जी	ऋषभम्	४.	अधिदेव
च	१.	तदन्तर	विविक्ते	८.	एकान्त में
अवतीर्णम्	६.	अवतार लिया	उपसङ्गम्य	९.	उनके पास गये (और)
त्रियुगम्	५.	भगवान् श्री हरि को	प्रणम्य	१०.	प्रणाम करके
आज्ञाय	७.	जानकर	समभाषत ॥	११.	बोले
विबुध	३.	देवों के			

श्लोकार्थ—तदनन्तर वे कर्दम जी देवों के अधिदेव भगवान् श्री हरि को अवतार लिया जान कर एकान्त में उनके पास गये और प्रणाम करके बोले ॥

सप्तविंशः श्लोकः

अहो पापच्यमानानां निरये स्वैरमङ्गलैः ।
कालेन भूयसा नूनं प्रसीदन्तीह देवताः ॥२७॥

पदच्छेद—

अहो पापच्यमानानाम् निरये स्वैः अमङ्गलैः ।
कालेन भूयसा नूनम् प्रसीदन्ति इह देवताः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	आश्चर्य है (कि)	कालेन	९.	समय के बाद
पापच्यमानानाम्	६.	कष्टों से पीड़ित होने वाले	भूयसा	८.	बहुत
निरये	३.	दुःखमय संसार में	नूनम्	१०.	ही
स्वैः	४.	अपने	प्रसीदन्ति	११.	प्रसन्न होते हैं
अमङ्गलैः ।	५.	पापों के	इह	२.	इस
			देवताः ॥	७.	मनुष्यों पर देवगण

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि इस दुःखमय संसार में अपने पापों के कष्टों से पीड़ित होने वाले मनुष्यों पर देवगण बहुत समय के बाद ही प्रसन्न होते हैं ॥

अष्टविंशः श्लोकः

बहुजन्मविपक्वेन सम्यग्योगसमाधिना ।
द्रष्टुं यतन्ते यतयः शून्यागारेषु यत्पदम् ॥२८॥

पदच्छेद—

बहु जन्म विपक्वेन सम्यग् योग समाधिना ।
द्रष्टुम् यतन्ते यतयः शून्यआगारेषु यत् पदम् ॥

शब्दार्थ—

बहु	२.	बहुत	द्रष्टुम्	१०.	देखने का
जन्म	३.	जन्मों की	यतन्ते	११.	प्रयास करते हैं
विपक्वेन	४.	सिद्धियों के बाद	यतयः	१.	योगिजन
सम्यग्	५.	भली-भाँति	शून्यआगारेषु	७.	एकान्त स्थान में
योग	६.	योग	यत्	८.	जिनके
समाधिना ।	७.	समाधि के द्वारा	पदम् ॥	९.	चरण कमल को

श्लोकार्थ—योगिजन बहुत जन्मों की सिद्धियों के बाद भली-भाँति योग समाधि के द्वारा जिनके चरण कमल को देखने का प्रयास करते हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

स एव भगवानद्य हेलनं नगणय्य नः ।
गृहेषु जातो ग्राम्याणां यः स्वानां पक्षपोषणः ॥२९॥

पदच्छेद—

स: एव भगवान् अद्य हेलनम् नगणय्य नः ।
गृहेषु जातः ग्राम्याणाम् यः स्वानाम् पक्षपोषणः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे	नः ।	९.	हम लोगों के द्वारा किये गये
एव	२.	ही	गृहेषु	१२.	हमारे घर में
भगवान्	३.	भगवान् श्री हरि	जातः	१३.	अवतार लिये हैं
अद्य	७.	आज	ग्राम्याणाम्	८.	विषय लोलुप
हेलनम्	१०.	अपमान का	यः	४.	जो
नगणय्य	११.	विचार न करके	स्वानाम्	५.	अपने भक्तों की
			पक्षपोषणः ॥	६.	रक्षा करते हैं

श्लोकार्थ—वे ही भगवान् श्री हरि जो अपने भक्तों की रक्षा करते हैं आज विषय लोलुप हम लोगों के द्वारा किये गये अपमान का विचार न करके हमारे घर में अवतार लिये हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

स्वीयं वाक्यमृतं कर्तुमवतीर्णोऽसि मे गृहे ।
चिकीर्षुर्भगवान् ज्ञानं भक्तानां मानवर्धनः ॥३०॥

पदच्छेद—

स्वीयम् वाक्यम् ऋतम् कर्तुम् अवतीर्णः असि मे गृहे ।
चिकीर्षुः भगवान् ज्ञानम् भक्तानाम् मानवर्धनः ॥

शब्दार्थ—

स्वीयम्	४.	अपने	मे गृहे ।	१०.	मेरे घर में
वाक्य	५.	वचन को	चिकीर्षुः	९.	करने की इच्छा से ही
ऋतम्	६.	सत्य	भगवान्	३.	हे भगवन् ! आप
कर्तुम्	७.	करने के लिये (तथा)	ज्ञानम्	८.	सांख्य शास्त्र का उपदेश
अवतीर्णः	११.	अवतार	भक्तानाम्	१.	भक्तों का
असि	१२.	लिये हैं	मानवर्धनः ॥	२.	सम्मान बढ़ाने वाले

श्लोकार्थ—भक्तों का सम्मान बढ़ाने वाले हे भगवन् ! आप अपने वचन को सत्य करने के लिये तथा सांख्य शास्त्र का उपदेश करने की इच्छा से ही मेरे घर में अवतार लिये हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तान्येव तेऽभिरूपाणि रूपाणि भगवंस्तव ।
यानि यानि च रोचन्ते स्वजनानामरूपिणः ॥३१॥

पदच्छेद—

तानि एव ते अभिरूपाणि रूपाणि भगवन् तव ।
यानि यानि च रोचन्ते स्व जनानाम् अरूपिणः ॥

शब्दार्थ—

तानि	१०. वे		यानि	४. जिन
एव	११. ही		यानि	५. जिन
ते	१३. आपके		च	६. रूपों को
अभिरूपाणि	१४. योग्य हैं		रोचन्ते	९. पसन्द करते हैं
रूपाणि	१२. स्वरूप		स्व	७. आपके
भगवन्	१. हे भगवन् !		जनानाम्	८. भक्त जन
तव ।	३. आपके		अरूपिणः ॥	२. रूप रहित

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! रूप रहित आपके जिन-जिन रूपों को आपके भक्त जन पसन्द करते हैं । वे ही स्वरूप आपके योग्य हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

त्वां सूरिभिस्तत्त्वबुभुत्सयाद्धा सदाभिवादार्हणपादपीठम् ।
ऐश्वर्यवैराग्ययशोऽवबोधवीर्यश्रिया पूर्त्तमहं प्रपद्ये ॥३२॥

पदच्छेद—

त्वाम् सूरिभिः तत्त्व बुभुत्सया अद्धा सदा अभिवाद अर्हण पादपीठम् ।
ऐश्वर्य वैराग्य यशः अवबोध वीर्य श्रिया पूर्त्तम् अहम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

त्वाम्	१७. आप की	ऐश्वर्य	९. आप ऐश्वर्य
सूरिभिः	५. विद्वानों के द्वारा	वैराग्य	१०. वैराग्य
तत्त्व	३. तत्त्व को	यशः	११. यश
बुभुत्सया	४. जानने की इच्छा	अवबोध	१२. ज्ञान
अद्धा	१. हे भगवन् ! आपके	वीर्य।	१३. पराक्रम (और)
सदा	६. सर्वदा	श्रिया	१४. शोभा से
अभिवाद	७. पूजन के	पूर्त्तम्	१५. परिपूर्ण हैं
अर्हण	८. योग्य हैं	अहम्	१६. मैं
पादपीठम् ।	२. चरणों की चौकी	प्रपद्ये ॥	१८. शरण में हूँ ॥

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपके चरणों की चौकी तत्त्व को जानने की इच्छा से विद्वानों के द्वारा सर्वदा पूजन के योग्य हैं । आप ऐश्वर्य, वैराग्य, यश, ज्ञान, पराक्रम और शोभा से परिपूर्ण हैं । मैं आपकी शरण में हूँ ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

परं प्रधानं पुरुषं महान्तं कालं कविं त्रिवृतं लोकपालम् ।
आत्मानुभूत्यानुगतप्रपञ्चं स्वच्छन्दशक्तिं कपिलं प्रपद्ये ॥३३॥

पदच्छेद— **परम् प्रधानम् पुरुषम् महान्तम् कालम् कविम् त्रिवृतम् लोक पालम् ।**
आत्म अनुभूत्या अनुगत प्रपञ्चम् स्वच्छन्द शक्तिम् कपिलम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

परम् प्रधानम्	१.	(आप) पर-ब्रह्म-प्रकृति	आत्म	९.	आप अपने
पुरुषम्	२.	पुरुष	अनुभूत्या	१०.	ज्ञान से
महान्तम्	३.	महत्तत्व	अनुगत	१२.	व्याप्त हैं
कालम्	४.	काल	प्रपञ्चम्	११.	समस्त विश्व में
कविम्	६.	अहंकार	स्वच्छन्द	१४.	आपके अधीन हैं (अतः मैं)
त्रिवृतम्	५.	त्रिविध	शक्तिम्	१३.	सारी शक्तियाँ
लोक	७.	सम्पूर्ण लोक (और)	कपिलम्	१५.	आप कपिल भगवान् की
पालम् ।	८.	(उनके) स्वामी हैं	प्रपद्ये ॥	१६.	शरण लेता हूँ

श्लोकार्थ—आप पर-ब्रह्म-प्रकृति, पुरुष, महतत्त्व, काल, त्रिविध अहंकार सम्पूर्ण लोक और उसके स्वामी हैं। आप अपने ज्ञान से समस्त विश्व में व्याप्त हैं। सारी शक्तियाँ आपके आधीन हैं। अतः मैं आप कपिल भगवान् की शरण लेता हूँ ॥

चतुःत्रिंशः श्लोकः

आस्माभिपृच्छेऽद्य पतिं प्रजानां त्वयावतीर्णर्ण उताप्तकामः ।
परिव्रजत्पदवीमास्थितोऽहं चरिष्ये त्वां हृदि युञ्जन् विशोकः ॥३४॥

पदच्छेद— **आस्माभिपृच्छे अद्य पतिम् प्रजानाम् त्वया अवतीर्ण ऋणः उत आप्तकामः ।**
परिव्रजत् पदवीम् आस्थितः अहम् चरिष्ये त्वाम् हृदि युञ्जन् विशोकः ॥

शब्दार्थ—

आस्माभिपृच्छे	१८.	आपकी आज्ञा चाहता हूँ	परिव्रजत्	८.	संन्यास
अद्य	६.	अब	पदवीम्	९.	मार्ग में
पतिम्	१७.	स्वामी हैं (अतः)	आस्थितः	१०.	स्थित होकर
प्रजानाम्	१६.	(आप) सारी प्रजा के	अहम्	७.	मैं
त्वया	१.	आपके द्वारा (मैं)	चरिष्ये	१५.	विचरण करना चाहता हूँ (अतः)
अवतीर्ण	३.	मुक्त कर दिया गया हूँ (तथा)	त्वाम्	१२.	आपका
ऋणः	२.	तीनों ऋणों से	हृदि	११.	हृदय में
उत	५.	परिपूर्ण हूँ	युञ्जन्	१३.	चिन्तन करता हुआ
आप्तकामः ।	४.	सारी कामनाओं से	विशोकः ॥	१४.	शोक रहित होकर

श्लोकार्थ—आपके द्वारा मैं तीनों ऋणों से मुक्त कर दिया गया हूँ तथा सारी कामनाओं से परिपूर्ण हूँ। अब मैं सन्यास मार्ग में स्थित होकर हृदय में आपका चिन्तन करता हुआ शोक रहित होकर विचरण करना चाहता हूँ। आप सारी प्रजाओं के स्वामी हैं। अतः आपकी आज्ञा चाहता हूँ ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—मया प्रोक्तं हि लोकस्य प्रमाणं सत्यलौकिके ।
अथाजनि मया तुभ्यं यदवोचमृतं मुने ॥३५॥

पदच्छेद—

मया प्रोक्तम् हि लोकस्य प्रमाणम् सत्य लौकिके ।
अथ अजनि मया यद् अवोचम् ऋतम् मुने ॥

शब्दार्थ—

मया	४.	मेरा	अथ अजनि	१४.	ही, शरीर धारण किया है
प्रोक्तम्	५.	कथन	मया	९.	मैंने
हि	६.	ही	तुभ्यम्	१०.	तुम्हें
लोकस्य	७.	संसार के लिये	यद्	११.	जो
प्रमाणम्	८.	प्रमाण है	अवोचम्	१२.	कहा था
सत्य	२.	वैदिक (और)	ऋतम्	१३.	उसे सत्य करने के लिये
लौकिके ।	३.	लौकिक कर्मों में	मुने ॥	१.	हे कर्दम जी !

श्लोकार्थ—हे कर्दम जी ! वैदिक और लौकिक कर्मों में मेरा कथन ही संसार के लिये प्रमाण है । मैंने तुम्हें जो कहा था उसे सत्य करने के लिये ही शरीर धारण किया है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एतन्मे जन्म लोकेऽस्मिन्मुमुक्षूणां दुराशयात् ।
प्रसंख्यानाय तत्त्वानां सम्मतायात्मदर्शने ॥३६॥

पदच्छेद—

एतद् मे जन्म लोके अस्मिन् मुमुक्षूणाम् दुराशयात् ।
प्रसंख्यानाय तत्त्वानाम् लोके सम्मताय आत्म दर्शने ॥

शब्दार्थ—

एतद्	१०.	यह	दुराशयात्	३.	सूक्ष्म शरीर से
मे	११.	मेरा	प्रसंख्यानाय	९.	उपदेश करने के लिये
जन्म	१२.	जन्म (हुआ है)	तत्त्वानाम्	८.	पच्चीस तत्त्वों का
लोके	२.	संसार में	सम्मताय	७.	उपयोगी
अस्मिन्	१.	इस	आत्म	५.	आत्म
मुमुक्षूणाम्	४.	मुक्त होने की इच्छा वाले पुरुषों के	दर्शने ॥	६.	दर्शन में

श्लोकार्थ—इस संसार में सूक्ष्म शरीर से मुक्त होने की इच्छा वाले पुरुष के आत्म दर्शन में उपयोगी पच्चीस तत्त्वों का उपदेश करने के लिये यह मेरा जन्म हुआ है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

एष आत्मपथोऽव्यक्तो नष्टः कालेन भूयसा ।
तं प्रवर्तयितुं देहमिमं विद्धि मया भृतम् ॥३७॥

पदच्छेद—

एष आत्म पथः अव्यक्तः नष्टः कालेन भूयसा ।
तम् प्रवर्तयितुम् देहम् इमम् विद्धि मया भृतम् ॥

शब्दार्थ—

एषः	२.	यह	तम्	८.	उसे फिर से
आत्म	१.	आत्म ज्ञान का	प्रवर्तयितुम्	९.	प्रारम्भ करने के लिये
पथः	४.	मार्ग	देहम्	१२.	शरीर
अव्यक्तः	३.	सूक्ष्म	इमम्	११.	यह
नष्टः	७.	लुप्त हो गया है	विद्धि	१४.	(ऐसा) जानो
कालेन	६.	समय से	मया	१०.	मैंने
भूयसा ।	५.	बहुत	भृतम् ॥	१३.	धारण किया है

श्लोकार्थ—आत्म ज्ञान का यह सूक्ष्म मार्ग बहुत समय से लुप्त हो गया है । उसे फिर से प्रारम्भ करने के लिये मैंने यह शरीर धारण किया है । ऐसा जानो ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

गच्छ कामं मयाऽऽपृष्टो मयि संन्यस्तकर्मणा ।
जित्वा सुदुर्जयं मृत्युममृतत्वाय मां भज ॥३८॥

पदच्छेद—

गच्छ कामम् मया आपृष्टः मयि संन्यस्त कर्मणा ।
जित्वा सुदुर्जयम् मृत्युम् अमृत तत्त्वाय माम् भज ॥

शब्दार्थ—

गच्छ	७.	जाओ (तथा)	जित्वा	१०.	जीत कर
कामम्	६.	इच्छानुसार	सुदुर्जयम्	८.	अजेय
मया	१.	मेरी	मृत्युम्	९.	मृत्यु को
आपृष्टः	२.	आज्ञा है (कि तुम)	अमृत	११.	मोक्ष की
मयि	४.	मुझे	तत्त्वाय	१२.	प्राप्ति के लिये
संन्यस्त	५.	समर्पण करके	माम्	१३.	मेरा
कर्मणा ।	३.	समस्त कर्मों को	भज ॥	१४.	भजन करो

श्लोकार्थ—मेरी आज्ञा है कि तुम समस्त कर्मों को मुझे समर्पण करके इच्छानुसार जाओ तथा अजेय मृत्यु को जीत कर मोक्ष की प्राप्ति के लिये मेरा भजन करो ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

मामात्मानं स्वयंज्योतिः सर्वभूतगुहाशयम् ।
आत्मन्येवात्मना वीक्ष्य विशोकोऽभयमृच्छसि ॥३९॥

पदच्छेद—

मामु आत्मानम् स्वयम् ज्योतिः सर्वभूत गुहा आशयम् ।
आत्मनि एव आत्मना वीक्ष्य विशोकः अभयम् ऋच्छसि ॥

शब्दार्थं—

माम्	१०.	मेरा	आत्मनि	८.	अन्तः करण में
आत्मानम्	६.	परमात्मा हूँ	एव	९.	ही
स्वयम्	४.	स्वयं	आत्मना	७.	(अपनी) बुद्धि से
ज्योतिः	५.	प्रकाश	वीक्ष्य	११.	दर्शन करके
सर्वभूत	१.	सभी जीवों के	विशोकः	१२.	शोक रहित होकर
गुहा	२.	अन्तः करण में	अभयम्	१३.	मोक्ष पद को
आशयम् ।	३.	रहने वाला (मैं)	ऋच्छसि ॥	१४	प्राप्त करोगे

श्लोकार्थ—सभी जीवों के अन्तः करण में रहने वाला मैं स्वयं प्रकाश परमात्मा हूँ । अपनी बुद्धि से अन्तः करण में ही मेरा दर्शन करके शोक रहित होकर मोक्ष पद को प्राप्त करोगे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

मात्र आध्यात्मिकीं विद्यां शमनीं सर्वकर्मणाम् ।
वितरिष्ये यया चासौ भयं चातितरिष्यति ॥४०॥

पदच्छेद—

मात्रे आध्यात्मिकीं विद्याम् शमनीम् सर्व कर्मणाम् ।
वितरिष्ये यया च असौ भयम् च अति तरिष्यति ॥

शब्दार्थं—

मात्रे	१.	माता देवहूति को भी	वितरिष्ये	७.	उपदेश दूंगा
आध्यात्मिकीं	५.	अध्यात्म	यया	८.	जिससे
विद्याम्	६.	ज्ञान का	च	९.	कि
शमनीम्	४.	समाप्त करने वाले	असौ	१०.	वह
सर्व	२.	सभी	भयम्	११.	भव-भय बन्धन को
कर्मणाम् ।	३.	कर्मों को	च अतितरिष्यति ॥	१२.	भी दूर कर देगी

श्लोकार्थ—माता देवहूति को भी सभी कर्मों को समाप्त करने वाले अध्यात्म-ज्ञान का उपदेश दूंगा । जिससे कि वह भव-भय बन्धन को भी दूर कर देगी ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—एवं समुदितस्तेन कपिलेन प्रजापतिः ।
दक्षिणीकृत्य तं प्रीतो वनमेव जगाम ह ॥४१॥

पदच्छेद—

एवम् समुदितः तेन कपिलेन प्रजापतिः ।
दक्षिणीकृत्य तम् प्रीतः वनम् एव जगाम ह ॥

शब्दार्थ—

एवम्	४.	इस प्रकार	दक्षिणीकृत्य	७.	प्रदक्षिण करके
समुदितः	५.	आज्ञा पाकर	तम्	६.	उनकी
तेन	१.	उन	प्रीतः	८.	प्रसन्नता पूर्वक
कपिलेन	२.	भगवान् कपिल से	वनम् एव	९.	वन को
प्रजापतिः ।	३.	प्रजापति कर्दम जी	जगाम ह ॥	१०.	चले गये

श्लोकार्थ—उन भगवान् कपिल से प्रजापति कर्दम जी इस प्रकार आज्ञा पाकर उनकी प्रदक्षिण करके प्रसन्नता पूर्वक वन को चले गये ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

व्रतं स आस्थितो मौनमात्मैकशरणो मुनिः ।
निःसङ्गो व्यचरत्क्षोणीमनग्निरनिकेतनः ॥४२॥

पदच्छेद—

व्रतम् सः आस्थितः मौनम् आत्म एक शरणः मुनिः ।
निःसङ्गः व्यचरत् क्षोणीम् अनग्निः अनिकेतनः ॥

शब्दार्थ—

व्रतम्	७.	व्रत	मुनिः ।	५.	कर्दम मुनि
सः	४.	वे	निःसङ्गः	११.	आसक्ति रहित होकर
आस्थितः	८.	धारण करके (तथा)	व्यचरत्	१३.	विचरने लगे
मौनम्	६.	मौन	क्षोणीम्	१२.	पृथ्वी पर
आत्म	२.	भगवान् श्री हरि की	अनग्निः	९.	अग्नि (और)
एक	१.	एक मात्र	अनिकेतनः ॥	१०.	आश्रम का त्याग करके
शरणः	३.	शरण में रहने वाले			

श्लोकार्थ—एक मात्र भगवान् श्री हरि की शरण में रहने वाले वे कर्दम जी मौन व्रत धारण करके तथा अग्नि और आश्रम का त्याग करके आसक्ति रहित होकर पृथ्वी पर विचरने लगे ।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

मनो ब्रह्मणि युञ्जानो यत्तत्सदसतः परम् ।
गुणावभासे विगुण एकभक्त्यानुभाविते ॥४३॥

पदच्छेद—

मनः ब्रह्मणि युञ्जानः यत् तत् सत् असतः परम् ।
गुण अवभासे विगुणः एक भक्त्या अनुभाविते ॥

शब्दार्थ—

मनः	१३.	(उन्होंने) मन को	परम् ।	४.	परे है
ब्रह्मणि	१२.	पर ब्रह्म में	गुण	८.	सत्त्वादि गुणों के
युञ्जानः	१४.	लगा दिया	अवभासे	९.	प्रकाशक हैं
यत्	१.	जो	विगुणः	११.	निर्गुण
तत्	१०.	उस	एक	५.	अनन्य
सत्	३.	कारण से	भक्त्या	६.	भक्ति से
असतः	२.	कार्य (और)	अनुभाविते ॥	७.	प्रसन्न होते हैं

श्लोकार्थ—जो कार्य और कारण से परे हैं । अनन्य भक्ति से प्रसन्न होते हैं । सत्त्वादि गुणों के प्रकाशक हैं । उस निर्गुण परब्रह्म में उन्होंने मन को लगा दिया ।

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

निरहंकृतिर्निर्ममश्च निर्द्वन्द्वः समदृक् स्वदृक् ।
प्रत्यक्प्रशान्तधीर्धीरः प्रशान्तोर्मिरिवोदधिः ॥४४॥

पदच्छेद—

निरहंकृतिः निर्ममः च निर्द्वन्द्वः समदृक् स्वदृक् ।
प्रत्यक् प्रशान्त धीः धीरः प्रशान्त ऊर्मि इव उदधिः ॥

शब्दार्थ—

निरहंकृतिः	२.	अहंकार	प्रत्यक्	८.	अन्तर्मुखी (और)
निर्ममः	३.	ममता	प्रशान्त	९.	शान्त (हो गई)
च	४.	और	धीः	७.	उनकी बुद्धि
निर्द्वन्द्वः	५.	सुख दुखादि से (रहित होकर)	धीरः	१३.	गम्भीर हो गये
समदृक्	१.	समदर्शी (कर्दम जी)	प्रशान्तऊर्मि	१०.	(उस समय वे) शान्त लहरों वाले
स्वदृक् ।	६.	सबमें परमात्मा का दर्शन करने लगे	इव	१२.	समान
			उदधिः ॥	११.	समुद्र

श्लोकार्थ—समदर्शी कर्दम जी अहंकार, ममता और सुख-दुखादि से रहित होकर सबमें परमात्मा का दर्शन करने लगे । उनकी बुद्धि अन्तर्मुखी और शान्त हो गई । उस समय वे शान्त लहरों वाले समुद्र के समान गम्भीर हो गये ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

वासुदेवे भगवति सर्वज्ञे प्रत्यगात्मनि ।
परेण भक्तिभावेन लब्धात्मा मुक्तबन्धनः ॥४५॥

पदच्छेद—

वासुदेवे भगवति सर्वज्ञे प्रत्यगात्मनि ।
परेण भक्तिभावेन लब्ध आत्मा मुक्त बन्धनः ॥

शब्दार्थ—

वासुदेवे	४.	वासुदेव में	भक्तिभावेन	६.	भक्ति भाव से
भगवति	३.	भगवान्	लब्ध	७.	दर्शन करके (कर्दम जी)
सर्वज्ञे	१.	सर्वज्ञ (एवं)	आत्मा	७.	आत्मा का
प्रत्यगात्मनि ।	२.	सर्वान्तिर्यामि	मुक्त	१०.	मुक्त हो गये
परेण	५.	परम	बन्धनः ॥	९.	सारे बन्धनों से

श्लोकार्थ—सर्वज्ञ एवम् सर्वान्तिर्यामि भगवान् वासुदेव में परम भक्ति भाव से आत्मा का दर्शन करके कर्दम जी सारे बन्धनों से मुक्त हो गये ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

आत्मानं सर्वभूतेषु भगवन्तमवस्थितम् ।
अपश्यत्सर्वभूतानि भगवत्यपि चात्मनि ॥४६॥

पदच्छेद—

आत्मानम् सर्व भूतेषु भगवन्तम् अवस्थितम् ।
अपश्यत् सर्व भूतानि भगवति अपि च आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

आत्मानम्	१.	आत्म-स्वरूप	अपश्यत्	११.	देखने लगे
सर्व	३.	सभी	सर्वभूतानि	६.	सभी जीवों को
भूतेषु	४.	जीवों में	भगवति	९.	भगवान् में
भगवन्तम्	२.	भगवान को	अपि	७.	भी
अवस्थितम् ।	१०.	व्याप्त	च	५.	और
			आत्मनि ॥	८.	आत्म-स्वरूप

श्लोकार्थ—आत्म-स्वरूप भगवान् को सभी जीवों में और सभी जीवों को भी आत्म-स्वरूप भगवान् में व्याप्त देखने लगे ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

इच्छाद्वेषविहीनेन सर्वत्र समचेतसा ।
भगवद्भक्तियुक्तेन प्राप्ता भागवती गतिः ॥४७॥

पदच्छेद—

इच्छा द्वेष विहीनेन सर्वत्र सम चेतसा ।
भगवद् भक्ति युक्तेन प्राप्ता भागवती गतिः ॥

शब्दार्थ—

इच्छा	१.	राग (और)	भगवद्	७.	भगवान् की
द्वेष	२.	द्वेष से	भक्ति	८.	अनन्य भक्ति से
विहीनेन	३.	रहित (तथा)	युक्तेन	९.	युक्त होकर
सर्वत्र	४.	सब जगह	प्राप्ता	१२.	प्राप्त हो गये
सम	५.	समान	भागवती	१०.	भगवान् के
चेतसा ।	६.	भाव रखने वाले (कर्दम जी)	गतिः ॥	११.	परमधाम को

श्लोकार्थ— राग और द्वेष से रहित तथा सब जगह समान भाव रखने वाले कर्दम जी भगवान् की अनन्य भक्ति से युक्त होकर भगवान् के परमधाम को प्राप्त हो गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये चतुर्विंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२४॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

पंचविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

कपिलस्तत्त्वसंख्याता भगवानात्ममायया ।
जातः स्वयमजः साक्षादात्मप्रज्ञप्तये नृणाम् ॥१॥

पदच्छेद—

कपिलः तत्त्व संख्याता भगवान् आत्म मायया ।
जातः स्वयम् अजः साक्षात् आत्म प्रज्ञप्तये नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

कपिलः	४.	कपिल	जातः	१३.	उत्पन्न हुये
तत्त्व	१.	पच्चीस तत्त्वों के	स्वयम्	५.	स्वयं
संख्याता	२.	उपदेशक	अजः	६.	अजन्मा होकर भी
भगवान्	३.	भगवान्	साक्षात्	१२.	साक्षात्
आत्म	१०.	अपनी	आत्म	८.	आत्म-ज्ञान का
मायया ।	११.	योग माया से	प्रज्ञप्तये	९.	उपदेश करने के लिये
			नृणाम् ॥	७.	मनुष्यों को

श्लोकार्थ—पच्चीस तत्त्वों के उपदेशक भगवान् कपिल स्वयं अजन्मा होकर भी मनुष्यों को आत्म-ज्ञान का उपदेश करने के लिये अपनी योग माया से साक्षात् उत्पन्न हुये ॥

द्वितीयः श्लोकः

न ह्यस्य वर्ष्मणः पुंसां वरिम्णः सर्वयोगिनाम् ।
विश्रुतौ श्रुतदेवस्य भूरि तृप्यन्ति मेऽसवः ॥२॥

पदच्छेद—

न हि अस्य वर्ष्मणः पुंसाम् वरिम्णः सर्वयोगिनाम् ।
विश्रुतौ श्रुत देवस्य भूरि तृप्यन्ति मे असवः ॥

शब्दार्थ—

न	१३.	नहीं	विश्रुतौ	९.	कीर्ति सुनते-सुनते
हि	१.	यद्यपि (मैंने)	श्रुत	३.	कीर्ति सुनी है (फिर भी)
अस्य	८.	इन भगवान् कपिल की	देवस्य	२.	भगवान् की
वर्ष्मणः	७.	श्रेष्ठ	भूरि	१२.	बहुत
पुंसाम्	६.	पुरुषों में	तृप्यन्ति	१४.	तृप्त हो रही है
वरिम्णः	५.	वरिष्ठ (और)	मे	१०.	मेरी
सर्वयोगिनाम् ।	४.	सभी योगियों में	असवः ॥	११.	इन्द्रियाँ

श्लोकार्थ—यद्यपि मैंने भगवान् की कीर्ति सुनी है । फिर भी सभी योगियों में वरिष्ठ और पुरुषों में श्रेष्ठ इन भगवान कपिल की कीर्त्ति सुनते-सुनते मेरी इन्द्रियाँ बहुत तृप्त नहीं हो रही हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

यद्यद्विधत्ते भगवान् स्वच्छन्दात्माऽऽत्ममायया ।
तानि मे श्रद्दधानस्य कीर्तन्यान्यनुकीर्तय ॥३॥

पदच्छेद—

यद्-यद् विधत्ते भगवान् स्वच्छन्द आत्मा आत्म मायया ।
तानि मे श्रद्दधानस्य कीर्तन्यानि अनुकीर्तय ॥

शब्दार्थ—

यद्-यद्	६.	जो-जो लीलायें	मायया ।	५.	योग माया से
विधत्ते	७.	करते हैं (वे)	तानि	१०.	उन्हें
भगवान्	३.	भगवान्	मे	११.	मुझे
स्वच्छन्द	१.	स्वतन्त्र	श्रद्दधानस्य	९.	उन पर मेरी श्रद्धा है (तथा)
आत्मा	२.	स्वरूप वाले	कीर्तन्यानि	८.	कीर्तन करने योग्य है
आत्म	४.	अपनी	अनुकीर्तय ॥	१२.	सुनावें

श्लोकार्थ—स्वतन्त्र स्वरूप वाले भगवान् अपनी योग माया से जो-जो लीलायें करते हैं । वे कीर्तन करने योग्य हैं । उन पर मेरी श्रद्धा है । तथा उन्हें मुझे सुनावें ॥

चतुर्थः श्लोकः

सूतउवाच—

द्वैपायनसखस्त्वेवं मैत्रेयो भगवांस्तथा ।
प्राहेदं विदुरं प्रीत आन्वीक्षिक्यां प्रचोदितः ॥४॥

पदच्छेद—

द्वैपायन सखः तु एवम् मैत्रेयः भगवान् तथा ।
प्राह इदम् विदुरम् प्रीतः आन्वीक्षिक्याम् प्रचोदितः ॥

शब्दार्थ—

द्वैपायन	५.	वेद व्यास के	प्राह	१२.	कहा
सखः	६.	मित्र	इदम्	११.	इस प्रकार
तु	२.	ही	विदुरम्	१०.	विदुर जी से
एवम्	१.	(आपके) समान	प्रीतः	९.	प्रसन्न होकर
मैत्रेयः	८.	मैत्रेय जी ने	आन्वीक्षिक्याम्	३.	आत्म ज्ञान के विषय में
भगवान् तथा ।	७.	भगवान	प्रचोदितः ॥	४.	प्रश्न पूछने पर

श्लोकार्थ—आपके समान ही आत्म ज्ञान के विषय में प्रश्न पूछने पर वेद व्यास के मित्र भगवान् मैत्रेय जी ने प्रसन्न होकर विदुर जी से इस प्रकार कहा ॥

पञ्चमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच— पितरि प्रस्थितेऽरण्यं मातुः प्रियचिकीर्षया ।
तस्मिन् बिन्दुसरेऽवात्सीद्भगवान् कपिलः किल ॥५॥

पदच्छेद—

पितरि प्रस्थिते अरण्यम् मातुः प्रिय चिकीर्षया ।
तस्मिन् विन्दुसरे अवात्सीत् भगवान् कपिलः किल ॥

शब्दार्थं—

पितरि	१.	पिता के	तस्मिन्	६.	उस
प्रस्थिते	३.	चले जाने पर	विन्दुसरे	१०.	विन्दुसर तीर्थ में
अरण्यम्	२.	वन	अवात्सीत्	११.	निवास किया
मातुः	६.	माता के	भगवान्	४.	भगवान्
प्रिय	७.	हित	कपिलः	५.	कपिल ने
चिकीर्षया ।	८.	साधन की इच्छा से	किल ॥	१२.	यह प्रसिद्ध है

श्लोकार्थ—पिता के वन चले जाने पर भगवान् कपिल ने माता के हित साधन की इच्छा से उस विन्दुसर तीर्थ में निवास किया । यह प्रसिद्ध है ॥

षष्ठः श्लोकः

तमासीनमकर्माणं तत्त्वग्रामाग्रदर्शनम् ।
स्वसुतं देवहूत्याह धातुः संस्मरती वचः ॥६॥

पदच्छेद—

तम् आसीनम् अकर्माणम् तत्त्वग्राम अग्रदर्शनम् ।
स्वसुतम् देवहूती आह धातुः संस्मरती वचः ॥

शब्दार्थं—

तम्	४.	वे भगवान् कपिल जी	स्वसुतम्	१०.	अपने पुत्र से
आसीनम्	५.	आसन पर बैठे थे	देवहूती	९.	माता देवहूति
अकर्माणम्	३.	कर्मों से विरत	आह	११.	बोली
तत्त्वग्राम	१.	पच्चीस तत्त्व समूह के	धातुः	६.	(उस समय) ब्रह्मा जी के
अग्रदर्शनम् ।	२.	पारदर्शी (तथा)	संस्मरती	८.	स्मरण करती हुई
			वचः ॥	७.	वचन का

श्लोकार्थ—पच्चीस तत्त्व समूह के पारदर्शी तथा कर्मों से विरत वे भगवान् कपिल जी आसन पर बैठे थे । उस समय ब्रह्मा जी के वचन का स्मरण करती हुई माता देवहूति अपने पुत्र से बोलीं ॥

सप्तमः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—निर्विण्णा नितरां भूमन्नसदिन्द्रियतर्षणात् ।
येन सम्भाव्यमानेन प्रपन्नान्धं तमः प्रभो ॥७॥

पदच्छेद—

निर्विण्णा नितराम् भूमन् असद् इन्द्रिय तर्षणात् ।
येन सम्भाव्यमानेन प्रपन्ना अन्धम् तमः प्रभो! ॥

शब्दार्थ—

निर्विण्णा	७.	दुःखी हूँ	येन	८.	जिन इन्द्रियों की
नितराम्	६.	बहुत	सम्भाव्यमानेन	९.	इच्छा पूरी करने से ही
भूमन्	१.	हे भूमन् !	प्रपन्ना	१२.	प्राप्त हुई हूँ
असद्	३.	दुष्ट	अन्धम्	११.	अज्ञानान्धकार को
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों की	तमः	१०.	घोर
तर्षणात् ।	५.	विषय लालसा से (मैं)	प्रभो! ॥	२.	हे भगवन्

श्लोकार्थ—हे भूमन् ! हे भगवन् ! दुष्ट इन्द्रियों की विषय लालसा से मैं बहुत दुःखी हूँ । जिन इन्द्रियों की इच्छा पूरी करने से ही घोर अज्ञानान्धकार को प्राप्त हुई हूँ ॥

अष्टमः श्लोकः

तस्य त्वं तमसोऽन्धस्य दुष्पारस्याद्य पारगम् ।
सच्चक्षुर्जन्मनामन्ते लब्धं मे त्वदनुग्रहात् ॥८॥

पदच्छेद—

तस्य त्वम् तमसः अन्धस्य दुष्पारस्य अद्य पारगम् ।
सत् चक्षुः जन्मनाम् अन्ते लब्धम् मे त्वद् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	६.	(क्योंकि) उस	सत् चक्षुः	११.	श्रेष्ठ नेत्र के समान
त्वम्	१२.	आप	जन्मनाम्	४.	जन्म परम्परा का
तमसः	८.	अज्ञान रूप	अन्ते	५.	अन्त (है)
अन्धस्य	९.	अन्धकार से	लब्धम्	१४.	प्राप्त हुये हैं
दुष्पारस्य	७.	अपार	मे	१३.	मुझे
अद्य	१.	अब	त्वद्	२.	आपकी
पारगम् ।	१०.	पार कराने वाले	अनुग्रहात् ॥	३.	कृपा से (मेरी)

श्लोकार्थ—अब आपकी कृपा से मेरी जन्म परम्परा का अन्त है। क्योंकि उस अपार अज्ञान रूप अन्धकार से पार कराने वाले श्रेष्ठ नेत्र के समान आप मुझे प्राप्त हुये हैं ॥

नवमः श्लोकः

य आद्यो भगवान् पुंसामीश्वरो वै भवान् किल।
लोकस्य तमसान्धस्य चक्षुः सूर्य इवोदितः ॥९॥

पदच्छेद—

य: आद्यः भगवान् पुंसाम् ईश्वरः वै भवान् किल ।
लोकस्य तमसा अन्धस्य चक्षुः सूर्यः इव उदितः ॥

शब्दार्थ—

यः	३.	जो	लोकस्य	१०.	लोगों के लिये
आद्यः	५.	आदि पुरुष हैं	तमसा	८.	अज्ञानान्धकार से
भगवान्	४.	भगवान्	अन्धस्य	९.	अन्धे
पुंसाम्	१.	सभी जीवों के	चक्षुः	११.	नेत्र वाले
ईश्वरः	२.	स्वामी	सूर्यः	१२.	सूर्य के
वै	६.	वह	इव	१३.	समान
भवान् किल।	७.	आप ही	उदितः ॥	१४.	उत्पन्न हुये हैं

श्लोकार्थ—सभी जीवों के स्वामी जो भगवान् आदि पुरुष हैं। वह आप ही अज्ञानान्धकार से अन्धे लोगों के लिये नेत्र वाले सूर्य के समान उत्पन्न हुये हैं ॥

दशमः श्लोकः

अथ मे देव सम्मोहमपाक्रष्टुं त्वमर्हसि ।
योऽवग्रहोऽहंममेतीत्येतस्मिन् योजितस्त्वया ॥१०॥

पदच्छेद—

अथ मे देव सम्मोहम् अपाक्रष्टुम् त्वम् अर्हसि ।
यः अवग्रहः अहम् मम इति एतस्मिन् योजितः त्वया ॥

शब्दार्थ—

अथ	११.	अब	अवग्रहः	८.	दुराग्रह है (वह)
मे	१३.	मेरे	अहम्	३.	मैं (और)
देव	१.	हे देव !	मम	४.	मेरा
सम्मोहम्	१४.	इस महामोह को	इति	५.	इस प्रकार का
अपाक्रष्टुम्	१५.	दूर	इति	७.	यह
त्वम्	१२.	आप	एतस्मिन्	२.	इस देह-गेह में
अर्हसि।	१६.	कीजिये	योजितः	१०.	कराया गया है
यः	६.	जो	त्वया ॥	९.	आप ही के द्वारा

श्लोकार्थ—हे देव ! इस देह-गेह में मैं और मेरा इस प्रकार का जो यह दुराग्रह है। वह आप ही के द्वारा कराया गया है। अब आप मेरे इस महा मोह को दूर कीजिये ॥

एकादशः श्लोकः

तं त्वा गताहं शरणं शरण्यं स्वभृत्यसंसारतरोः कुठारम् ।
जिज्ञासयाहं प्रकृतेः पूरुषस्य नमामि सद्धर्मविदां वरिष्ठम् ॥११॥

पदच्छेद— तम्, त्वा गता अहम् शरणम् शरण्यम् स्वभृत्य संसारतरोः कुठारम् ।
जिज्ञासया अहम् प्रकृतेः पूरुषस्य नमामि सद्धर्म विदाम् वरिष्ठम् ॥

शब्दार्थ—

तम्, त्वा	३.	उन आपकी	जिज्ञासया	१३.	जानने की इच्छा से
गता	५.	आई हूँ (आप)	अहम्	१०.	मैं
अहम्	१.	मैं	प्रकृतेः	११.	प्रकृति (और)
शरणम्	४.	शरण में	पूरुषस्य	१२.	पुरुष के स्वरूप को
शरण्यम्	२.	शरणागत वत्सल	नमामि	१७.	प्रणाम करती हूँ
स्वत्भृय	६.	अपने भक्तों के	सद्धर्म	१४.	भागवत् धर्म के
संसारतरोः	७.	संसार रूपी वृक्ष के लिये	विदाम्	१५.	ज्ञानियों में
कुठारम् ।	८.	कुठार के समान हैं	वरिष्ठम् ॥	१६.	सर्व श्रेष्ठ (आपको)

श्लोकार्थ—मैं शरणागत वत्सल उन आपकी शरण में आई हूँ। आप अपने भक्तों के संसार रूपी वृक्ष के लिये कुठार के समान हैं। मैं प्रकृति और पुरुष के स्वरूप को जानने की इच्छा से भागवत धर्म के ज्ञानियों में सर्व श्रेष्ठ आपको प्रणाम करती हूँ ॥

द्वादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति स्वमातुर्निरवद्यमीप्सितं निशम्य पुंसामपवर्गवर्धनम् ।
धियाभिनन्द्यात्मवतां सतां गतिर्बभाष ईषत्स्मितशोभिताननः ॥१२॥

पदच्छेद—इति अभिनन्द्य स्वमातुः निरवद्यम् ईप्सितम् निशम्य पुंसाम् अपवर्ग वर्धनम् ।
धिया अभिनन्द्य आत्मवताम् सताम् गतिः बभाषे ईषत् स्मित शोभित आननः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अभिनन्द्य	१०.	स्वागत करके
स्वमातुः	२.	अपनी माता देवहूति की	आत्मवताम्	११.	आत्म ज्ञानी
निरवद्यम्	३.	परम् पवित्र (एवम्)	सताम्	१२.	संतों के
ईप्सितम्	७.	इच्छा को	गतिः	१३.	आराध्य (भगवान् कपिल)
निशम्य	८.	सुनकर (तथा)	बभाषे	१८.	बोले
पुंसाम्	४.	मनुष्यों को	ईषत्	१४.	मन्द
अपवर्ग	५.	मोक्ष	स्मित	१५.	मुसकान से
र्धनम् ।	६.	देने वाली	शोभित	१६.	सुशोभित
धया	९.	(उसका) हृदय से	आननः ॥	१७.	मुख से

लोकार्थ—इस प्रकार अपनी माता देवहूती की परम पवित्र एवम् मनुष्यों को मोक्ष देने वाली इच्छा को सुनकर तथा उसका हृदय से स्वागत करके आत्म ज्ञानी संतों के आराध्य भगवान् कपिल मन्द मुसकान से सुशोभित मुख से बोले ॥

त्रयोदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—योग आध्यात्मिकः पुंसां मतो निःश्रेयसाय मे ।
अत्यन्तोपरतिर्यत्र दुःखस्य च सुखस्य च ॥१३॥

पदच्छेद—

योगः आध्यात्मिकः पुंसाम् मतः निःश्रेयसाय मे ।
अत्यन्त उपरतिः यत्र दुःखस्य च सुखस्य च ॥

शब्दार्थ—

योगः	४.	योग	अत्यन्त	११.	सदा-सदा के लिये
आध्यात्मिकः	३.	आध्यात्म	उपरतिः	१२.	अभाव हो जाता है
पुंसाम्	१.	मनुष्यों के	यत्र	७.	जिसमें
मतः	६.	मान्य है	दुःखस्य	१०.	दुःख का
निःश्रेयसाय	२.	परम कल्याण के लिये	च	९	और
मे ।	५.	मुझे	सुखस्य च ॥	८.	सुख का

श्लोकार्थ—मनुष्यों के परम कल्याण के लिये आध्यात्म योग मुझे मान्य है । जिसमें सुख का और दुःख का सदा-सदा के लिये अभाव हो जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तमिमं ते प्रवक्ष्यामि यमवोचं पुरानघे ।
ऋषीणां श्रोतुकामानां योगं सर्वाङ्गनैपुणम् ॥१४॥

पदच्छेद—

तम् इमम् ते प्रवक्ष्यामि यम् अवोचम् पुरा अनघे ।
ऋषीणाम् श्रोतुकामानाम् योगम् सर्वाङ्ग नैपुणम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	११.	उसे	अनघे ।	१.	हे साध्वी !
इमम्	१०.	अब	ऋषीणाम्	७.	नारदादि ऋषियों से
ते	१२.	तुमसे	श्रोतुकामानाम्	८.	(उनकी) सुनने की इच्छा होने पर
प्रवक्ष्यामि	१३.	कहूँगा	योगम्	५.	योग को (मैंने)
यम्	४.	जिस	सर्वाङ्ग	२.	सभी अंगों से
अवोचम्	९.	कहा था	नैपुणम् ॥	३.	सम्पन्न
पुरा	६.	पहले			

श्लोकार्थ—हे साध्वी ! सभी अङ्गों से सम्पन्न जिस योग को मैंने पहले नारदादि ऋषियों से उनका सुनने की इच्छा होने पर कहा था । अब उसे तुमसे कहूँगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

चेतः खल्वस्य बन्धाय मुक्तये चात्मनो मतम् ।
गुणेषु सक्तं बन्धाय रतं वा पुंसि मुक्तये ॥१५॥

पदच्छेद—

चेतः खलु अस्य बन्धाय मुक्तये च आत्मनः मतम् ।
गुणेषु सक्तम् बन्धाय रतम् वा पुंसि मुक्तये ॥

शब्दार्थ—

चेतः	३.	मन	गुणेषु	९.	विषयों में
खलु	४.	ही	सक्तम्	१०.	आसक्ति से
अस्य	१.	इस	बन्धाय	११.	बन्धन होता है
बन्धाय	५.	बन्धन	रतम्	१४.	अनुराग करने से
मुक्तये	७.	मुक्ति का कारण	वा	१२.	तथा
च	६.	और	पुंसि	१३.	परमात्मा में
आत्मनः	२.	जीव का	मुक्तये ॥	१५.	मुक्ति मिलती है
मतम् ।	८.	माना गया है			

श्लोकार्थ—इस जीव का मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण माना गया है। विषयों में आसक्ति से बन्धन होता है। तथा परमात्मा में अनुराग करने से मुक्ति मिलती है।

षोडशः श्लोकः

अहंममाभिमानोत्थैः कामलोभादिभिर्मलैः ।
वीतं यदा मनः शुद्धमदुःखमसुखं समम् ॥१६॥

पदच्छेद—

अहम् मम अभिमान उत्थैः कामलोभ आदिभिः मलैः ।
वीतम् यदा मनः शुद्धम् अदुःखम् असुखम् समम् ॥

शब्दार्थ—

अहम्	३.	मैं (और)	वीतम्	१०.	रहित होकर
मम	४.	मेरे पन के	यदा	१.	जब
अभिमान	५.	घमंड से	मनः	२.	मन
उत्थैः	६.	उत्पन्न	शुद्धम्	११.	शुद्ध हो जाता है (तब वह)
कामलोभ	७.	काम-लोभ	अदुःखम्	१२.	दुःख और
आदिभिः	८.	इत्यादि	असुखम्	१३.	सुख से रहित होकर
मलैः ।	९.	विकारों से	समम् ॥	१४.	समता में स्थित हो जाता है ॥

श्लोकार्थ—जब मन मैं और मेरे पन के घमंड से उत्पन्न काम-लोभ इत्यादि विकारों से रहित होकर शुद्ध हो जाता है। तब वह दुःख और सुख से रहित होकर समता में स्थित हो जाता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

तदा पुरुष आत्मानं केवलं प्रकृतेः परम् ।
निरन्तरं स्वयंज्योतिरणिमानमखण्डितम् ॥१७॥

पदच्छेद—

तदा पुरुषः आत्मानम् केवलम् प्रकृतेः परम् ।
निरन्तरम् स्वयम् ज्योतिः अणिमानम् अखण्डितम् ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	तब	निरन्तरम्	५.	भेद रहित
पुरुषः	२.	जीव	स्वयम्	६.	स्वयं
आत्मानम्	११.	परमात्मा को (देखता है)	ज्योतिः	७.	प्रकाश
केवलम्	१०.	एक मात्र	अणिमानम्	८.	अतिसूक्ष्म (और)
प्रकृतेः	३.	प्रकृति से	अखण्डितम् ॥	९.	अखण्ड
परम् ।	४.	परे			

श्लोकार्थ—तब जीव प्रकृति से परे भेद रहित स्वयं प्रकाश अति सूक्ष्म और अखण्ड एक मात्र परमात्मा को देखता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

ज्ञानवैराग्ययुक्तेन भक्तियुक्तेन चात्मना ।
परिपश्यत्युदासीनं प्रकृतिं च हतौजसम् ॥१८॥

पदच्छेद—

ज्ञान वैराग्य युक्तेन भक्ति युक्तेन च आत्मना ।
परिपश्यति उदासीनम् प्रकृतिम् च हत ओजसम् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान	१.	(उस समय वह) ज्ञान (और)	परिपश्यति	१३.	देखता है
वैराग्य	२.	वैराग्य से	उदासीनम्	८.	उदासीन
युक्तेन	३.	युक्त	प्रकृतिम्	१०.	प्रकृति को
भक्ति	५.	भक्ति से	च	९.	और।
युक्तेन	६.	सम्पन्न	हत	१२.	हीन
च	४.	और	ओजसम् ॥	११.	शक्ति
आत्मना ।	७.	हृदय से (परमात्मा को)			

श्लोकार्थ—उस समय वह ज्ञान और वैराग्य से युक्त और भक्ति से सम्पन्न हृदय से परमात्मा को उदासीन और प्रकृति को शक्ति से हीन देखता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

न युज्यमानया भक्त्या भगवत्यखिलात्मनि ।
सदृशोऽस्ति शिवः पन्था योगिनां ब्रह्मसिद्धये ॥१६॥

पदच्छेद—

न युज्यमानया भक्त्या भगवति अखिल आत्मनि ।
सदृशः अस्ति शिवः पन्था योगिनाम् ब्रह्मसिद्धये ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	सदृशः	८.	समान
युज्यमानया	६.	लगाई गई	अस्ति	१२.	है
भक्त्या	७.	अनन्य भक्ति के	शिवः	६.	कल्याणकारी
भगवति	५.	भगवान् में	पन्थाः	१०.	कोई दूसरा मार्ग
अखिल	३.	सब की	योगिनाम्	१.	योगियों को
आत्मनि ।	४.	आत्मा	ब्रह्मसिद्धये ॥	२.	ब्रह्म की प्राप्ति के लिये

श्लोकार्थ—योगियों को ब्रह्म की प्राप्ति के लिये सबकी आत्मा भगवान् में लगाई गई अनन्य भक्ति के समान कल्याणकारी कोई दूसरा मार्ग नहीं है ॥

विंशः श्लोकः

प्रसङ्गमजरं पाशमात्मनः कवयो विदुः ।
स एव साधुषु कृतो मोक्षद्वारमपावृतम् ॥२०॥

पदच्छेद—

प्रसङ्गम् अजरम् पाशम् आत्मनः कवयः विदुः ।
सः एव साधुषु कृतः मोक्षद्वारम् अपा वृतम् ॥

शब्दार्थ—

प्रसङ्गम्	२.	आसक्ति को	सः एव	७.	वही आसक्ति (जब)
अजरम्	४.	अच्छेद्य	साधुषु	८.	महात्माओं के प्रति
पाशम्	५.	बन्धन	कृतः	६.	की जाती है (तब वह)
आत्मनः	३.	आत्मा का	मोक्ष	१०.	मोक्ष का
कवयः	१.	ज्ञानी जन	द्वारम्	१२.	द्वार बन जाती है
विदुः ।	६.	मानते हैं	अपावृतम् ॥	११.	खुला

श्लोकार्थ—ज्ञानी जन आसक्ति को आत्मा का अच्छेद्य बन्धन मानते हैं। वही आसक्ति जब महात्माओं के प्रति की जाती है तब वह मोक्ष का खुला द्वार बन जाती है ।

एकविंशः श्लोकः

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्वदेहिनाम् ।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः ॥२१॥

पदच्छेद—

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्वदेहिनाम् ।
अजातशत्रवः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः ॥

शब्दार्थ—

तितिक्षवः	५.	सहनशील (एवं)	अजात	७.	न हुआ हो
कारुणिकाः	४.	दयालु	शत्रवः	६.	(जिनके कभी कोई) शत्रु
सुहृदः	३.	अकारण हितैषी	शान्ताः	८	शान्त (और)
सर्व	१.	जो सभी	साधवः	१०.	संत पुरुष हैं (उन्हें कष्ट नहीं होता है)
देहिनाम् ।	२.	देह धारियों के	साधुभूषणा ॥	९.	सज्जनों का सम्मान करने वाले

श्लोकार्थ—जो सभी देह धारियों के अकारण हितैषी, दयालु, सहनशील एवं जिनके कोई शत्रु न हुआ हो, शान्त और सज्जनों का सम्मान करने वाले संत पुरुष हैं, उन्हें कष्ट नहीं होता है ।

द्वाविंशः श्लोकः

मय्यनन्येन भावेन भक्तिं कुर्वन्ति ये दृढाम् ।
मत्कृते त्यक्तकर्माणस्त्यक्तस्वजनबान्धवाः ॥२२॥

पदच्छेद—

मयि अनन्येन भावेन भक्तिम् कुर्वन्ति ये दृढाम् ।
मत्कृते त्यक्तकर्माणः त्यक्तस्वजनबान्धवाः ॥

शब्दार्थ—

मयि	२.	मुझसे,	मत्कृते	७.	मेरे लिये
अनन्येनभावेन	३.	अनन्य भाव से	त्यक्त	९.	त्याग करते हैं (तथा)
भक्तिम्	५.	प्रेम	कर्माणः	८.	सभी कर्मों का
कुर्वन्ति	६.	करते हैं	त्यक्त	१२.	त्याग देते हैं (वे लोग कष्ट नहीं पाते हैं)
ये	१.	जो लोग	स्वजन	१०.	सगे
दृढाम् ।	४.	सुदृढ	बान्धवाः ॥	११.	सम्बन्धियों को (भी)

श्लोकार्थ—जो लोग मुझसे अनन्य भाव से सुदृढ़ प्रेम करते हैं; मेरे लिये सभी कर्मों का त्याग करते हैं; और सगे सम्बन्धियों को भी त्याग देते हैं । वे लोग कष्ट नहीं पाते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

मदाश्रयाः कथा मृष्टाः शृण्वन्ति कथयन्ति च ।
तपन्ति विविधास्तापा नैतान्मद्गतचेतसः ॥२३॥

पदच्छेद—

मद् आश्रयाः कथाः मृष्टाः शृण्वन्ति कथयन्ति च ।
तपन्ति विविधाः तापाः न एतान् मद् गत चेतसः ॥

शब्दार्थ—

मद्	१. जो लोग मुझसे	तपन्ति	१४. दुःख पहुँचाते हैं
आश्रयाः	२. सम्बन्धित	विविधाः	१२. अनेक प्रकार के
कथाः	४. कथायें	तापाः न	१३. सांसारिक कष्ट नहीं
मृष्टाः	३. मधुर	एतान्	११. उन्हें
शृण्वन्ति	५. सुनते हैं	मद्	८. (जिन्होंने) मुझमें
कथयन्ति	७. कहते हैं	गत	१०. लगा दिया है
च ।	६. और	चेतसः ॥	९. मन

श्लोकार्थ—जो लोग मुझसे सम्बन्धित मधुर कथायें सुनते हैं, और कहते हैं; जिन्होंने मुझमें मन लगा दिया है । उन्हें अनेक प्रकार के सांसारिक कष्ट दुःख नहीं पहुँचाते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

त एते साधवः साध्वि सर्वसङ्गविवर्जिताः ।
सङ्गस्तेष्वथ ते प्रार्थ्यः सङ्गदोषहरा हि ते ॥२४॥

पदच्छेद—

ते एते साधवः साध्वि सर्व सङ्ग विवर्जिताः ।
सङ्गः तेषु अथ ते प्रार्थ्यः सङ्ग दोषहरा हि ते ॥

शब्दार्थ—

ते	३. वे	सङ्ग	१०. सत्संग
एते	२. इस प्रकार के	तेषु	९. उन्हीं के साथ
साधवः	४. सत्पुरुष	अथ, ते	८. अब, तुम्हें
साध्वि	१. हे मातः ।	प्रार्थ्यः	११. करना चाहिये
सर्व	५. सभी प्रकार की	सङ्ग दोष	१३. आसक्ति के दोष को
सङ्ग	६. आसक्तियों से	हराः	१४. दूर कर देते हैं
विवर्जिताः ।	७. रहित होते हैं	हि, ते	१२. क्योंकि, वे लोग

श्लोकार्थ—हे मातः । इस प्रकार के वे सत्पुरुष सभी प्रकार की आसक्तियों से रहित होते हैं । अब तुम्हें उन्हीं के साथ सत्संग करना चाहिये । क्योंकि वे लोग आसक्ति को दोष को दूर कर देते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

सतां प्रसङ्गान्मम वीर्यसंविदो भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः कथाः ।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ॥२५॥

पदच्छेद— सताम् प्रङ्गात् मम वीर्य संविदः भवन्ति हृत्कर्ण रसायनाः कथाः ।
तद् जोषणात् आशु अपवर्गवर्त्मनि श्रद्धा रतिः भक्तिः अनुक्रमिष्यति ॥

शब्दार्थ—

सताम्	१.	महात्माओं के	तद्	९.	उनमें
प्रसङ्गात्	२.	सत्संग से	जोषणात्	१०.	प्रेम होने से
मम वीर्य-	३.	मेरे पराक्रम का	आशु	१५.	शीघ्र
संविदः	४.	ज्ञान कराने वाली (तथा)	अपवर्ग	११.	मोक्ष के
भवन्ति	८.	होती हैं	वर्त्मनि	१२.	मार्ग में
हृत्कर्ण	५.	हृदय और कानों को	श्रद्धा, रतिः	१३.	श्रद्धा प्रेम (और)
रसायनाः	६.	सुन्दर लगने वाली	भक्तिः	१४.	भक्ति का
कथाः ।	७.	कथायें	अनुक्रमिष्यति ॥	१६.	विकास होता है

श्लोकार्थ—महात्माओं के सत्संग से मेरे पराक्रम का ज्ञान कराने वाली तथा हृदय और कानों को सुन्दर लगने वाली कथायें होती हैं। उनमें प्रेम होने से मोक्ष के मार्ग में श्रद्धा, प्रेम और भक्ति का शीघ्र विकास होता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

भक्त्या पुमाञ्जातविराग ऐन्द्रियाद् दृष्टश्रुतान्मद्रचनानुचिन्तया ।
चित्तस्य यत्तो ग्रहणे योगयुक्तो यतिष्यते ऋजुभिर्योगमार्गैः ॥२६॥

पदच्छेद—भक्त्या पुमान् जातविरागः ऐन्द्रियात्, दृष्टश्रुतात् मद् रचना अनुचिन्तया ॥
चित्तस्य यत्तः ग्रहणे योगयुक्तः यतिष्यते, ऋजुभिः योग मार्गैः ॥

शब्दार्थ—

भक्त्या पुमान्	३.	भक्ति से मनुष्य को	चित्तस्य	१४.	मन को
जात	८.	हो जाता है (अतः वह)	यत्तः	१०.	सावधानी पूर्वक
विरागः	७.	वैराग्य	ग्रहणे	१५.	एकाग्र करने का
ऐन्द्रियात्	६.	सुखों से	योगयुक्तः	९.	योग से युक्त होकर
दृष्ट	४.	लौकिक (और)	यतिष्यते	१६.	प्रयास करने लगता है
श्रुतात्	५.	पार लौकिक	ऋजुभिः	१२.	सरल
मद् रचना	१.	मेरी लीला के	योग	११.	योग के
अनुचिन्तया ।	२.	चिन्तन की	मार्गैः ॥	१३.	उपायों से

श्लोकार्थ— मेरी लीला के चिन्तन की भक्ति से मनुष्य को लौकिक और पारलौकिक सुखों से वैराग्य हो जाता है। अतः वह योग से युक्त होकर सावधानी पूर्वक योग के सरल उपायों से मन को एकाग्र करने का प्रयास करने लगता है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

असेवयायं प्रकृतेर्गुणानां ज्ञानेन वैराग्यविजृम्भितेन ।
योगेन मय्यर्पितया च भक्त्या मां प्रत्यगात्मानमिहावरुन्धे ॥२७॥

पदच्छेद—

असेवया अयम् प्रकृतेः गुणानाम् ज्ञानेन वैराग्यविजृम्भितेन ।
योगेन मयि अर्पितया च भक्त्या माम् प्रत्यगात्मानम् इह अवरुन्धे ॥

शब्दार्थ—

असेवया	३.	त्याग करने से	योगेन	७.	योग से
अयम्	११.	यह पुरुष	मयि अर्पितया	९.	मुझमें समर्पित की गई
प्रकृतेः	१.	प्रकृति के	च	८.	और
गुणानाम्	२.	गुणों से उत्पन्न विषयों का	भक्त्या	१०.	भक्ति से
ज्ञानेन	६.	ज्ञान से	माम् प्रत्यगात्मानम्	१३.	मुझ अन्तरात्मा का
वैराग्य	४.	वैराग्य से	इह	१२	इस शरीर में ही
विजृम्भितेन ।	५.	परिपूर्ण	अवरुन्धे ॥	१४.	दर्शन करता है

श्लोकार्थ—प्रकृति के गुणों से उत्पन्न विषयों का त्याग करने से, वैराग्य से परिपूर्ण ज्ञान से योग से और मुझमें समर्पित की गई भक्ति से यह पुरुष इस शरीर में ही मुझ अन्तरात्मा का दर्शन करता है ॥

विंशः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—**काचित्त्वय्युचिता भक्तिः कीदृशी मम गोचरा ।**
यया पदं ते निर्वाणमञ्जसान्वाश्नवा अहम् ॥२८॥

पदच्छेद—

काचित् त्वयि उचिता भक्तिः कीदृशी मम गोचरा ।
यया पदम् ते निर्वाणम् अञ्जसा अन्वाश्नवा अहम् ॥

शब्दार्थ—

काचित्	२.	किस प्रकार की	यया	८.	जिससे
त्वयि	१.	(हे भगवान्) आपकी	पदम्	१२.	धाम को
उचिता	४.	उचित है (और)	ते	१०.	आपके
भक्तिः	३.	भक्ति	निर्वाणम्	११.	परम
कीदृशी	५.	किस तरह की (भक्ति)	अञ्जसा	१३.	सरलता से
मम	६.	मेरे	अन्वाश्नवा	१४.	प्राप्त कर सकूँ
गोचरा ।	७.	योग्य (है)	अहम्	९.	मैं

श्लोकार्थ— हे भगवन् ! किस प्रकार की भक्ति उचित है और किस तरह की भक्ति मेरे योग्य है । जिससे मैं आपके परम धाम को सरलता से प्राप्त कर सकूँ ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यो योगो भगवद्बाणो निर्वाणात्मंस्त्वयोदितः ।
कीदृशः कति चाङ्गानि यतस्तत्त्वावबोधनम् ॥२९॥

पदच्छेद—

यः योगः भगवतः बाणः निर्वाण आत्मन् त्वया उदितः ।
कीदृशः कति च अङ्गानि यतः तत्त्व अवबोधनम् ॥

शब्दार्थ—

यः	३.	जो	कीदृशः	११.	कैसा है
योगः	४.	योग	कति	१३.	कितने
भगवतः	५.	भगवान् की प्राप्ति का	च	१२.	और (उसके)
बाणः	६.	अचूक साधन है (और)	अङ्गानि	१४.	अङ्ग हैं
निर्वाण	१.	(हे प्रभो ! आप) मोक्ष	यतः	८.	जिससे
आत्मन्	२.	स्वरूप हैं	तत्त्व	९.	आत्म स्वरूप का
त्वया उदितः।	७.	(जिसे) आपने कहा है (तथा)	अवबोधनम् ॥	१०.	ज्ञान होता है (वह)

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप मोक्ष स्वरूप हैं ! जो योग भगवान् की प्राप्ति का अचूक साधन है । और जिसे आपने कहा है । तथा जिससे आत्म स्वरूप का ज्ञान होता है । वह कैसा है । और उसके कितने अङ्ग हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

तदेतन्मे विजानीहि यथाहं मन्दधीर्हरे ।
सुखं बुद्ध्येय दुर्बोधं योषा भवदनुग्रहात् ॥३०॥

पदच्छेद—

तद् एतद् मे विजानीहि यथा अहम् मन्दधीः हरे ।
सुखम् बुद्धचेय दुर्बोधम् योषा भवत् अनुग्रहात् ॥

शब्दार्थ—

तद्, एतद्	३.	उसे, इस प्रकार	सुखम्	१२.	सहज में (ही)
मे	२.	मुझे	बुद्धचेय	१३.	जान सकूँ
विजानीहि	४.	बतावें	दुर्बोधम्	११.	(उस) कठिन विषय को
यथा	५.	जिससे	योषा	८.	स्त्री जाति
अहम्	६.	मैं	भवत्	९.	आपकी
मन्दधीः	७.	मूढबुद्धि (और)	अनुग्रहात् ॥	१०.	कृपा से
हरे ।	१.	हे प्रभो !			

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! मुझे उसे इस प्रकार बतावें जिससे मैं मूढ बुद्धि और स्त्री जाति आपकी कृपा से उस कठिन विषय को सहज में ही जान सकूँ ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

मैत्रेयउवाच—

विदित्वार्थं कपिलो मातुरित्थं जातस्नेहो यत्र तन्वाभिजातः ।
तत्त्वाम्नायं यत्प्रवदन्ति सांख्यं प्रोवाच वै भक्तिवितानयोगम् ॥३१॥

पदच्छेद— विदित्वा अर्थम् कपिलः मातुः इत्थम् जात स्नेहः यत्रतन्वा अभिजातः ।
तत्त्व आम्नायम् यत् प्रवदन्ति सांख्यम् प्रोवाच वै भक्ति वितानयोगम् ॥

शब्दार्थ—

विदित्वा	७.	जानकर	तत्त्व	१५.	तत्त्वों को
अर्थम्	६.	इच्छा को	आम्नायम्	१६.	बताने वाला
कपिलः	१.	भगवान् कपिल	यत्	१४.	जिसे
मातुः	४.	(उस) माता की	प्रवदन्ति	१८.	कहते हैं
इत्थम्	५.	इस प्रकार की	सांख्यम्	१७.	सांख्य शास्त्र
जात	९.	उत्पन्न हो गया	प्रोवाच	१३.	वर्णन किया
स्नेहः	८.	(उनमें) प्रेम	वै	१०.	(अतः) उन्होंने
यत्रतन्वा	२.	जिसके शरीर से	भक्ति	११.	भक्ति का
अभिजातः ।	३.	उत्पन्न हुये थे	वितानयोगम् ॥	१२.	विस्तार करने वाले योग का

श्लोकार्थ— भगवान कपिल जिसके शरीर से उत्पन्न हुये थे; उस माता की इस प्रकार की इच्छा को जानकर उनमें प्रेम उत्पन्न हो गया। अतः उन्होंने भक्ति का विस्तार करने वाले योग का वर्णन किया। जिसे तत्त्वों को बताने वाला सांख्य शास्त्र कहते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—देवानां गुणलिङ्गानामानुश्रविककर्मणाम् ।
सत्त्व एवैकमनसो वृत्तिः स्वाभाविकी तु या ॥३२॥

पदच्छेद—

देवानाम् गुण लिङ्गानाम् आनुश्रविकम् कर्मणाम् ।
सत्त्व एव एक मनसः वृत्तिः स्वाभाविकी तु या ॥

शब्दार्थ—

देवानाम्	७.	इन्द्रियाँ	एक	१.	एक मात्र (भगवान् में)
गुण	५.	विषयों का	मनसः	२.	मन लगाये हुये (लोगों की)
लिङ्गानम्	६.	ज्ञान कराने वाली	वृत्तिः	१०.	लगी रहती है
आनुश्रविकम्	३.	वैदिक	स्वाभाविकी	१२.	स्वाभाविक है
कर्मणाम् ।	४.	कर्मों में लगी हुई (तथा)	तु	११.	वह
सत्त्व एव	८.	सत्त्व मूर्ति श्री हरि में ही	या ॥	९.	जो

श्लोकार्थ—एक मात्र भगवान् में मन लगाये हुये लोगों की वैदिक कर्मों में लगी हुई। तथा विषयों का ज्ञान कराने वाली इन्द्रियाँ सत्त्वमूर्ति श्री हरि में ही जो लगी रहती हैं। वह स्वाभाविक है ॥

त्रयस्त्रिंः श्लोकः

अनिमित्ता भागवती भक्तिः सिद्धेर्गरीयसी ।
जरयत्याशु या कोशं निगीर्णमनलो यथा ॥३३॥

पदच्छेद—

अनिमित्ता भागवती भक्तिः सिद्धेः गरीयसी ।
जरयति आशु या कोशम् निगीर्णम् अनलः यथा ॥

शब्दार्थ—

अनिमित्ता	२.	अहैतुकी	**आशु**	११.	तत्काल
भागवती	१.	(वह) भगवान् की	**या**	९.	उसी प्रकार वह
भक्तिः	३.	भक्ति है	**कोशम्**	१०.	सूक्ष्म शरीर को
सिद्धेः	४.	जो मोक्ष से	**निगीर्णम्**	८.	खाये हुये को (पचा देती है)
गरीयसी ।	५.	बढ़ कर है	**अनलः**	७.	जठराग्नि
जरयति	१२.	भस्म कर देती है	**यथा ॥**	६.	जैसे

श्लोकार्थ—वह भगवान् की अहैतुकी भक्ति है जो मोक्ष से बढ़कर है; जैसे जठराग्नि खाये हुये को पचा देती है उसी प्रकार वह सूक्ष्म शरीर को तत्काल भस्म कर देती है ॥

चतुस्त्रिंः श्लोकः

नैकात्मतां मे स्पृहयन्ति केचिन्मत्पादसेवाभिरता मदीहाः ।
येऽन्योन्यतो भागवताः प्रसज्य सभाजयन्ते मम पौरुषाणि ॥३४॥

पदच्छेद—

न एक आत्मताम् मे स्पृहयन्ति केचित् मत् पाद्सेवा अभिरता मदीहाः ।
ये अन्योन्यतः भागवताः प्रसज्य सभाजयन्ते मम पौरुषाणि ॥

शब्दार्थ—

न	१४.	नहीं	**ये**	१.	जो
एक आत्मताम्	१३.	सायुज्य मोक्ष की भी	**अन्योन्यतः**	६.	आपस में
मे	१२.	मेरे	**भागवताः**	५.	भक्त जन हैं (वे)
स्पृहयन्ति	१५.	इच्छा करते हैं	**प्रसज्य**	७	मिलकर
केचित्	११.	(इस प्रकार के) कुछ भक्त जन	**सभाजयन्ते**	१०.	आदर के साथ चर्चा करते हैं
मत् पाद्सेवा	२.	मेरे, चरणों की सेवा में	**मम**	८.	मेरे
अभिरता	३.	प्रेम करने वाले (और)	**पौरुषाणि ॥**	९.	पराक्रमों की
मदीहाः ।	४.	मेरी इच्छा वाले			

श्लोकार्थ—जो मेरे चरणों की सेवा में प्रेम करने वाले और मेरी इच्छा वाले भक्त जन हैं वे आपस में मिलकर मेरे पराक्रमों की आदर के साथ चर्चा करते हैं। इस प्रकार के कुछ भक्त जन मेरे सायुज्य मोक्ष की भी इच्छा नहीं करते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

पश्यन्ति ते मे रुचिराण्यम्ब सन्तः प्रसन्नवक्त्रारुणलोचनानि ।
रूपाणि दिव्यानि वरप्रदानि साकं वाचं स्पृहणीयां वदन्ति ॥३५॥

पदच्छेद— पश्यन्ति ते मे रुचिराणि अम्ब सन्तः प्रसन्न वक्त्र अरुण लोचनानि ।
रूपाणि दिव्यानि वरप्रदानि साकम् वाचम् स्पृहणीयाम् वदन्ति ॥

शब्दार्थ—

पश्यन्ति	१०.	झाँकी करते हैं (तथा)	रूपाणि	९.	रूपों की
ते	६.	वे	दिव्यानि	८.	अलौकिक
मे रुचिराणि	६.	मेरे सुन्दर	वर प्रदानि	७.	वर दायक (और)
अम्ब	१.	हे मातः ।	साकम्	११.	उनके साथ
सन्तः	३.	सन्तजन	वाचम्	१२.	सम्भाषण करते हैं
प्रसन्न वक्त्र	४.	प्रसन्न, मुखारविन्द (और)	स्पृहणीयाम्	१३.	जिसकी योगिजन इच्छा
अरुण लोचनानि ।	५.	लाल आँखों से युक्त	वदन्ति ॥	१४.	करते हैं

श्लोकार्थ—हे मातः । वे सन्तजन प्रसन्न मुखारविन्द और लाल आँखों से युक्त मेरे सुन्दर वर दायक और अलौकिक रूपों की झाँकी करते हैं । तथा उनके साथ सम्भाषण करते हैं जिसकी योगिजन इच्छा करते हैं ।।

षट्त्रिंशः श्लोकः

तैर्दर्शनीयावयवैरुदारविलासहासेक्षितवामसूक्तैः ।
हृतात्मनो हृतप्राणांश्च भक्तिरनिच्छतो मे गतिमण्वीं प्रयुङ्क्ते ॥३६॥

पदच्छेद—तैः दर्शनीय अवयवैः उदार विलास हास ईक्षित वाम सूक्तैः ।
हृत आत्मनः हृत प्राणान् च भक्तिः अनिच्छतः मे गतिम् अण्वीम् प्रयुङ्क्ते ॥

शब्दार्थ—

तैः	६.	उन रूपों से (जिनका)	हृत	११.	तल्लीन हो गईं हैं
दर्शनीय	१.	मनोहर	प्राणान्	१०.	इन्द्रियाँ
अवयवैः	२.	अङ्ग	च	९.	और (उनमें)
उदार, विलास	३.	उन्मुक्त, हाव-भाव	भक्तिः	१३.	भक्ति (उन भक्तों के)
हास ईक्षित	४.	मुसकान भरी, चितवन (और)	अनिच्छतः	१४.	न चाहने पर भी
वाम, सूक्तैः ।	५.	सुन्दर वचनों से युक्त	मे	१२.	मेरी
हृत	८.	चुरा लिया गया है	गतिम्	१६.	पद
आत्मनः	७.	शरीर	अण्वीम्	१५.	उन्हें परम्
			प्रयुङ्क्ते ॥	१७.	प्रदान करती है

श्लोकार्थ—मनोहर अङ्ग उन्मुक्त, हाव-भाव मुसकान भरी चितवन और सुन्दर वचनों से युक्त उन रूपों से जिनका शरीर चुरा लिया गया है । और उनमें इन्द्रियाँ तल्लीन हो गईं हैं । मेरी भक्ति उन भक्तों के न चाहने पर भी उन्हें परम पद प्रदान करती है ।।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

अथो विभूतिं मम मायाविनस्तामैश्वर्यमष्टाङ्गमनुप्रवृत्तम् ।
श्रियं भागवतीं वा स्पृहयन्ति भद्रां परस्य मे तेऽश्नुवते तु लोके ॥३७॥

पदच्छेद—अथो विभूतिम् मम मायाविनः ताम् ऐश्वर्यम् अष्टाङ्गम् अनुप्रवृत्तम् ।
श्रियम् भागवतीम् वास्पृहयन्ति भद्राम् परस्य मे ते अनुवते तु लोके ॥

शब्दार्थ—

अथो	१.	तदनन्तर	भागवतीम्	१०.	भगवदीय
विभूतिम्	५.	भोग सम्पत्ति	वास्पृहयन्ति	१२.	इच्छा नहीं करते हैं
मम	२.	मुझ	भद्राम्	९.	मंगलमय
मायाविनः	३.	माया पति की	परस्य	१५.	परमात्मा के
ताम्	४.	तीनों लोकों में प्रसिद्ध	मे	१४.	मुझ
ऐश्वर्यम्	८.	ऐश्वर्य (अथवा)	ते	१७.	उन्हें (उसका)
अष्टाङ्गम्	७.	आठ प्रकार के	अनुवते	१८.	भोग प्राप्त होता ही है
अनुप्रवृत्तम् ।	६.	स्वयं प्रकाश होने वाले	तु	१३.	किन्तु
श्रियम्	११.	शोभा की (भी)	लोके ॥	१६.	वैकुण्ठ लोक में

श्लोकार्थ—तदनन्तर मुझ माया पति की तीनों लोकों में प्रसिद्ध भोग सम्पत्ति स्वयं प्रकाश होने वाले आठ प्रकार के ऐश्वर्य अथवा मंगलमय भगवदीय शोभा की भी इच्छा नहीं करते हैं । किन्तु मुझ परमात्मा के वैकुण्ठलोक में उन्हें उसका भोग प्राप्त होता ही है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

न कर्हिचिन्मत्पराः शान्तरूपे नङ्क्ष्यन्ति नो मेऽनिमिषो लेढि हेतिः ।
येषामहं प्रिय आत्मा सुतश्च सखा गुरुः सुहृदो दैवमिष्टम् ॥३८॥

पदच्छेद— न कर्हिचित् मत्पराः शान्तरूपे नङ्क्ष्यन्ति नो मे अनिमिषः लेढि हेतिः ।
येषाम् प्रियः आत्मा सुतः च सखा गुरुः सुहृदः दैवम् इष्टम् ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	हेतिः ।	११.	चक्रभी (उन्हें)
कर्हिचित्	१२.	कभी भी	येषाम्, अहम्	१.	जिनका मैं
मत्पराः	९.	मेरे आश्रय में रहने वाले वे भक्त	प्रियः	२.	प्रिय पात्र
शान्तरूपे	१०.	शान्त स्वरूप (वैकुण्ठ लोक में)	आत्मा, सुतः	३.	शरीर, पुत्र
नङ्क्ष्यन्ति	१३.	नष्ट होते (और)	च	६.	और
नो	१६.	नहीं	सखा, गुरु,	४.	मित्र, गुरु
मे अनिमिषः	१४.	मेरा काल	सुहृदः	५.	हितैषी
लेढि	१७.	ग्रस्ता है	दैवम्	८.	देव हूँ
			इष्टम् ॥	७.	इष्ट

श्लोकार्थ—जिनका मैं प्रिय पात्र शरीर, पुत्र, मित्र, गुरु, हितैषी और इष्ट देव हूँ । मेरे आश्रय में रहने वाले वे भक्त शान्त स्वरूप वैकुण्ठ लोक में कभी भी नष्ट नहीं होते हैं । और मेरा काल चक्र भी उन्हें नहीं ग्रस्ता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

इमं लोकं तथैवामुमात्मानमुभयायिनम् ।
आत्मानमनु ये चेह ये रायः पशवो गृहाः ॥३९॥

पदच्छेद—

इमम् लोकम् तथैव अमुम् आत्मानम् उभयायिनम् ।
आत्मानम् अनु ये च इह ये रायः, पशवः गृहाः ॥

शब्दार्थ—

इमम्	१.	इस	आत्मानम्	९.	अपने
लोकम्	२.	लोक को (और)	अनु	१०.	सम्बन्धी हैं
तथैव	४.	उसी प्रकार	ये	११.	और जो
अमुम्	३.	परलोक को तथा	च	७.	और
आत्मानम्	६.	सूक्ष्म शरीर को	इह, ये	८.	इस संसार में जो
उभयायिनम् ।	५	दोनों लोकों में साथ रहने वाले	रायः, पशवः	१२.	धन, सम्पत्ति, पशु
गृहाः ॥	१३.	घर (इत्यादि हैं उसे छोड़देना चाहिये)			

श्लोकार्थ—इस लोक को और परलोक को तथा उसी प्रकार दोनों लोकों में साथ रहने वाले सूक्ष्म शरीर को और इस संसार में जो अपने सम्बन्धी हैं। और जो धन सम्पत्ति-पशु घर इत्यादि है उसे छोड़ देना चाहिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

विसृज्य सर्वानन्यांश्च मामेवं विश्वतोमुखम् ।
भजन्त्यनन्यया भक्त्या तान्मृत्योरति पारये ॥४०॥

पदच्छेद—

विसृज्य सर्वान् अन्यान् च माम् एवम् विश्वतोमुखम् ।
भजन्ति अनन्यया भक्त्या तान् मृत्योः अति पारये ॥

शब्दार्थ—

विसृज्य	४.	छोड़ कर	भजन्ति	१०.	भजन करते हैं
सर्वान्	१.	इन सब को	अनन्यया	७.	अनन्य
अन्यान्	३.	दूसरों को	भक्त्या	८.	भक्ति के द्वारा (जो)
च	२.	और	तान्	११.	मैं (उन्हें)
माम्	९.	मेरा	मृत्योः	१२.	मृत्यु के भय से
एवम्	५.	इस प्रकार	अति	१३.	मुक्त
विश्वतो मुखम्	६.	चारों ओर से	पारये ॥	१४.	कर देता हूँ

श्लोकार्थ—इन सब को और दूसरों को छोड़कर इस प्रकार चारों ओर से अनन्य भक्ति के द्वारा जो मेरा भजन करते हैं। मैं उन्हें मृत्यु के भय से मुक्त कर देता हूँ ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

नान्यत्र मद्भगवतः प्रधानपुरुषेश्वरात् ।
आत्मनः सर्वभूतानां भयं तीव्रं निवर्तते ॥४१॥

पदच्छेद—

न अन्यत्र मद्भगवतः प्रधान पुरुष ईश्वरात् ।
आत्मनः सर्व भूतानाम् भयम् तीव्रम् निवर्तते ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	आत्मनः	६.	आत्मा हूँ
अन्यत्र	८.	किसी दूसरे से	सर्व	४.	सभी
मद्भगवतः	७.	मुझ भगवान् के अतिरिक्त	भूतानाम्	५.	प्राणियों की
प्रधान	१.	(मैं) प्रकृति और	भयम्	१०.	भय
पुरुष	२.	पुरुष का	तीव्रम्	९.	संसार का भयंकर
ईश्वरात् ।	३.	स्वामी हूँ	निवर्तते ॥	१२.	दूर हो सकता है

श्लोकार्थ—मैं प्रकृति और पुरुष का स्वामी हूँ । सभी प्राणियों की आत्मा हूँ । मुझ भगवान् के अतिरिक्त किसी दूसरे से संसार का भयंकर भय दूर नहीं हो सकता है ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

मद्भयाद्वाति वातोऽयं सूर्यस्तपति मद्भयात् ।
वर्षतीन्द्रो दहत्यग्निर्मृत्युश्चरति मद्भयात् ॥४२॥

पदच्छेद—

मद्भयात् वाति वातः अयम् सूर्यः तपति मद्भयात् ।
वर्षति इन्द्रः दहति अग्निः मृत्युः चरति मद् भयात् ॥

शब्दार्थ—

मद्भयात्	१.	मेरे भय से	वर्षति	१२.	वर्षा करता है
वाति	४.	बहती है	इन्द्रः	११.	इन्द्र
वातः	३.	हवा	दहति	१४.	जलाती है
अयम्	२.	यह	अग्निः	१३.	आग
सूर्यः	७.	सूर्य	मृत्युः	१५.	मौत
तपति	८.	तपता है	चरति	१६.	अपना काम करती है
मद्	५.	मेरे	मद्	९.	मेरे
भयात् ।	६.	भय से	भयात् ॥	१०.	भय से

श्लोकार्थ—मेरे भय से यह हवा बहती है; मेरे भय से सूर्य तपता है । मेरे भय से इन्द्र वर्षा करता है, आग जलाती है; मौत अपना काम करती है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

ज्ञानवैराग्ययुक्तेन भक्तियोगेन योगिनः ।
क्षेमाय पादमूलं मे प्रविशन्त्यकुतोभयम् ॥४३॥

पदच्छेद—

ज्ञान वैराग्य युक्तेन भक्ति योगेन योगिनः ।
क्षेमाय पादमूलम् मे प्रविशन्ति अकुतोभयम् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान	२.	ज्ञान (और)	क्षेमाय	७.	अपने कल्याण के लिये
वैराग्य	३.	वैराग्य से	पादमूलम्	११.	चरणों का
युक्तेन	४.	परिपूर्ण	मे	१०.	मेरे
भक्ति	५.	भक्ति	प्रविशन्ति	१२.	सहारा लेते हैं
योगेन	६.	योग के द्वारा	अकुतो	९.	होकर
योगिनः ।	१.	योगिजन	भयम् ॥	८.	निर्भय

श्लोकार्थ—योगिजन ज्ञान और वैराग्य से परिपूर्ण भक्ति योग के द्वारा अपने कल्याण के लिये निर्भय होकर मेरे चरणों का सहारा लेते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसां निःश्रेयसोदयः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन मनो मय्यर्पितं स्थिरम् ॥४४॥

पदच्छेद—

एतावान् एव लोके अस्मिन् पुंसाम् निःश्रेयस उदयः ।
तीव्रेण भक्तिः योगेन मनः मयि अर्पितम् स्थिरम् ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	४.	सबसे बड़ी	तीव्रेण	९.	तीव्र
एव	५.	वही	भक्ति	१०.	भक्ति
लोके	२.	संसार में	योगेन	११.	योग के द्वारा
अस्मिन्	१.	इस	मनः	८.	चित्त
पुंसाम्	३.	मनुष्यों की	मयि	१२.	मुझमें
निःश्रेयस	६.	कल्याण की	अर्पितम्	१३.	समर्पित (होकर)
उदयः ।	७.	प्राप्ति है (कि) (उसका)	स्थिरम् ॥	१४.	स्थिर हो जाये

श्लोकार्थ—इस संसार में मनुष्यों की सब से बड़ी वही कल्याण की प्राप्ति है । कि उसका चित्त तीव्र भक्ति योग के द्वारा मुझमें समर्पित होकर स्थिर हो जाये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये
पञ्चविंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२५॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

षड्विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि तत्त्वानां लक्षणं पृथक् ।
यद्विदित्वा विमुच्येत पुरुषः प्राकृतैर्गुणैः ॥१॥

पदच्छेद—

अथ ते सम्प्रवक्ष्यामि तत्त्वानाम् लक्षणम् पृथक् ।
यद् विदित्वा विमुच्येत पुरुषः प्राकृतैः गुणैः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	हे मातः ! अब मैं	**यद्**	७.	जिसे
ते	२.	तुम्हें	**विदित्वा**	८.	जान कर
सम्प्रवक्ष्यामि	६.	बताऊँगा	**विमुच्येत**	१२.	मुक्त हो जाता है
तत्त्वानाम्	३.	तत्त्वों का	**पुरुषः**	९.	पुरुष
लक्षणम्	५.	स्वरूप	**प्राकृतैः**	१०.	प्रकृति के
पृथक् ।	४.	अलग-अलग	**गुणैः ॥**	११.	सत्त्वादि गुणों से

श्लोकार्थ—हे मातः ! अब मैं तुम्हें तत्त्वों का अलग-अलग स्वरूप बताऊँगा । जिसे जानकर पुरुष प्रकृति के सत्त्वादि गुणों से मुक्त हो जाता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

ज्ञानं निःश्रेयसार्थाय पुरुषस्यात्मदर्शनम् ।
यदाहुर्वर्णये तत्ते हृदयग्रन्थिभेदनम् ॥२॥

पदच्छेद—

ज्ञानम् निःश्रेयस अर्थाय पुरुषस्य आत्म दर्शनम् ।
यद् आहुः वर्णये तत् ते हृदय ग्रन्थि भेदनम् ॥

शब्दार्थं—

ज्ञानम्	४.	ज्ञान को	**यद्**	३.	जिस
निःश्रेयस	६.	कल्याण का	**आहुः**	८.	कहा गया है (तथा जो)
अर्थाय	७.	साधन	**वर्णये**	१२.	वर्णन करता हूँ
पुरुषस्य	५.	पुरुष के	**तत् ते**	११.	उसका तुमसे
आत्म	१.	(हे मातः !) आत्मा का	**हृदय, ग्रन्थि**	९.	हृदय के, अज्ञान की ग्रन्थि को
दर्शनम् ।	२.	दर्शन कराने वाले	**भेदनम् ॥**	१०.	काटने वाला है

श्लोकार्थ—हे मातः ! आत्मा का दर्शन कराने वाले जिस ज्ञान को पुरुष के कल्याण का साधन कहा गया है । तथा जो हृदय के अज्ञान की ग्रन्थि को काटने वाला है । उसका तुमसे वर्णन करूँगा ॥

तृतीयः श्लोकः

अनादिरात्मा पुरुषो निर्गुणः प्रकृतेः परः ।
प्रत्यग्धामा स्वयंज्योतिर्विश्वं येन समन्वितम् ॥३॥

पदच्छेद—

अनादिः आत्मा पुरुषः निर्गुणः प्रकृतेः परः ।
प्रत्यग्धामा स्वयं ज्योतिः विश्वम् येन समन्वितम् ॥

शब्दार्थ—

अनादिः	४	अनादि	प्रत्यग्धामा	७.	अन्तःरात्मा (और)
आत्मा	६.	आत्मा है (वह सबकी)	स्वयं	८.	स्वयम्
पुरुषः	५.	पुरुष ही	ज्योतिः	९.	प्रकाश (है)
निर्गुणः	३.	निर्गुण	विश्वम्	११.	सारा संसार
प्रकृतेः	१.	प्रकृति से	येन	१०.	जिससे
परः ।	२.	परे	समन्वितम् ॥	१२.	व्याप्त है

श्लोकार्थ—प्रकृति से परे निर्गुण अनादि पुरुष ही आत्मा है। वह सबकी अन्तरात्मा और स्वयम् प्रकाश है। जिससे सारा संसार व्याप्त है॥

चतुर्थः श्लोकः

स एष प्रकृतिं सूक्ष्मां दैवीं गुणमयीं विभुः ।
यदृच्छयैवोपगतामभ्यपद्यत लीलया ॥४॥

पदच्छेद—

सः एषः प्रकृतिम् सूक्ष्माम् दैवीम् गुणमयीं विभुः ।
यदृच्छया एव उपगताम् अभ्यपद्यत लीलया ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उस	यदृच्छया	४.	स्वेच्छा से
एषः	३.	परमात्मा ने	एव	५.	ही
प्रकृतिम्	१०.	प्रकृति को	उपगताम्	६.	(अपने) पास आई हुई
सूक्ष्माम्	९.	अव्यक्त	अभ्यपद्यत	१२.	स्वीकार कर लिया
दैवीम्	८.	पदार्थ प्रकाशिका	लीलया ॥	११.	सहज में
गुणमयीं	७.	सत्त्वादि गुण स्वरूपा (और)	विभुः ।	२.	व्यापक

श्लोकार्थ—उस व्यापक परमात्मा ने स्वेच्छा से ही अपने पास आई हुई सत्त्वादि गुण स्वरूपा और अव्यक्त प्रकृति को सहज में स्वीकार कर लिया॥

पञ्चमः श्लोकः

गुणैर्विचित्राः सृजतीं सरूपाः प्रकृतिं प्रजाः ।
विलोक्य मुमुहे सद्यः स इह ज्ञानगूहया ॥५॥

पदच्छेद—

गुणैः विचित्राः सृजतीम् सरूपाः प्रकृतिम् प्रजाः ।
विलोक्य मुमुहे सद्यः सः इह ज्ञानगूहया ॥

शब्दार्थ—

गुणैः	२.	सत्त्वादि गुणों से	विलोक्य	८.	देख कर
विचित्राः	४.	अनेक प्रकार की	मुमुहे	१२.	मोहित हो गये
सृजतीम्	६.	सृष्टि करती हुई	सद्यः	११.	तत्काल
सरूपाः	३.	समान रूप वाली	सः	९.	वह परमात्मा
प्रकृतिम्	७.	प्रकृति को	इह	१.	संसार में
प्रजाः।	५.	प्रजाओं की	ज्ञानगूहया ॥	१०.	ज्ञान के आवरण से ढकाहोने के कारण

श्लोकार्थ— संसार में सत्त्वादि गुणों से समानरूप वाली अनेक प्रकार की प्रजाओं की सृष्टि करती हुई प्रकृति को देखकर वह परमात्मा ज्ञान के आवरण से ढका होने के कारण तत्काल मोहित हो गया ॥

षष्ठः श्लोकः

एवं पराभिध्यानेन कर्तृत्वं प्रकृतेः पुमान् ।
कर्मसु क्रियमाणेषु गुणैरात्मनि मन्यते ॥६॥

पदच्छेद—

एवम् पर अभिध्यानेन कर्तृत्वम् प्रकृतेः पुमान् ।
कर्मसु क्रियमाणेषु गुणैः आत्मनि मन्यते ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	कर्मसु	६.	कर्मों में
पर	२.	प्रकृति के	क्रियमाणेषु	५.	किये जाते हुये
अभिध्यानेन	३.	स्वरूप का चिन्तन करने से	गुणैः	९.	गुणों के द्वारा
कर्तृत्वम्	८.	कर्ता पन को	आत्मनि	१०.	अपने में
प्रकृतेः	७.	प्रकृति के	मन्यते ॥	११.	समझने लगता है
पुमान्।	४.	पुरुष			

श्लोकार्थ—इस प्रकार प्रकृति के स्वरूप का चिन्तन करने से पुरुष किये जाते हुये कर्मों में प्रकृति के कर्तापन को गुणों के द्वारा अपने में समझने लगता है ॥

सप्तमः श्लोकः

तदस्य संसृतिर्बन्धः पारतन्त्र्यं च तत्कृतम् ।
भवत्यकर्तुरीशस्य साक्षिणो निर्वृतात्मनः ॥७॥

पदच्छेद—

तद् अस्य संसृतिः बन्धः पारतन्त्र्यम् च तत् कृतम् ।
भवति अकर्तुः ईशस्य साक्षिणः निवृत आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

तद्	७.	वही	भवति	१३.	होती है
अस्य	६.	इस पुरुष का	अकर्तुः	१.	अकर्ता
संसृतिः	८.	जन्म-मरण रूप	ईशस्य	२.	स्वाधीन
बन्धः	९.	बन्धन है	साक्षिणः	३.	साक्षी (और)
पारतन्त्र्यम्	१२.	पराधीनता	निवृत	४.	आनन्द
च	१०.	और	आत्मनः ॥	५.	स्वरूप
तत् कृतम् ।	११.	उसी के कारण			

श्लोकार्थ—अकर्ता, स्वाधीन, साक्षी और आनन्द स्वरूप इस पुरुष का वही जन्म-मरण रूप बन्धन है। और उसी के कारण पराधीनता होती है ॥

अष्टमः श्लोकः

कार्यकारणकर्तृत्वे कारणं प्रकृतिं विदुः ।
भोक्तृत्वे सुखदुःखानां पुरुषं प्रकृतेः परम् ॥८॥

पदच्छेद—

कार्य-कारण कर्तृत्वे कारणम् प्रकृतिम् विदुः ।
भोक्तृत्वे सुख दुःखानाम् पुरुषम् प्रकृतेः परम् ॥

शब्दार्थ—

कार्य	२.	शरीरादि कार्य	भोक्तृत्वे	१०.	भोक्तापन का
कारण	३.	इन्द्रियादि कारण (और)	सुख	८.	सभी सुखों (और)
कर्तृत्वे	]४.	उसके देवता का (तथा)	दुःखानाम्	९.	दुःखों के
कारणम्	११.	कारण	पुरुषम्	७.	पुरुष को
प्रकृतिम्	१.	प्रकृति के	प्रकृतेः	५.	प्रकृति से
विदुः ।	१२.	कहा गया है	परम् ॥	६.	परे

श्लोकार्थ—प्रकृति के शरीरादि कार्य, इन्द्रयादि कारण और उसके देवता का तथा प्रकृति से परे पुरुष को सभी सुखों और दुखों के भोक्तापन का कारण कहा गया है ॥

नवमः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—प्रकृतेः पुरुषस्यापि लक्षणं पुरुषोत्तम ।
ब्रूहि कारणयोरस्य सदसच्च यदात्मकम् ॥९॥

पदच्छेद—

प्रकृतेः पुरुषस्य अपि लक्षणम् पुरुषोत्तम् ।
ब्रूहि कारणयोः अस्य सद् असद् च यद् आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतेः	४.	प्रकृति	कारणयोः	३.	कारण
पुरुषस्य	६.	पुरुष का	अस्य	२.	इस संसार के
अपि	५.	और	सद्	७.	सत्
लक्षणम्	११.	उस स्वरूप को भी	असद्	९.	असत्
पुरुषोत्तम् ।	१.	हे पुरुषोत्तम !	च	८.	और
ब्रूहि	१२.	बतावें	यद् आत्मकम् ॥	१०.	जो स्वरूप है

श्लोकार्थ—हे पुरुषोत्तम ! इस संसार के कारण प्रकृति और पुरुष का सत् और असत् जो स्वरूप है उस स्वरूप को भी बतावें ॥

दशमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच-यत्तत्त्रिगुणमव्यक्तं नित्यं सदसदात्मकम् ।
प्रधानं प्रकृतिं प्राहुरविशेषं विशेषवत् ॥१०॥

पदच्छेद—

यत् तत् त्रिगुणम् अव्यक्तम् नित्यम् सद्-असद् आत्मकम् ।
प्रधानम् प्रकृतिम् प्राहुः अविशेषम् विशेषवत् ॥

शब्दार्थ—

यत्	६.	जो	आत्मकम् ।	५.	रूप
तत्	८.	उसे	प्रधानम्	७.	प्रधान तत्त्व है
त्रिगुणम्	१.	हे मातः ! सत्त्वादि तीनों गुणों से युक्त	प्रकृतिम्	९.	प्रकृति
अव्यक्तम्	२.	सूक्ष्म	प्राहुः	१०.	कहते हैं
नित्यम्	३.	नित्य (और)	अविशेषम्	११.	वह निर्विशेष होकर भी
सद्-असद्	४.	कार्य-कारण	विशेषवत् ॥	१२.	विशेष धर्मों से युक्त है

श्लोकार्थ—हे मातः ! सत्त्वादि तीनों गुणों से युक्त सूक्ष्म, नित्य और कार्य-कारण रूप जो प्रधान तत्त्व हैं; उसे प्रकृति कहते हैं। वह निर्विशेष होकर भी विशेष धर्मों से युक्त है ॥

एकादशः श्लोकः

पञ्चभिः पञ्चभिर्ब्रह्म चतुर्भिर्दशभिस्तथा ।
एतच्चतुर्विंशतिकं गणं प्राधानिकं विदुः ॥११॥

पदच्छेद—

पञ्चभिः पञ्चभिः ब्रह्म चतुर्भिः दशभिः तथा ।
एतद् चतुर्विंशतिकम् गणम् प्राधानिकम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

पञ्चभिः	२.	पञ्च महाभूत	एतद्	७.	इस
पञ्चभिः	३.	पाँच तन्मात्रा	चतुर्विंशतिकम्	८.	चौबीस तत्त्वों के
ब्रह्म	१.	भगवान् ने कहा हे मातः !	गणम्	९.	समूह को (विद्वान लोग)
चतुर्भिः	४.	चार अन्तःकरण	प्राधानिकम्	१०.	प्रकृति का कार्य
दशभिः	६.	दस इन्द्रियां	विदुः ॥	११.	मानते हैं
तथा ।	५.	तथा			

श्लोकार्थ—भगवान् ने कहा हे मातः । पञ्च महाभूत पांच तन्मात्रा, चार अन्तःकरण तथा दस इन्द्रियाँ इन चौबीस तत्त्वों के समूह को विद्वान लोग प्रकृति का कार्य मानते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

महाभूतानि पञ्चैव भूरापोऽग्निर्मरुन्नभः ।
तन्मात्राणि च तावन्ति गन्धादीनि मतानि मे ॥१२॥

पदच्छेद—

महाभूतानि पञ्च एव भूः अपि अग्निः मरुत् नभः ।
तन्मात्राणि च तावन्ति गन्ध आदिनि मतानि मे ॥

शब्दार्थ—

महाभूतानि	७.	महाभूत हैं	तन्मात्राणि	१२.	तन्मात्रायें
पञ्च एव	६.	ये पांच	च	८.	तथा
भूः	१.	पृथ्वी	तावन्ति	११.	उतनी ही
अपिः	२.	जल	गन्ध	९.	गन्ध
अग्निः	३.	तेज़	आदिनि	१०.	रस, रूप, स्पर्श, शब्द
मरुत्	४.	वायु (और)	मतानि	१४.	मानी गई है
नभः ।	५.	आकाश	मे ॥	१३.	मेरे द्वारा

श्लोकार्थ—पृथ्वी, जल, तेज़, वायु और आकाश ये पांच महाभूत हैं, तथा गन्ध रस, रूप, स्पर्श, शब्द उतनी ही तन्मात्रायें मेरे द्वारा मानी गई हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इन्द्रियाणि दश श्रोत्रं त्वग्दृग्रसननासिकाः ।
वाक्करौ चरणौ मेढ्ं पायुर्दशम उच्यते ॥१३॥

पदच्छेद—

इन्द्रियाणि दश श्रोत्रम् त्वक् दृक् रसन नासिकाः ।
वाक् करौ चरणौ मेढ्म् पायुः दशमः उच्यते ॥

शब्दार्थं—

इन्द्रियाणि	१.	इन्द्रियाँ	वाक्	८.	वाणी
दश	२.	दश हैं (ये)	करौ	९.	हाथ
श्रोत्रम्	३.	कान	चरणौ	१०.	पैर
त्वक्	४.	चमड़ी	मेढ्म्	११.	जननेन्द्रिय (तथा)
दृक्	५.	आँख	पायुः	१३.	गुदा
रसन	६.	जिह्वा	दशमः	१२.	दस इन्द्रियाँ
नासिकाः ।	७.	नाक	उच्यते ॥	१४.	कही जाती हैं

श्लोकार्थ—इन्द्रियाँ दस हैं; ये कान, चमड़ी, आँख, जिह्वा, नाक, वाणी, हाथ, पैर, जननेन्द्रि तथा गुदा दस इन्द्रियाँ कही जाती हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

मनो बुद्धिरहङ्कारश्चित्तमित्यन्तरात्मकम् ।
चतुर्धा लक्ष्यते भेदो वृत्त्या लक्षणरूपया ॥१४॥

पदच्छेद—

मनः बुद्धिः अहंकारः चित्तम् इति अन्तरात्मकम् ।
चतुर्धा लक्ष्यते भेदः वृत्त्या लक्षण रूपया ॥

शब्दार्थं—

मनः	५.	मन	चतुर्धा	१०.	चार
बुद्धिः	६.	बुद्धि	लक्ष्यते	१२.	होते हैं
अहंकारः	७.	अहंकार (और)	भेदः	११.	भेद
चित्तम्	८.	चित्त	वृत्त्या	३.	वृत्ति के कारण
इति	९.	इस प्रकार	लक्षण	१.	लक्षण
अन्तरात्मकम् ।	४.	अन्तःकरण के	रूपया ॥	२.	स्वरूप

श्लोकार्थ—लक्षण, स्वरूप, वृत्ति के कारण अन्तःकरण के मन, बुद्धि, अहंकार और चित्त इस प्रकार चार भेद होते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

एतावानेव सङ्ख्यातो ब्रह्मणः सगुणस्य ह ।
सन्निवेशो मया प्रोक्तो यः कालः पञ्चविंशकः ॥१५॥

पदच्छेद—

एतावान् एव संख्यातः ब्रह्मणः सगुणस्य ह ।
सन्निवेश मया प्रोक्तः यः कालः पञ्चविंशकः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	४.	इतनी	सन्निवेश	६.	रचना
एव	५.	ही	मया	१.	मैंने
संख्यातः	७.	गिनाई है (और)	प्रोक्तः	८.	बतलायी है
ब्रह्मणः	३.	परमात्मा की	यः	१०.	जो
सगुणस्य	२.	सगुण	कालः	११.	काल है
ह ।	९.	तथा	पञ्चविंशकः ॥	१२.	वह पच्चीसवां तत्त्व है

श्लोकार्थ—मैंने सगुण परमात्मा की इतनी ही रचना गिनाई है और बतलायी है, तथा जो काल है वह पच्चीसवां तत्त्व है ॥

षोडशः श्लोकः

प्रभावं पौरुषं प्राहुः कालमेके यतो भयम् ।
अहङ्कारविमूढस्य कर्तुः प्रकृतिमीयुषः ॥१६॥

पदच्छेद—

प्रभावम् पौरुषम् प्राहुः कालम् एके यतः भयम् ।
अहंकार विमूढस्य कर्तुः प्रकृतिम् ईयुषः ॥

शब्दार्थ—

प्रभावम्	४.	सामर्थ्य	भयम् ।	१२.	भय होता है
पौरुषम्	३.	पुरुष का	अहंकार	६.	अहंकार से
प्राहुः	५.	कहते हैं	विमूढस्य	७.	मोहित तथा
कालम्	२.	काल को	कर्तुः	१०.	कर्ता जीव को
एके	१.	कुछ लोग	प्रकृतिम्	८.	प्रकृति के धर्म को
यतः	११.	जिस काल से	ईयुषः ॥	९.	अपना समझने वाले

श्लोकार्थ—कुछ लोग काल को पुरुष का सामर्थ्य कहते हैं । अहंकार से मोहित तथा प्रकृति के धर्म को अपना समझने वाले कर्ता जीव को जिस काल से भय होता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

प्रकृतेर्गुणसाम्यस्य निर्विशेषस्य मानवि ।
चेष्टा यतः स भगवान् काल इत्युपलक्षितः ॥१७॥

पदच्छेद—

प्रकृतेः गुण साम्यस्य निर्विशेषस्य मानवि ।
चेष्टा यतः सः भगवान् कालः इति उपलक्षितः ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतेः	५.	प्रकृति को	यतः	६.	जिससे
गुण	३.	गुणों वाली	सः	८.	वे
साम्यस्य	२.	समान	भगवान्	९.	भगवान्
निर्विशेषस्य	४.	सामान्य	कालः	१०.	काल
मानवि ।	१.	हे मनु पुत्री !	इति	११.	इस शब्द से
चेष्टा	७.	गति (मिलती है ।)	उपलक्षितः ॥	१२.	जाने जाते हैं

श्लोकार्थ—हे मनु पुत्री ! समान गुणों वाली सामान्य प्रकृति को जिससे गति मिलती है । वे भगवान् काल इस शब्द से जाने जाते हैं ॥

अष्टदशः श्लोकः

अन्तः पुरुषरूपेण कालरूपेण यो बहिः ।
समन्वेत्येष सत्त्वानां भगवानात्ममायया ॥१८॥

पदच्छेद—

अन्तः पुरुष रूपेण कालरूपेण योः बहिः ।
समन्वेति एषः सत्त्वानाम् भगवान् आत्म मायया ॥

शब्दार्थ—

अन्तः	७.	अन्दर	समन्वेति	१२.	व्याप्त है
पुरुष	८.	जीव के	एषः	२.	ये
रूपेण	९.	रूप में	सत्त्वानाम्	६.	सभी प्राणियों के
कालरूपेण	११.	काल रूप में	भगवान्	३.	भगवान्
योः	१.	वही	आत्म	४.	अपनी
बहिः ।	१०.	बाहर	मायया ॥	५.	माया से

श्लोकार्थ—वही ये भगवान् अपनी माया से सभी प्राणियों के अन्दर जीव के रूप में बाहर काल के रूप में व्याप्त है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

दैवात्क्षुभितधर्मिण्यां स्वस्यां योनौ परः पुमान् ।
आधत्त वीर्यं सासूत महत्तत्त्वं हिरण्मयम् ॥१६॥

पदच्छेद—

दैवात् क्षुभित धीर्यण्याम् स्वस्याम् योनौ परः पुमान् ।
आधत्त वीर्यम् सा आसूत महत्तत्त्वम् हिरण्यमयम् ॥

शब्दार्थं—

दैवात्	२.	अदृष्टवश	आधत्त	८.	स्थापित किया (अतः)
क्षुभित	३.	शोक को प्राप्त हुई	वीर्यम्	७.	वीर्य रूप चित शक्ति को
धीर्मण्याम्	६.	मायामय प्रकृति में	सा	६.	उसने
स्वस्याम्	५.	अपनी	आसूत	१२.	उत्पन्न किया
योनौ	४.	जगत की कारण रूपा	महत्तत्त्वम्	११.	महत्तत्त्व को
परः पुमान् ।	१.	परम् पुरुष परमात्मा ने	हिरण्यमयम् ॥	१०.	सुवर्णमय

श्लोकार्थं—परम पुरुष परमात्मा ने अदृष्टवश शोक को प्राप्त हुई, जगत की कारणरूपा अपनी मायामय प्रकृति में वीर्यरूप चित शक्ति को स्थापित किया । उसने सुवर्णमय महतत्त्व को उत्पन्न किया ॥

विंशः श्लोकः

विश्वमात्मगतं व्यञ्जन् कूटस्थो जगदङ्कुरः ।
स्वतेजसापिबत्तीव्रमात्मप्रस्वापनं तमः ॥२०॥

पदच्छेद—

विश्वम् आत्मगतम् व्यञ्जन कूटस्थः जगद अङ्कुरः ।
स्वतेजसा अपिबत् तीव्रम् आत्म प्रस्वापनम् तमः ॥

शब्दार्थं—

विश्वम्	५.	संसार को	स्वतेजसा	७.	अपने तेज से
आत्मगतम्	४.	अपने में स्थित	अपिबत्	१२.	पान कर लिया
व्यञ्जन	६.	प्रकट करता हुआ	तीव्रम्	१०.	गहरे
कूटस्थः	३.	निर्विकार (महत्तत्त्व)	आत्म	८.	अपने को
जगद	१.	संसार को	प्रस्वापनम्	६.	ढक देने वाले
अङ्कुरः ।	२.	अङ्कुर रूप में स्थित	तमः ॥	११.	अन्धकार का

श्लोकार्थं—संसार को अङ्कुर रूप में स्थित निर्विकार महत्तत्त्व अपने में स्थिर संसार को प्रकट करता हुआ अपने तेज़ से अपने को ढक देने वाले गहरे अन्धकार का पान कर लिया ॥

एकविंशः श्लोकः

यत्तत्सत्त्वगुणं स्वच्छं शान्तं भगवतः पदम् ।
यदाहुर्वासुदेवाख्यं चित्तं तन्महदात्मकम् ॥२१॥

पदच्छेद—

यत् तत् सत्त्वगुणम् स्वच्छम् शान्तम् भगवतः पदम् ।
यद् आहुः वासुदेव आख्यम् चित्तम् तत् महद् आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

यत्-तत्	१.	जो वह	**यद्**	९.	जिसे
सत्त्वगुणम्	२.	सत्त्वगुणों वाल	**आहुः**	१२.	कहते हैं
स्वच्छम्	३.	निर्मल	**वासुदेव**	१०.	वासुदेव
शान्तम्	४.	शान्त (और)	**आख्यम्**	११.	नाम से
भगवतः	५.	भगवान् की	**चित्तम्, तत्**	७.	चित्त है वह
पदम् ।	६.	प्राप्ति का स्थान	**महद्, आत्मकम् ॥**	८.	महत्तत्त्व का स्वरूप है

श्लोकार्थ—जो वह सत्त्वगुणों वाला निर्मल, शान्त और भगवान् की प्राप्ति का स्थान चित्त है वह महत्तत्त्व का स्वरूप है । जिसे वासुदेव कहते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

स्वच्छत्वमविकारित्वं शान्तत्वमिति चेतसः ।
वृत्तिभिर्लक्षणं प्रोक्तं यथापां प्रकृतिः परा ॥२२॥

पदच्छेद—

स्वच्छत्वम् अविकारित्वम् शान्तत्वम् इति चेतसः ।
वृत्तिभिः अक्षणम् प्रोक्तम् यथा अपाम् प्रकृतिः परा ॥

शब्दार्थ—

स्वच्छत्वम्	७.	निर्मल होना	**लक्षणम्**	११.	लक्षण
अविकारित्वम्	८.	विकार न होना (और)	**प्रोक्तम्**	१२.	कहा गया है
शान्तत्वम्	९.	शान्त रहना	**यथा**	४.	समान
इति	१०.	यह	**अपाम्**	१.	जल की
चेतसः ।	६.	चित्त का	**प्रकृतिः**	३.	प्रकृति के
वृत्तिभिः	५.	(अपनी) वृत्तियों के साथ	**परा ॥**	२.	परा

श्लोकार्थ—जल की परा प्रकृति के समान अपनी वृत्तियों के साथ चित्त का निर्मल होना, विकार न होना और शान्त रहना यह लक्षण कहा गया है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

महत्तत्त्वाद्विकुर्वाणाद्भगवद्वीर्यसम्भवात् ।
क्रियाशक्तिरहङ्कारस्त्रिविधः समपद्यत ॥२३॥

पदच्छेद—

महत्तत्त्वात् विकुर्वाणात् भगवत् वीर्य सम्भवात् ।
क्रिया शक्तिः अहंकार त्रिविधः समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

महत्तत्त्वात्	४.	महत्तत्त्व के	क्रिया	७.	क्रिया
विकुर्वाणात्	५.	विकृत होने पर (उससे)	शक्तिः	८.	शक्ति रूप
भगवत्	१.	भगवान् की	अहंकार	९.	अहंकार
वीर्य	२.	चित्त शक्ति से	त्रिविधः	६.	तीन प्रकार का
सम्भवात् ।	३.	उत्पन्न	समपद्यत ॥	१०.	उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—भगवान् की चित्त शक्ति से उत्पन्न महत्तत्त्व के विकृत होने पर उससे तीन प्रकार का क्रिया शक्ति रूप अहंकार उत्पन्न हुआ ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्च यतो भवः ।
मनसश्चेन्द्रियाणां च भूतानां महतामपि ॥२४॥

पदच्छेद—

वैकारिकः तेजसः च तामसः च यतः भवः ।
मनसः च इन्द्रियाणाम् च भूतानाम् महताम् अपि ॥

शब्दार्थ—

वैकारिकः	१.	(इस अहंकार को) वैकारिक	मनसः	७.	मन
तेजसः	२.	तैजस	च	८.	और
च	३.	और	इन्द्रियाणाम्	९.	इन्द्रियाँ
तामसः	४.	तामस	च	१०.	तथा
च	५.	कहते हैं	भूतानाम्	१२.	भूतों की
यतः	६.	जिससे	महताम्	११.	पञ्च महा
भवः ।	१४.	उत्पत्ति हुई है	अपि ॥	१३.	भी

श्लोकार्थ—इस अहंकार को वैकारिक, तैजस और तामस कहते हैं; जिससे मन और इन्द्रियाँ तथा पञ्च महाभूतों की भी उत्पत्ति हुई है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

सहस्रशिरसं साक्षाद्यमनन्तं प्रचक्षते ।
सङ्कर्षणाख्यं पुरुषं भूतेन्द्रियमनोमयम् ॥२५॥

पदच्छेद—

सहस्त्र शिरसम् साक्षात् यम् अनन्तम् प्रचक्षते ।
संङ्कर्षण आख्यम् पुरुषम् भूतेन्द्रिय मनोमयम् ॥

शब्दार्थं—

सहस्त्र	७. उसे ही हज़ार	**संङ्कर्षण**	४. संकर्षण
शिरसम्	८. सिरों से युक्त	**आख्यम्**	५. नामक
साक्षात्	९. साक्षात्	**पुरुषम्**	६. पुरुष कहते हैं (और)
यम्	३. जिस (अहंकार) को	**भूतेन्द्रिय**	१. भूत इन्द्रिय (और)
अनन्तम्	१०. अनन्त देव	**मनोमयम् ॥**	२ मनोमयरूप
प्रचक्षते ।	११. कहते हैं		

श्लोकार्थ—भूत इन्द्रिय और मनोमयरूप जिस अहंकार को संकर्षण नामक पुरुष कहते हैं और उसे ही हज़ार सिरों से युक्त साक्षात् अनन्तदेव कहते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

कर्तृत्वं करणत्वं च कार्यत्वं चेति लक्षणम् ।
शान्तघोरविमूढत्वमिति वा स्यादहंकृतेः ॥२६॥

पदच्छेद—

कर्तृत्वम् करणत्वम् च कार्यत्वम् च इति लक्षणम् ।
शान्त घोर विमूढत्वम् इति वा स्यात् अहंकृते ॥

शब्दार्थं—

कर्तृत्वम्	२. (मनरूप से) कर्तृत्व	**शान्त**	९. शान्तरूप
करणत्वम्	३. (इन्द्रिय रूप से) करणत्व	**घोर**	१०. घोर रूप (और)
च	४. और	**विमूढत्वम्**	११. अज्ञान रूप
कार्यत्वम्	५. (पञ्चभूत रूप से) कार्यत्व	**इति**	१२. ये
च	८. तथा (गुणों की दृष्टि से)	**वा**	१३. भी (अहंकार के ही)
इति	६. यह	**स्यात्**	१४. लक्षण है
लक्षणम् ।	७. लक्षण है	**अहंकृते ॥**	१. अहंकार का

श्लोकार्थ—अहंकार का मनरूप से कर्तृत्व, इन्द्रिय रूप से करणत्व और पञ्च महाभूत रूप से कार्यत्व यह लक्षण हैं । शान्त रूप, घोर रूप और अज्ञान रूप ये भी अहंकार के ही लक्षण हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

वैकारिकाद्विकुर्वाणान्मनस्तत्त्वमजायत ।
यत्सङ्कल्पविकल्पाभ्यां वर्तते कामसम्भवः ॥२७॥

पदच्छेद—

वैकारिकात् विकुर्वाणात् मनस्तत्त्वम् अजायत ।
यत् संङ्कल्प विकल्पाभ्याम् वर्तते काम सम्भवः ॥

शब्दार्थं—

वैकारिकात्	१.	वैकारिक अहंकार के	सङ्कल्प	६.	सङ्कल्प (और)
विकुर्वाणात्	२.	विकृत होने पर (उससे)	विकल्पाभ्याम्	७.	विकल्प के द्वारा
मनस्तत्त्वम्	३.	मन	वर्तते	१०.	है
अजायत ।	४.	उत्पन्न हुआ	काम	८.	कामनाओं का
यत्	५.	जो	सम्भवः ॥	९.	उत्पत्ति स्थान

श्लोकार्थ—वैकारिक अहंकार के विकृत होने पर उससे मन उत्पन्न हुआ, जो सङ्कल्प और विकल्प के द्वारा कामनाओं का उत्पत्ति स्थान है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

यद्विदुर्ह्यनिरुद्धाख्यं हृषीकाणामधीश्वरम् ।
शारदेन्दीवरश्यामं संराध्यं योगिभिः शनैः ॥२८॥

पदच्छेद—

यद् विदुः अनिरुद्ध आख्यम् हृषीकाणाम् अधीश्वरम ।
शारद इन्द्रीवर श्यामम् संराध्यम् योगिभिः शनैः ॥

शब्दार्थ—

यद्	३.	जो	शारद	९.	शरत् कालीन
विन्दुः	६.	प्रसिद्ध है	इन्द्रीवर	१०.	नील कमल के समान
अनिरुद्ध	४.	अनिरुद्ध	श्यामम्	११.	श्याम वर्ण (उस अनिरुद्ध की)
आख्यम्	५.	नाम से	संराध्यम्	१२.	आराधना करते हैं
हृषीकाणाम्	१.	इन्द्रियों का	योगिभिः	७.	योगिजन
अधीश्वरम् ।	२.	अधिष्ठाता	शनैः ॥	८.	शनैः-शनैः

श्लोकार्थ—इन्द्रियों का अधिष्ठाता जो अनिरुद्ध नाम से प्रसिद्ध है । योगिजन शनैः शनैः शरत्कालीन नील कमल के समान श्याम वर्ण उस अनिरुद्ध की आराधना करते हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तैजसात्तु विकुर्वाणाद् बुद्धितत्त्वमभूत्सति ।
द्रव्यस्फुरणविज्ञानमिन्द्रियाणामनुग्रहः ॥२९॥

पदच्छेद—

तैजसात् तु विकुर्वाणात् बुद्धितत्त्वम् अभूत् सती ।
द्रव्य स्फुरण विज्ञानम् इन्द्रियाणाम् अनुग्रहः ॥

शब्दार्थ—

तैजसात्	३.	तैजस अहंकार से	द्रव्य	९.	पदार्थों का
तु	२.	तदनन्तर	स्फुरण	११.	प्रकाश होता है
विकुर्वाणात्	४.	विकार होने पर	विज्ञानम्	१०.	ज्ञान (और)
बुद्धितत्त्वम्	५.	बुद्धि-तत्त्व	इन्द्रियाणाम्	८.	इन्द्रियों के द्वारा
अभूत्	६.	उत्पन्न हुआ	अनुग्रहः ॥	७.	जिसकी कृपा से
सती ।	१.	हे साध्वी !			

श्लोकार्थ—हे साध्वी ! तदनन्तर तैजस अहंकार से विकार होने पर बुद्धि-तत्त्व उत्पन्न हुआ । जिसकी कृपा से इन्द्रियों के द्वारा पदार्थों का ज्ञान और प्रकाश होता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

संशयोऽथ विपर्यासो निश्चयः स्मृतिरेव च ।
स्वाप इत्युच्यते बुद्धेर्लक्षणं वृत्तितः पृथक् ॥३०॥

पदच्छेद—

संशयः अथ विपर्यासः निश्चयः स्मृति एव च ।
स्वापः इति उच्यते बुद्धे लक्षणम् वृत्तितः पृथक् ॥

शब्दार्थ—

संशयः	२.	सन्देह	स्वापः	८.	निन्द्रा
अथ	५.	और	इति	९.	ये
विपर्यासः	३.	विपरीत ज्ञान	उच्यते	१४.	कहे जाते हैं
निश्चयः	४.	निश्चय	बुद्धे	११.	बुद्धि के
स्मृति	६.	स्मृति	लक्षणम्	१३.	लक्षण
एव	१०.	ही	वृत्तितः	१.	कार्य के भेद से
च ॥	७.	तथा	पृथक् ॥	१२.	अलग-अलग

श्लोकार्थ—कार्य के भेद से सन्देह, विपरीत ज्ञान, निश्चय और स्मृति तथा निद्रा ये ही बुद्धि के अलग-अलग लक्षण कहे जाते हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तैजसानीन्द्रियाण्येव क्रियाज्ञानविभागशः ।
प्राणस्य हि क्रिया शक्तिर्बुद्धेर्विज्ञानशक्तिता ॥३१॥

पदच्छेद—

तैजसानि इन्द्रियाणि एव क्रिया ज्ञान विभागशः ।
प्राणस्य हि क्रिया शक्तिः बुद्धेः विज्ञान शक्तिता ॥

शब्दार्थ—

तैजसानि	१.	तैजस अहंकार से उत्पन्न	प्राणस्य	८.	प्राण की
इन्द्रियाणि	२.	इन्द्रियाँ	हि क्रिया	७.	उनमें कर्मेन्द्रियाँ
एव	३.	ही	शक्तिः	९.	शक्ति हैं और
क्रिया	४.	कर्म (और)	बुद्धेः	११.	बुद्धि की
ज्ञान	५.	ज्ञान के	विज्ञान	१०.	ज्ञानेन्द्रियाँ
विभागशः ।	६.	भेद से (दो प्रकार की हैं)	शक्तिता ॥	१२.	शक्ति हैं

श्लोकार्थ—तैजस अहंकार से उत्पन्न इन्द्रियाँ ही कर्म और ज्ञान के भेद से दो प्रकार की हैं। उनमें कर्मेन्द्रियाँ प्राण की शक्ति हैं; और ज्ञानेन्द्रियाँ बुद्धि की शक्ति हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तामसाच्च विकुर्वाणाद्भगवद्वीर्यचोदितात् ।
शब्दमात्रमभूत्तस्मान्नभः श्रोत्रं तु शब्दगम् ॥३२॥

पदच्छेद—

तामसात् च विकुर्वाणात् भगवत् वीर्य चोदितात् ।
शब्दमात्रम् अभूत तस्मात् नभः श्रोत्रम् तु शब्दगम् ॥

शब्दार्थ—

तामसात्	५.	तामस अहंकार में	शब्दमात्रम्	७.	शब्द तन्मात्रा
च	१.	तदनन्तर	अभूत तस्मात्	८.	उत्पन्न हुई उससे
विकुर्वाणात्	६.	विकार होने पर उससे	नभः	९.	आकाश
भगवत्	२.	भगवान् की	श्रोत्रम्	१२.	श्रवणेन्द्रिय उत्पन्न हुई
वीर्य	३.	चेतन शक्ति से	तु	१०.	तथा
चोदितात् ।	४.	प्रेरणा पाकर	शब्दगम् ॥	११.	शब्द का ज्ञान कराने वाली

श्लोकार्थ—तदनन्तर भगवान् की चेतन शक्ति से प्रेरणा पाकर तामस अहंकार में विकार होने पर उससे शब्द तन्मात्रा उत्पन्न हुई, उससे आकाश तथा शब्द का ज्ञान कराने वाली श्रवणेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अर्थाश्रयत्वं शब्दस्य द्रष्टुर्लिङ्गत्वमेव च ।
तन्मात्रत्वं च नभसो लक्षणं कवयो विदुः ॥३३॥

पदच्छेद—

अर्थ आश्रयत्वम् शब्दस्य द्रष्टुः लिङ्गत्वम् एव च ।
तन्मात्रत्वम् च नभसः लक्षणम् कवयः विदुः ॥

शब्दार्थ—

अर्थ	१.	अर्थ का	तन्मात्रत्वम्	८.	सूक्ष्म रूप होना
आश्रयत्वम्	२.	प्रकाशक होना	च	११.	ये
शब्दस्य	१०.	शब्द के	नभसः	७.	आकाश का
द्रष्टुः	३.	परोक्ष वक्ता का	लक्षणम्	१२.	लक्षण
लिङ्गत्वम्	५.	ज्ञान करा देना	कवयः	९.	विद्वानों ने
एव	४.	भी	विदुः ॥	१३.	बताये हैं
च ।	६.	और			

श्लोकार्थ—अर्थ का प्रकाशक होना परोक्ष वक्ता का भी ज्ञान करा देना; और आकाश का सूक्ष्म रूप होना विद्वानों ने शब्द के ये लक्षण बताये हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

भूतानां छिद्रदातृत्वं बहिरन्तरमेव च ।
प्राणेन्द्रियात्मधिष्ण्यत्वं नभसो वृत्तिलक्षणम् ॥३४॥

पदच्छेद—

भूतानाम् छिद्र दातृत्वम् बहिः अन्तरम् एव च ।
प्राण इन्द्रिय आत्मधिष्ण्यत्वम् नभसः वृत्ति लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

भूतानाम्	१.	प्राणियों को	प्राण	८.	प्राण
छिद्र	२.	अवकाश	इन्द्रिय	९.	इन्द्रिय (और)
दातृत्वम्	३.	देना	आत्म	१०.	मन का
बहिः	४.	(शरीर के) बाहर	धिष्ण्यत्वम्	११.	आश्रय होना (ये)
अन्तरम्	६.	अन्दर	नभसः	१२.	आकाश के
एव	७.	भी (रहना तथा)	वृत्ति	१३.	वृत्ति रूप
च ।	५.	और	लक्षणम् ॥	१४.	लक्षण हैं

श्लोकार्थ—प्राणियों को अवकाश देना शरीर के बाहर और अन्दर भी रहना, तथा प्राण, इन्द्रिय और मन का आश्रय होना ये आकाश के वृत्ति रूप लक्षण हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नभसः शब्दतन्मात्रात्कालगत्या विकुर्वतः ।
स्पर्शोऽभवत्ततो वायुस्त्वक् स्पर्शस्य च संग्रहः ॥३५॥

पदच्छेद—

नभसः शब्द तन्मात्रात् काल गत्या विकुर्वतः ।
स्पर्शः अभवत् ततः वायुः त्वक् स्पर्शस्य च संग्रहः ॥

शब्दार्थ—

नभसः	५.	आकाश में	अभवत्	८.	उत्पन्न हुई
शब्द	३.	शब्द	ततः	९.	उस तन्मात्रा से
तन्मात्रात्	४.	तन्मात्रा वाले	वायुः	१०.	वायु
काल	१.	काल की	त्वक्	१४.	त्वक इन्द्रिय (उत्पन्न हुई)
गत्या	२.	गति से	स्पर्शस्य	१२.	स्पर्श का
विकुर्वतः ।	६.	विकार होने पर (उससे)	च	११.	और
स्पर्शः	७.	स्पर्श तन्मात्रा	संग्रहः ॥	१३.	ज्ञान कराने वाली

श्लोकार्थ—काल की गति से शब्द तन्मात्रा वाले आकाश में विकार होने पर उससे स्पर्श तन्मात्रा उत्पन्न हुई; उस तन्मात्रा से वायु और स्पर्श का ज्ञान कराने वाली त्वक्-इन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

मृदुत्वं कठिनत्वं च शैत्यमुष्णत्वमेव च ।
एतत्स्पर्शस्य स्पर्शत्वं तन्मात्रत्वं नभस्वतः ॥३६॥

पदच्छेद—

मृदुत्वम् कठिनत्वम् च शैत्यम् उष्णत्वम् एव च ।
एतत् स्पर्शस्य स्पर्शत्वम् तन्मात्रत्वम् नभः स्वतः ॥

शब्दार्थ—

मृदुत्वम्	१.	कोमलता	एतत्	९.	ये
कठिनत्वम्	२.	कठोरता	स्पर्शस्य	१०.	स्पर्श के
च	४.	और	स्पर्शत्वम्	११.	लक्षण हैं
शैत्यम्	३.	शीतलता	तन्मात्रत्वम्	८.	तन्मात्रा होना
उष्णत्वम्	५.	उष्णता	नभः स्वतः ॥	७.	वायु की
एव च ।	६.	तथा			

श्लोकार्थ—कोमलता, कठोरता, शीतलता और उष्णता तथा वायु की तन्मात्रा होना ये स्पर्श के लक्षण हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

चालनं व्यूहनं प्राप्तिर्नेतृत्वं द्रव्यशब्दयोः ।
सर्वेन्द्रियाणामात्मत्वं वायोः कर्माभिलक्षणम् ॥३७॥

पदच्छेद—

चालनम् व्यूहनम् प्राप्तिः नेतृत्वम् द्रव्य शब्दयोः ।
सर्व इन्द्रियाणाम् आत्मत्वम् वायोः कर्म अभिलक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

चालनम्	१.	वृक्षादि को हिलाना
व्यूहनम्	२.	(तृण इत्यादि) इकट्ठा करना
प्राप्तिः	३.	सर्वत्र पहुँचाना
नेतृत्वम्	६.	इन्द्रियों तक पहुँचाना (और)
द्रव्य	४.	सुगन्धित वस्तु (और)
शब्दयोः ।	५.	शब्द को
सर्व	७.	सभी
इन्द्रियाणाम्	८.	इन्द्रियों को
आत्मत्वम्	९.	शक्ति होना
वायोः	१०.	ये वायु के
कर्म	११.	कार्य
अभिलक्षणम् ॥	१२.	लक्षण हैं

श्लोकार्थ—वृक्षादि को हिलाना, तृणादि इत्यादि इकट्ठा करना, सर्वत्र पहुँचाना और सुगन्धित वस्तुओं और शब्द को इन्द्रियों तक पहुँचाना और सभी इन्द्रियों को शक्ति देना । ये वायु के कार्य लक्षण हैं ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

वायोश्च स्पर्शतन्मात्राद्रूपं दैवेरितादभूत् ।
समुत्थितं ततस्तेजश्चक्षू रूपोपलम्भनम् ॥३८॥

पदच्छेद—

वायोः च स्पर्शतन्मात्रात् रूपम् दैव ईरितात् अभूत ।
समुत्थितम् ततः तेजः चक्षु रूप उपलम्भनम् ॥

शब्दार्थ—

वायोः	४.	वायु से
च	७.	और
स्पर्शतन्मात्रात्	३.	स्पर्श तन्मात्रा वाले
रूपम्	५.	तेज
दैव	१.	भगवान् की
ईरितात्	२.	प्रेरणा पाकर
अभूत ।	६.	उत्पन्न हुआ
समुत्थितम्	१३.	उत्पन्न हुई
ततः	८.	उससे
तेजः	९.	रूप तन्मात्रा (और)
चक्षुः	१२.	नेत्रेन्द्रिय
रूप	१०.	रूप का
उपलम्भनम् ॥	११.	ज्ञान कराने वाली

श्लोकार्थ—भगवान् की प्रेरणा पाकर स्पर्श तन्मात्रा वाले वायु से तेज उत्पन्न हुआ । और उससे रूप तन्मात्रा और रूप का ज्ञान कराने वाली नेत्रेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

द्रव्याकृतित्वं गुणता व्यक्तिसंस्थात्वमेव च ।
तेजस्त्वं तेजसः साध्वि रूपमात्रस्य वृत्तयः ॥३९॥

पदच्छेद—

द्रव्य आकृतित्वम् गुणता व्यक्ति संस्थात्वम् एव च ।
तेजस्त्वम् तेजसः साध्वि रूपमात्रस्य वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	२. वस्तु का	तेजस्त्वम्	८. सूक्ष्म तन्मात्रा रूप होना
आकृतित्वम्	३. ज्ञान कराना	तेजसः	१२. तेज की
गुणता	४. वस्तु के अन्दर रहना	साध्वि	१. हे मातः !
व्यक्ति	५. द्रव्य के	रूप	१०. रूप
संस्थात्वम्	६. आकार-प्रकार का होना	मात्रस्य	११. तन्मात्रा वाले
एव	९. ये ही	वृत्तयः ॥	१३. वृत्तियाँ हैं
च ।	७. और		

श्लोकार्थ—हे मातः ! वस्तु का ज्ञान कराना, वस्तु के अन्दर रहना, द्रव्य के आकार प्रकार का होना और सूक्ष्म तन्मात्रा रूप होना ये ही रूप तन्मात्रा वाले तेज़ की वृत्तियाँ हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

द्योतनं पचनं पानमदनं हिममर्दनम् ।
तेजसो वृत्तयस्त्वेताः शोषणं क्षुत्तृडेव च ॥४०॥

पदच्छेद—

द्योतनम् पचनम् पानम् अदनम् हिम मर्दनम् ।
तेजसः वृत्तयः तु एताः शोषणम् क्षुत् तृड् एव च ॥

शब्दार्थ—

द्योतनम्	२. चमकना	तेजसः वृत्तयः	१२. तेज के कार्य हैं
पचनम्	३. पचाना	तु	१. तथा
पानम्	९. पीना	एताः	१०. ये
अदनम्	८. खाना	शोषणम्, क्षुत्, तृड	६. सुखाना, भूख, प्यास लगना
हिम	४. शीत को	एव	११. ही
मर्दनम् ।	५. दूर करना	च ॥	७. और

श्लोकार्थ—तथा चमकना, पचाना, शीत को, दूर करना, सुखाना, भूख, प्यास लगना और खाना, पीना ये ही तेज के कार्य हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

रूपमात्राद्विकुर्वाणात्तेजसो दैवचोदितात् ।
रसमात्रमभूत्तस्मादम्भो जिह्वा रसग्रहः ॥४१॥

पदच्छेद—

रूपमात्राम् विकुर्वाणात् तेजसः दैव चोदितात् ।
रसमात्रम् अभूत तस्मात् अम्भः जिह्वा रस ग्रहः ॥

शब्दार्थ—

रूपमात्राम्	३.	रूप तन्मात्रामय	अभूत	७.	उत्पन्न हुई (तथा)
विकुर्वाणात्	५.	विकार होने पर (उससे)	तस्मात्	८.	उस तन्मात्रा से
तेजसः	४.	तेज में	अम्भः	९.	जल (और)
दैव	१.	भगवान् की	जिह्वा	१२.	रसनेन्द्रिय हुई
चोदितात् ।	२.	प्रेरणा से	रस	१०.	रस का
रसमात्रम्	६.	रस तन्मात्रा	ग्रहः ॥	११.	ज्ञान कराने वाली

श्लोकार्थ—भगवान् की प्रेरणा से रूप तन्मात्रामय तेज में विकार होने पर उससे रस तन्मात्रा उत्पन्न हुई तथा उस तन्मात्रा से जल और रस का ज्ञान कराने वाली रसनेन्द्रिय हुई ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

कषायो मधुरस्तिक्तः कट्वम्ल इति नैकधा ।
भौतिकानां विकारेण रस एको विभिद्यते ॥४२॥

पदच्छेद—

कषायः मधुरः तिक्तः कटु अम्ल इति नैकधा ।
भौतिकानाम् विकारेण रसः एकः विभिद्यते ॥

शब्दार्थ—

कषायः	५.	कषैला	नैकधा ।	११.	अनेक प्रकार का
मधुरः	६.	मीठा	भौतिकानाम्	१.	भौतिक वस्तुओं के
तिक्तः	७.	तीखा	विकारेण	२.	संयोग से
कटु	८.	कड़ुवा (और)	रसः	४.	रस
अम्ल	९.	खट्टा	एकः	३.	एक ही
इति	१०.	इस तरह	विभिद्यते ॥	१२.	हो जाता है

श्लोकार्थ—भौतिक वस्तुओं के संयोग से एक ही रस कषैला, मीठा, तीखा, कड़ुवा और खट्टा इस तरह अनेक प्रकार का हो जाता है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

क्लेदनं पिण्डनं तृप्तिः प्राणनाप्यायनोन्दनम् ।
तापापनोदो भूयस्त्वमम्भसो वृत्तयस्त्विमाः ॥४३॥

पदच्छेद—

क्लेदनम् पिण्डनम् तृप्तिः प्राणन अप्यायन अन्दनम् ।
ताप अपनोदः भूयस्त्वम् अम्भसः वृत्तयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

क्लेदनम्	१.	गीला करना	ताप, अपनोदः	७.	गर्मी को शान्त करना
पिण्डनम्	२.	पिण्डी बनाना	भूयस्त्वम्	६.	बार-बार प्रकट हो जाना
तृप्तिः	३.	तृप्त करना	अम्भसः	११.	जल की
प्राणन	४.	जीवित रखना	वृत्तयः	१२.	वृत्तियाँ हैं
अप्यायन	५.	प्यास बुझाना	तु	८.	तथा
अन्दनम्।	६.	कोमल बना देना	इमाः।	१०.	ये

श्लोकार्थ—गीला करना, पिण्डी बनाना, तृप्त करना, जीवित रखना, प्यास बुझाना, कोमल बना देना, गर्मी को शान्त करना तथा बार-बार प्रकट हो जाना-ये जल की वृत्तियाँ हैं ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

रसमात्राद्विकुर्वाणादम्भसो दैवचोदितात् ।
गन्धमात्रमभूत्तस्मात्पृथ्वी घ्राणस्तु गन्धगः ॥४४॥

पदच्छेद—

रसमात्रात् विकुर्वाणात् अम्भसः दैव चोदितात् ।
गन्धमात्रम् अभूत् तस्मात् पृथ्वी घ्राणः तु गन्धगः ॥

शब्दार्थ—

रसमात्रात्	३.	रस तन्मात्रा वाले	अभूत्	७.	उत्पन्न हुई
विकुर्वाणात्	५.	विकृत होने पर (उससे)	तस्मात्	६.	उस तन्मात्रा से
अम्भसः	४.	जल के	पृथ्वी	१०.	पृथ्वी (और)
दैव	१.	भगवान से	घ्राणः	१२.	घ्राणेन्द्रिय (उत्पन्न हुई)
चोदितात् ।	२.	प्रेरित	तु	८.	तथा
गन्धमात्रम्	६.	गन्ध तन्मात्रा	गन्धगः ॥	११.	गन्ध का ज्ञान कराने वाली

श्लोकार्थ—भगवान् से प्रेरित रस तन्मात्रा वाले जल के विकृत होने पर उससे गन्ध तन्मात्रा उत्पन्न हुई। तथा उस तन्मात्रा से पृथ्वी और गन्ध का ज्ञान कराने वाली घ्राणेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

करम्भपूतिसौरभ्यशान्तोग्राम्लादिभिः पृथक् ।
द्रव्यावयववैषम्याद्गन्ध एको विभिद्यते ॥४५॥

पदच्छेद—

करम्भ पूति सौरभ्य शान्त उग्र अम्ल आदिभिः पृथक् ।
द्रव्य अवयव वैषम्यात् गन्धः एकः विभिद्यते ॥

शब्दार्थ—

करम्भ	६.	मिश्रित	पृथक् ।	१३.	अलग-अलग रूप में
पूति	७.	दुर्गन्ध	द्रव्य	१.	वस्तु के
सौरभ्य	८.	सुगन्ध	अवयव	२.	भागों को
शान्त	९.	मधुर	वैषम्यात्	३.	न्यूनाधिकता से
उग्र	१०.	तीव्र	गन्धः	५.	गन्ध
अम्ल	११.	खट्टी गन्ध	एकः	४.	एक ही
आदिभिः	१२.	इत्यादि	विभिद्यते ॥	१४.	कई प्रकार का हो जाता है

श्लोकार्थं—वस्तु के भागों की न्यूनाधिकता से एक ही गन्ध मिश्रित, दुर्गन्ध, सुगन्ध, मधुर तीव्र, खट्टी गन्ध इत्यादि अलग-अलग रूप में कई प्रकार का हो जाता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

भावनं ब्रह्मणः स्थानं धारणं सद्विशेषणम् ।
सर्वसत्त्वगुणोद्भेदः पृथिवीवृत्तिलक्षणम् ॥४६॥

पदच्छेद—

भावनम् ब्रह्मणः स्थानम् धारणम् सद् विशेषणम् ।
सर्वसत्त्व गुण उदभेदः पृथिवी वृत्ति लक्षणम् ॥

शब्दार्थं—

भावनम्	२.	प्रतिमादि रूप में भावना करना	सर्वसत्त्व	७.	सभी प्राणियों के
ब्रह्मणः	१.	ब्रह्म की	गुण	८.	स्त्री पुरुषादि गुणों को
स्थानम्	३.	आधार होना	उदभेदः	९.	प्रकट करना (ये)
धारणम्	४.	(जल आदि को) धारण करना	पृथिवी	१०.	पृथ्वी की
सद्	५.	नित्य पदार्थों में	वृत्ति	११.	वृत्ति के
विशेषणम् ।	६.	भेद करना	लक्षणम् ॥	१२.	लक्षण हैं

श्लोकार्थं—ब्रह्म की प्रतिमादि रूप में भावना करना, आधार होना, जल आदि को धारण करना, नित्य पदार्थों में भेद करना, सभी प्राणियों के स्त्री-पुरुषादि गुणों को प्रकट करना—ये पृथ्वी की वृत्ति के लक्षण हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

नभोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तच्छ्रोत्रमुच्यते ।
वायोर्गुणविशेषोऽर्थो यस्य तत्स्पर्शनं विदुः ॥४७॥

पदच्छेद— नभः गुणविशेषः अर्थः यस्य तत् श्रोत्रम् उच्यते ।
वायोः गुणविशेषः अर्थः यस्य तत् स्पर्शनम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

नभः	१.	आकाश का	वायोः	९.	वायु का
गुण	३.	गुण शब्द	गुण	११.	गुण स्पर्श
विशेषः	२.	विशेष	विशेषः	१०.	विशेष
अर्थः	५.	विषय (है)	अर्थः	१३.	विषय (है)
यस्य	४.	जिसका	यस्य	१२.	जिसका
तत्	६.	वह	तत्	१४.	उसे
श्रोत्रम्	७.	श्रवणेन्द्रिय	स्पर्शनम्	१५.	त्वग् इन्द्रिय
उच्यते ।	८.	कही जाती है	विदुः ॥	१६.	कहते हैं

श्लोकार्थ—आकाश का विशेष गुण शब्द जिसका विषय है वह श्रवणेन्द्रिय कही जाती है। वायु का विशेष गुण स्पर्श जिसका विषय है, उसे त्वग् इन्द्रिय कहते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

तेजोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तच्चक्षुरुच्यते ।
अम्भोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तद्रसनं विदुः ।
भूमेर्गुणविशेषोऽर्थो यस्य स घ्राण उच्यते ॥४८॥

पदच्छेद— तेजः गुण विशेषः अर्थः यस्य तद् चक्षुः उच्यते ।
अम्भः गुणविशेषः अर्थः यस्य तद् रसनम् विदुः ।
भूमेः गुणविशेषः अर्थः यस्य सः घ्राणः उच्यते ॥

शब्दार्थ—

तेजः	१.	तेज का	अर्थः	११.	विषय है
गुण	३.	गुण रूप	यस्य	१०.	जिसका
विशेषः	२.	विशेष	तद्, रसनम्	१२.	उसे रसनेन्द्रिय
अर्थः	५.	विषय (है)	विदुः । भूमेः	१३.	कहते हैं । पृथ्वी का
यस्य	४.	जिसका	गुण	१५.	गुण गन्ध
तद्, चक्षुः	६.	उसे नेत्रेन्द्रिय	विशेषः	१४.	विशेष
उच्यते । अम्भः	७.	कहते हैं । जल का	अर्थः	१७.	विषय है
गुण	९.	गुण रस	यस्य	१६.	जिसका
विशेषः	८.	विशेष	सः	१८.	वह
			घ्राणः उच्यते ॥	१९.	घ्राणेन्द्रिय कही गई है

श्लोकार्थ—तेज का विशेष गुण रूप जिसका विषय है, उसे नेत्रेन्द्रिय कहते हैं। जल का विशेष गुणरस जिसका विषय है, उसे रसनेन्द्रिय कहते हैं। पृथ्वी का विशेष गुण गन्ध जिसका विषय है, वह घ्राणेन्द्रिय कही गई है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

परस्य दृश्यते धर्मो ह्यपरस्मिन् समन्वयात् ।
अतो विशेषो भावानां भूमावेवोपलक्ष्यते ॥४६॥

पदच्छेद—

परस्य दृश्यते धर्मः हि अपरस्मिन् समन्वयात् ।
अतः विशेषः भावानाम् भूमौ एव उपलक्ष्यते ॥

शब्दार्थ—

परस्य	२.	कारण का	**अतः**	७.	इसलिये
दृश्यते	६.	पाया जाता है	**विशेषः**	९.	विशेष गुण
धर्मः	३.	गुण	**भावानाम्**	८.	आकाशादि महाभूतों के (सारे)
हि	१.	क्योंकि	**भूमौ**	१०.	पृथ्वी में
अपरस्मिन्	४.	कार्य में	**एव**	११.	ही
समन्वयात् ।	५.	व्याप्त होने से (वह वहाँ)	**उपलक्ष्यते ॥**	१२.	देखे जाते हैं

श्लोकार्थ—क्योंकि कारण का गुण कार्य में व्याप्त होने से वह वहाँ पाया जाता है। इसलिये आकाशादि महाभूतों के सारे विशेष गुण पृथ्वी में देखे जाते हैं ॥

पञ्चाशः श्लोकः

एतान्यसंहत्य यदा महदादीनि सप्त वै ।
कालकर्मगुणोपेतो जगदादिरुपाविशत् ॥५०॥

पदच्छेद—

एतानि संहत्य यदा महत् आदीनि सप्त वै ।
काल कर्म गुण उपेतः जगत् आदिः उपविशत् ॥

शब्दार्थ—

एतानि	४.	ये	**काल**	१०.	काल
संहत्य	६.	अलग-अलग स्थित थे	**कर्म**	११.	कर्म (और)
यदा	१.	जब	**गुण**	१२.	सत्त्वादि गुणों के
महत्	२.	महत्तत्त्व	**उपेतः**	१३.	सहित (उसमें)
आदीनि	३.	अहंकार और पञ्च महाभूत	**जगत्**	८.	संसार के
सप्त	५.	सातों तत्त्व	**आदिः**	९.	कारण (भगवान् श्री हरि ने)
वै ।	७	उस समय	**उपविशत् ॥**	१४.	प्रवेश किया

श्लोकार्थ—जब महत्त्व, अहंकार और पञ्च महाभूत ये सातों तत्त्व अलग-अलग स्थित थे। उस समय संसार के कारण भगवान् श्री हरि ने काल, कर्म और सत्त्वादि गुणों के सहित उसमें प्रवेश किया ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

ततस्तेनानुविद्धेभ्यो युक्तेभ्योऽण्डमचेतनम् ।
उत्थितं पुरुषो यस्मादुदतिष्ठदसौ विराट् ॥५१॥

पदच्छेद—

ततः तेन अनुविद्धेभ्यः युक्तेभ्यः अण्डम् चेतनम् ।
उत्थितम् पुरुषः यस्मात् उदतिष्ठत् असौ विराट् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदन्तर	उत्थितम्	७.	उत्पन्न हुआ
तेन	२.	भगवान् श्री हरि से	पुरुषः	११.	पुरुष की
अनुविद्धेभ्यः	४.	गति पाकर (महत्तत्त्वादि से)	यस्मात्	८.	जिस अण्ड से
युक्तेभ्यः	३.	युक्त होने पर	उदतिष्ठत्	१२.	अभिव्यक्ति हुई है
अण्डम्	६.	अण्डाकार ब्रह्माण्ड	असौ	९.	उस
चेतनम् ।	५.	जड़	विराट् ॥	१०.	विराट्

श्लोकार्थ—तदन्तर भगवान् श्री हरि से युक्त होने पर गति पाकर महत्तत्त्वादि से जड़ अण्डाकार ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुआ । जिस अण्ड से उस विराट् पुरुष की अभिव्यक्ति हुई है ।

द्विपञ्चाशः श्लोकः

एतदण्डं विशेषाख्यं क्रमवृद्धैर्दशोत्तरैः ।
तोयादिभिः परिवृतं प्रधानेनावृतैर्बहिः ।
यत्र लोकवितानोऽयं रूपं भगवतो हरेः ॥५२॥

पदच्छेद—

एतद् अण्डम् विशेषः आख्यम् क्रम वृद्धैः दश उत्तरैः ।
तोय आदिभिः परिवृत्तम् प्रधानेन आवृतः बहिः ।
यत्र लोक वितानः अयम् रूपम् भगवतः हरिः ॥

शब्दार्थ—

एतद्, अण्डम्	२.	यह, अण्ड	प्रधानेन	११.	प्रकृति के (आवरण) से
विशेष, आख्यम्	१.	विशेष, नामक	आवृतः	१२.	ढका है
क्रम	३.	क्रमशः	बहिः ।	१०.	सबके ऊपर
वृद्धैः	६.	बड़े	यत्र	१६.	जिसमें
दश	५.	दश गुने	लोक	१७.	सारे लोकों का
उत्तरैः ।	४.	एक के बाद एक	वितानः	१८.	विस्तार है
तोय	७.	जल, तेज, वायु, आकाश	अयम्	१३.	यह
आदिभिः	८.	अहंकार और महत्तत्त्व के	रूपम्	१५.	रूप है
परिवृत्तम्	९.	आवरणों से घिरा है (तथा)	भगवतः हरिः ॥	१४.	भगवान् श्री हरि का

श्लोकार्थ— विशेष नामक यह अण्ड क्रमशः एक के बाद एक दश गुने बड़े जल, तेज, वायु आकाश, अहंकार और महत्तत्त्व के आवरणों से घिरा है । तथा सबके ऊपर प्रकृति के आवरण से ढका है । यह भगवान् श्री हरि का रूप है । जिससे सारे लोकों का विस्तार है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

हिरण्मयादण्डकोशादुत्थाय सलिलेशयात् ।
तमाविश्य महादेवो बहुधा निर्बिभेद खम् ॥५३॥

पदच्छेद—

हिरण्मयात् अण्डकोशात् उत्थाय सलिले शयात् ।
तम् आविश्य महादेवः बहुधा निर्बिभेद खम् ॥

शब्दार्थ—

हिरण्मयात्	३.	तेजोमय	**तम्**	७.	पुनः उसमें
अण्डकोशात्	४.	अण्डकोश से	**आविश्य**	८.	प्रवेश किया (और)
उत्थाय	५.	उठकर	**महादेवः**	६.	विराट पुरुष ने
सलिले	१.	जल में	**बहुधा**	१०.	अनेक प्रकार से
शयात् ।	२.	पड़े हुये	**निर्बिभेद**	११.	छिद्र किया
			खम् ॥	६.	उसके अन्दर

श्लोकार्थ—जल में पड़े हुये तेजोमय अण्डकोश से उठकर विराट पुरुष ने पुनः उसमें प्रवेश किया; और उसके अन्दर अनेक प्रकार से छिद्र किया ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

निरभिद्यतास्य प्रथमं मुखं वाणी ततोऽभवत् ।
वाण्या वह्निरथो नासे प्राणोतो घ्राण एतयोः ॥५४॥

पदच्छेद—

निरभिद्यत अस्य प्रथमम् मुखम् वाणी ततः अभवत् ।
वाण्याः वह्निः अथो नासो प्राणः अतः घ्राण एतयोः ॥

शब्दार्थ—

निरभिद्यत	४.	उत्पन्न हुआ	**वाण्याः**	८.	वाणी से
अस्य	२.	इस विराट् पुरुष का	**विह्नः**	९.	उसके अधिष्ठाता अग्नि
प्रथमम्	१.	सबसे पहले	**अथो**	१०.	तत्पश्चात्
मुखम्	३.	मुख	**नासे**	११.	दोनों नासिका पुट (और)
वाणी	६.	वाक् इन्द्रिय	**प्राणः**	१३.	प्राण (तथा)
ततः	५.	उससे	**अतः घ्राण**	१४.	उससे, घ्राणेन्द्रिय (उत्पन्न हुई)
अभवत् ।	७.	उत्पन्न हुई	**एतयोः ॥**	१२.	उन दोनों से

श्लोकार्थ—सबसे पहले इस विराट् पुरुष का मुख उत्पन्न हुआ, उससे वाक् इन्द्रिय उत्पन्न हुई । वाणी से उसके अधिष्ठाता अग्नि तत्पश्चात् दोनों नासिका पुट और उन दोनों से प्राण तथा उससे घ्राणेन्द्रिय उत्पन्न हुई ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

घ्राणाद्वायुरभिद्येतामक्षिणी चक्षुरेतयोः ।
तस्मात्सूर्यो व्यभिद्येतां कर्णौ श्रोत्रं ततो दिशः ॥५५॥

पदच्छेद—

घ्राणात् वायुः अभिद्येताम् अक्षिणी चक्षुः एतयोः ।
तस्मात् सूर्यः व्यभिद्येताम् कर्णौ श्रोत्रम् ततः दिशः ॥

शब्दार्थ—

घ्राणात्	१.	घ्राणेन्द्रिय से (उसके)	तस्मात्	७.	उससे
वायुः	२.	अधिष्ठाता वायु हुआ (उसके बाद)	सूर्यः	८.	अधिष्ठाता सूर्य (उत्पन्न हुये) फिर
अभिद्येताम्	६.	प्रकट हुईं	व्यभिद्येताम्	१०.	प्रकट हुये
अक्षिणी	३.	दोनों आँखें (और)	कर्णौ	९.	दोनों कान
चक्षुः	५.	इन्द्रिय चक्षुः	श्रोत्रम्	१२.	श्रोत्रेन्द्रिय (और)
एतयोः ।	४.	इन दोनों की	ततः	११.	उससे
			दिशः ॥	१३.	दिशायें हुईं

श्लोकार्थ—फिर घ्राणेन्द्रिय से उसके अधिष्ठाता वायु हुआ । उसके बाद दोनों आँखें और इन दोनों की इन्द्रिय चक्षुः प्रकट हुईं । उससे अधिष्ठाता सूर्य उत्पन्न हुये; फिर दोनों कान प्रकट हुये उससे श्रोत्रेन्द्रिय और दिशायें हुईं ।

षट्पञ्चाशः श्लोकः

निर्बिभेद विराजस्त्वग्रोमश्मश्र्वादयस्ततः ।
तत ओषधयश्चासन् शिश्नं निर्बिभिदे ततः ॥५६॥

पदच्छेद—

निर्बिभेद विराजः त्वक् रोम श्मश्रु आदयः ततः ।
ततः ओषधयः च आसन् शिश्नम् निर्बिभिदे ततः ॥

शब्दार्थ—

निर्बिभेद	४.	उत्पन्न हुई (तथा)	ततः	८.	तदनन्तर
विराजः	२.	विराट पुरुष की	ओषधयः	९.	वनस्पतियाँ
त्वक्	३.	त्वचा	च	११.	और
रोम	५.	(उससे) रोयें	आसन्	१०.	उत्पन्न हुईं
श्मश्रु	६.	दाढ़ी-मूंछ	शिश्नम्	१३.	जननेन्द्रिय
आदयः	७.	सिर के बाल इत्यादि हुये	निर्बिभिदे	१४.	प्रकट हुई
ततः ॥	१.	उसके बाद	ततः ।	१२.	उसके बाद

श्लोकार्थ—उसके बाद विराट पुरुष की त्वचा उत्पन्न हुई; तथा उससे रोयें, दाढ़ी मूंछ सिर के बाल इत्यादि हुये । तदनन्तर वनस्पतियाँ उत्पन्न हुईं और उसके बाद जननेन्द्रिय प्रकट हुई ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

रेतस्तस्मादाप आसन्निरभिद्यत वै गुदम् ।
गुदादपानोऽपानाच्च मृत्युर्लोकभयङ्करः ॥५७॥

पदच्छेद—

रेतः तस्मात् आपः आसन् निरभिद्यत वै गुदम् ।
गुदात् अपानः अपानात् च मृत्युः लोक भयंकरः ॥

शब्दार्थ—

रेतः	२.	वीर्य (और)	गुदात्	८.	उस गुदा से
तस्मात्	१.	उस जननेन्द्रिय से	अपानः	९.	अपान वायु
आपः	३.	उसके देवता जल	अपानात्	११.	अपान वायु से
आसन्	४.	उत्पन्न हुये	च	१०.	और
निरभिद्यत	७.	प्रकट हुई	मृत्युः	१४.	उसके देवता मृत्यु हुये
वै	५.	उसके बाद	लोक	१२.	प्राणिमात्र को
गुदम्	६.	गुदा इन्द्रिय	भयंकरः ॥	१३.	भयभीत कर देने वाले

श्लोकार्थ—उस जननेन्द्रिय से वीर्य और उसके देवता जल उत्पन्न हुये; उसके बाद गुदा इन्द्रिय प्रकट हुई । उस गुदा से अपान वायु और अपान वायु से प्राणिमात्र को भयभीत कर देने वाले उसके देवता मृत्यु हुये ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

हस्तौ च निरभिद्येतां बलं ताभ्यां ततः स्वराट् ।
पादौ च निरभिद्येतां गतिस्ताभ्यां ततो हरिः ॥५८॥

पदच्छेद—

हस्तौ च निरभिद्येताम् बलम् ताभ्याम् ततः स्वराट् ।
पादौ च निरभिद्येताम् गतिः ताभ्याम् ततः हरिः ॥

शब्दार्थ—

हस्तौ	१.	दोनों हाथ	पादौ	८.	दोनों पैर
च	३.	और	च	१०.	तथा
निरभिद्येताम्	२.	प्रकट हुये	निरभिद्येताम्	९.	प्रकट हुये
बलम्	५.	बल (तथा)	गतिः	१२.	गमन शक्ति और
ताभ्याम्	४.	उन दोनों से	ताभ्याम्	११.	उन दोनों से
ततः	७.	उसके बाद	ततः	१३.	उसके देवता
स्वराट् ।	६.	उसके देवता इन्द्र (हुये)	हरिः ॥	१४.	भगवान् विष्णु (उत्पन्न हुये)

श्लोकार्थ—दोनों हाथ प्रकट हुये और उन दोनों से बल तथा उसके देवता इन्द्र हुये उसके बाद दोनों पैर प्रकट हुये तथा उन दोनों से गमन शक्ति और उसके देवता भगवान् विष्णु उत्पन्न हुये ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

नाड्योऽस्य निरभिद्यन्त ताभ्यो लोहितमाभृतम् ।
नद्यस्ततः समभवन्नुदरं निरभिद्यत ॥५९॥

पदच्छेद—

नाड्य अस्य निरभिद्यन्त ताभ्यः लोहितम् आभृतम् ।
नद्यः ततः समभवन् उदरम् निरभिद्यत ॥

शब्दार्थ—

नाड्य	२.	नाड़ियाँ	नद्यः	८.	उसके देवता नदियाँ
अस्य	१.	इस विराट पुरुष की	ततः	७.	उससे
निरभिद्यन्त	३.	उत्पन्न हुई (और)	समभवन्	९.	उत्पन्न हुई
ताभ्यः	४.	उनसे	उदरम्	१०.	तत्पश्चात् पेट
लोहितम्	५.	रक्त	निरभिद्यतः ॥	११.	प्रकट हुआ
आभृतम् ।	६.	उत्पन्न हुआ			

श्लोकार्थ—इस विराट पुरुष की नाड़ियाँ उत्पन्न हुईं; और उनसे रक्त उत्पन्न हुआ । उससे उसके देवता नदियाँ उत्पन्न हुईं । तत्पश्चात् पेट उत्पन्न हुआ ॥

षष्ठितमः श्लोकः

क्षुत्पिपासे ततः स्यातां समुद्रस्त्वेतयोरभूत् ।
अथास्य हृदयं भिन्नं हृदयान्मन उत्थितम् ॥६०॥

पदच्छेद—

क्षुत् पिपासे ततः स्याताम् समुद्रः तु एतयोः अभूत् ।
अथ अस्य हृदयम् भिन्नम् हृदयात् मनः उत्थितम् ॥

शब्दार्थ—

क्षुत्	२.	भूख	अथ	८.	तदनन्तर
पिपासे	३.	प्यास	अस्य	९.	विराट् पुरुष का
ततः	१.	उस पेट से	हृदयम्	१०.	हृदय
स्याताम्	४.	उत्पन्न हुई	भिन्नम्	११.	प्रकट हुआ (और)
समुद्रः	६.	देवता समुद्र	हृदयात्	१२.	हृदय से
तु एतयोः	५.	तथा इन दोनों के	मनः	१३.	मन
अभूत् ।	७.	उत्पन्न हुये	उत्थितम् ॥	१४.	उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—उस पेट से भूख, प्यास, उत्पन्न हुई तथा इन दोनों के देवता समुद्र उत्पन्न-हुये । तदनन्तर विराट पुरुष का हृदय प्रकट हुआ और हृदय से मन उत्पन्न हुआ ।

एकषष्ठितमः श्लोकः

मनसश्चन्द्रमा जातो बुद्धिर्बुद्धेर्गिरां पतिः ।
अहङ्कारस्ततो रुद्रश्चित्तं चैत्यस्ततोऽभवत् ॥६१॥

पदच्छेद—

मनसः चन्द्रमा जातः बुद्धिः बुद्धेः गिराम् पतिः ।
अहङ्कारः ततः रुद्रः चित्तम् चैत्यः ततः अभवत् ॥

शब्दार्थ—

मनसः	१.	मन से	अहङ्कारः	८.	अहंकार (और)
चन्द्रमाः	२.	चन्द्रमा	ततः	९.	उसके बाद
जातः	३.	उत्पन्न हुआ	रुद्रः	१०.	उसके देवता रुद्र (हुये)
बुद्धिः	४.	(उससे) बुद्धि (और)	चित्तम्	११.	तत्पश्चात् चित्त (और)
बुद्धेः	५.	बुद्धि से	चैत्यः	१३.	क्षेत्रज्ञ आत्मा
गिराम्	६.	वाणी के देवता	ततः	१२.	उससे (उसके देवता)
पतिः ।	७.	ब्रह्मा जी (उत्पन्न हुये)	अभवत् ॥	१४.	उत्पन्न हुआ

श्लोकार्थ—मनसे चन्द्रमा उत्पन्न हुआ । उससे बुद्धि और बुद्धि से वाणी के देवता ब्रह्मा जी उत्पन्न हुये । उसके बाद अहंकार और उसके देवता रुद्र हुये । तत्पश्चात् चित्त और उससे उसके देवता क्षेत्रज्ञ आत्मा उत्पन्न हुआ ॥

द्वाषष्ठितमः श्लोकः

एते ह्यभ्युत्थिता देवा नैवास्योत्थापनेऽशकन् ।
पुनराविविशुः खानि तमुत्थापयितुं क्रमात् ॥६२॥

पदच्छेद—

एते हि अभ्युत्थिताः देवाः न एव अस्य उत्थापने अशकन् ।
पुनः आविविशुः खानि तम् उत्थापयितुम् क्रमात् ॥

शब्दार्थ—

एते	१.	ये	अशकन् ।	८.	समर्थ हो सके (तब)
हि	४.	भी (जब)	पुनः	१२.	फिर से
अभ्युत्थिताः	२.	उत्पन्न हुये	आविविशुः	१४.	प्रवेश कर गये
देवाः	३.	देवता	खानि	१३.	विराट पुरुष के शरीर में
न एव	७.	नहीं	तम्	९.	उस विराट पुरुष को
अस्य	५.	इस विराट पुरुष को	उत्थापयितुम्	१०.	उठाने के लिये
उत्थापने	६.	उठाने में	क्रमात् ॥	११.	क्रमशः

श्लोकार्थ—ये उत्पन्न हुये देवता भी जब इस विराट पुरुष को उठाने में समर्थ नहीं हो सके तब उस विराट को उठाने के लिये क्रमशः फिर से विराट पुरुष के शरीर में प्रवेश कर गये ॥

त्रिषष्ठितमः श्लोकः

वह्निर्वाचा मुखं भेजे नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
घ्राणेन नासिके वायुर्नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६३॥

पदच्छेद—

वह्निः वाचा मुखम् भेजे न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
घ्राणेन नासिके वायुः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थं—

वह्निः	१.	अग्नि ने	घ्राणेन	१०.	घ्राणेन्द्रिय के साथ
वाचा	२.	वाणी के साथ	नासिके	११.	नासिका में (प्रवेश किया)
मुखम्	३.	मुख में	वायुः	९.	वायु देवता ने
भेजे	४.	प्रवेश किया	न	१४.	नहीं
न	७.	नहीं	उदतिष्ठत्	१५.	उठा
उदतिष्ठत्	८.	उठा (तदनन्तर)	तदा	१२.	उससे भी
तदा	५.	उससे	विराट् ॥	१३.	विराट् पुरुष
विराट् ।	६.	विराट् पुरुष			

श्लोकार्थं—अग्नि ने वाणी के साथ मुख में प्रवेश किया; उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर वायु देवता ने घ्राणेन्द्रिय के साथ नासिका में प्रवेश किया; उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

चतुःषष्ठितमः श्लोकः

अक्षिणी चक्षुषाऽऽदित्यो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
श्रोत्रेण कर्णौ च दिशो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६४॥

पदच्छेद—

अक्षिणी चक्षुषा आदित्यः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
श्रोत्रेण कर्णौ च दिशः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

अक्षिणी	३.	आँखों में (प्रवेश किया)	श्रोत्रेण	१०.	श्रवणेन्द्रिय के साथ
चक्षुषा	२.	नेत्र इन्द्रिय के साथ	कर्णौ	११.	कानों में (प्रवेश किया)
आदित्यः	१.	सूर्य देवता ने	च	८.	तदनन्तर
न	६.	नहीं	दिशः	९.	दिशाओं ने
उदतिष्ठत्	७.	उठा	न	१४.	नहीं
तदा	४.	उससे भी	उदतिष्ठत्	१५.	उठा
विराट्	५.	विराट् पुरुष	तदा	१२.	तो भी
			विराट् ॥	१३.	विराट् पुरुष

श्लोकार्थ—सूर्य देवता ने नेत्र इन्द्रिय के साथ आँखों में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर दिशाओं ने श्रवणेन्द्रिय के साथ कानों में प्रवेश किया तो भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

पञ्चषष्ठितमः श्लोकः

त्वचं रोमभिरोषध्यो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
रेतसा शिश्नमापस्तु नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।।६५।।

पदच्छेद—

त्वचम् रोमभिः ओषध्यः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
रेतसा शिश्नम् आपः तु न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।।

शब्दार्थ—

त्वचम्	३.	त्वचा इन्द्रिय में (प्रवेश किया)	**रेतसा**	१०.	वीर्य के साथ
रोमभिः	२.	रोओं के साथ	**शिश्नम्**	११.	जननेन्द्रिय में (प्रवेश किया)
ओषध्यः	१.	वनस्पतियों ने	**आपः**	९.	जल देवता
न	६.	नहीं	**तु**	८.	तदनन्तर
उदतिष्ठत्	७.	उठा	**न**	१४.	नहीं
तदा	४.	उससे भी	**उदतिष्ठत्**	१५.	उठा
विराट् ।	५.	विराट् पुरुष	**तदा**	१२.	उससे भी
			विराट् ।	१३.	विराट् पुरुष

श्लोकार्थ—वनस्पतियों ने रोओं के साथ त्वचा इन्द्रिय में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर जल देवता ने वीर्य के साथ जननेन्द्रिय में प्रवेश किया । उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ।

षट्षष्ठितमः श्लोकः

गुदं मृत्युरपानेन नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
हस्ताविन्द्रो बलेनैव नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।।६६।।

पदच्छेद—

गुदम् मृत्युः अपानेन न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
हस्तौ इन्द्रः बलेन एव न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।।

शब्दार्थ—

गुदम्	३.	गुदाइन्द्रिय में (प्रवेश किया)	**हस्तौ**	१०.	दोनों हाथों में
मृत्युः	१.	मृत्यु ने	**इन्द्रः**	८.	(तदनन्तर) इन्द्र देवता ने
अपानेन	२.	अपान वायु के साथ	**बलेन**	९.	बल के साथ
न	६.	नहीं	**एव**	११.	प्रवेश किया
उदतिष्ठत्	७.	उठा	**न**	१४.	नहीं
तदा	४.	उससे भी	**उदतिष्ठत्**	१५.	उठा
विराट् ।	५.	विराट् पुरुष	**तदा**	१२.	उससे भी
			विराट् ।।	१३.	विराट् पुरुष

श्लोकार्थ—मृत्यु ने अपान वायु के साथ गुदा इन्द्रिय में प्रवेश किया उससे भी विराट्-पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर इन्द्र देवता ने दोनों हाथों में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ।।

सप्तषष्ठितमः श्लोकः

विष्णुर्गत्यैव चरणौ नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
नाडीर्नद्यो लोहितेन नोदत्तिष्ठत्तदा विराट् ॥६७॥

पदच्छेद—

विष्णुः गत्या एव चरणौ न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
नाडीः नद्यः लोहितेन न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

विष्णुः	१.	भगवान् विष्णु ने	नाडीः	११.	नाड़ियों में (प्रवेश किया
गत्या	२.	गमन शक्ति के साथ	नद्यः	९.	(तदनन्तर) नदियों ने
एव	४.	प्रवेश किया	लोहितेन	१०.	रक्त के साथ
चरणौ	३.	दोनों पैरों में	न	१४.	नहीं
न	७.	नहीं	उदतिष्ठत्	१५.	उठा
उदतिष्ठत्	८.	उठा	तदा	१२.	उससे भी
तदा	५.	उससे भी	विराट् ।	१३.	विराट् पुरुष
विराट् ॥	६.	विराट् पुरुष			

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु ने गमन शक्ति के साथ दोनों पैरों में प्रवेश किया । उससे भी विराट्-पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर नदियों ने रक्त के साथ नाड़ियों में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

अष्टषष्ठितमः श्लोकः

क्षुत्तृड्भ्यामुदरं सिन्धुर्नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
हृदयं मनसा चन्द्रो नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६८॥

पदच्छेद—

क्षुत् तृड्भ्याम् उदरम् सिन्धुः न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
हृदयं मनसा चन्द्रः न उदतिष्ठत् उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

क्षुत्	२.	क्षुधा	हृदयं	११.	हृदय में (प्रवेश किया)
तृड्भ्याम्	३.	पिपासा के साथ	मनसा	१०.	मन के साथ
उदरम्	४.	पेट में (प्रवेश किया)	चन्द्रः	९.	चन्द्रमा ने
सिन्धुः	१.	समुद्र ने	न	१४.	नहीं
न	७.	नहीं	उदतिष्ठत्	१५.	उठा
उदतिष्ठत्	८.	उठा	तदा	१२.	उससे भी
तदा	५.	उससे भी	विराट् ॥	१३.	विराट् पुरुष
विराट् ।	६.	विराट् पुरुष			

श्लोकार्थ—समुद्र ने क्षुधा, पिपासा के साथ पेट में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । चन्द्रमा ने मन के साथ हृदय में प्रवेश किया उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

बुद्ध्या ब्रह्मापि हृदयं नोदतिष्ठत्तदा विराट् ।
रुद्रोऽभिमत्या हृदयं नोदतिष्ठत्तदा विराट् ॥६९॥

पदच्छेद—

बुद्धया ब्रह्मा अपि हृदयम् न उदतिष्ठत् तदा विराट् ।
रुद्रः अभिमत्या हृदयम् न उदतिष्ठत् तदा विराट् ॥

शब्दार्थ—

बुद्धया	३.	बुद्धि के साथ	रुद्रः	९.	(तदनन्तर) रुद्र ने
ब्रह्मा	१.	ब्रह्मा जी ने	अभिमत्या	१०.	अहंकार के साथ
अपि	२.	भी	हृदयम्	११.	हृदय में (प्रवेश किया)
हृदयम्	४.	हृदय में (प्रवेश किया)	न	१४.	नहीं
न	७.	नहीं	उदतिष्ठत्	१५.	उठा
उदतिष्ठत्	८.	उठा	तदा	१२.	उससे भी
तदा	५.	उससे भी	विराट् ।	१३.	विराट् पुरुष
विराट् ।	६.	विराट् पुरुष			

श्लोकार्थ—ब्रह्मा जी ने भी बुद्धि के साथ हृदय में प्रवेश किया; उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा । तदनन्तर रुद्र ने अहंकार के साथ हृदय में प्रवेश किया, उससे भी विराट् पुरुष नहीं उठा ।

सप्ततितमः श्लोकः

चित्तेन हृदयं चैत्यः क्षेत्रज्ञः प्राविशद्यदा ।
विराट् तदैव पुरुषः सलिलादुदतिष्ठत ॥७०॥

पदच्छेद—

चित्तेन हृदयम् चैत्यः क्षेत्रज्ञः प्राविशत् यदा ।
विराट् तद् एव पुरुषः सलिलात् उदतिष्ठत् ॥

शब्दार्थ—

चित्तेन	५.	चित्त के साथ	विराट्	९.	विराट्
हृदयम्	४.	हृदय में	तद्	७.	उसी
चैत्यः	२.	चित्त में रहने वाला	एव	८.	समय
क्षेत्रज्ञः	३.	आत्मा ने	पुरुषः	१०.	पुरुष
प्राविशत्	६.	प्रवेश किया	सलिलात्	११.	प्रलय काल के जल से
यदा ।	१.	(किन्तु) जब	उदतिष्ठत् ॥	१२.	उठ कर खड़ा हुआ

श्लोकार्थ—किन्तु जब चित्त में रहने वाला आत्मा ने हृदय में चित्त के साथ प्रवेश किया । उसी समय विराट् पुरुष प्रलयकाल के जल से उठ कर खड़ा हो गया ॥

एकसप्ततितमः श्लोकः

यथा प्रसुप्तं पुरुषं प्राणेन्द्रियमनोधियः ।
प्रभवन्ति विना येन नोत्थापयितुमोजसा ॥७१॥

पदच्छेद—

यथा प्रसुप्तम् पुरुषम् प्राण इन्द्रिय मनः धिया ।
प्रभवन्ति विना येन न उत्थापयितुम् ओजसा ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	क्योंकि	प्रभवन्ति	१३.	समर्थ होते है
प्रसुप्तम्	९.	सोये हुये	विना	७.	विना (केवल)
पुरुषम्	१०.	पुरुष की	येन	६.	जिस आत्मा के
प्राण	२.	प्राण	न	१२.	नहीं
इन्द्रिय	३.	इन्द्रिय	उत्थाप यितुम्	११.	उठाने में
मनः	४.	मन (और)	ओजसा ॥	८.	अपने बल से
धिया ।	५.	बुद्धि			

श्लोकार्थ—क्योंकि प्राण, इन्द्रिय, मन और बुद्धि जिस आत्मा के विना केवल अपने बल से सोये हुये पुरुष को उठाने में समर्थ नहीं होते हैं ॥

द्वासप्ततितमः श्लोकः

तमस्मिन् प्रत्यगात्मानं धिया योगप्रवृत्तया ।
भक्त्या विरक्त्या ज्ञानेन विविच्यात्मनि चिन्तयेत् ॥७२॥

पदच्छेद—

तम् अस्मिन् प्रत्यगात् आत्मानम् धिया योग प्रवृत्तया ।
भक्त्या विरक्त्या ज्ञानेन विविच्ये आत्मनि चिन्तयेत् ॥

शब्दार्थ—

तम्	७.	उस	भक्त्या	१.	(अतः) भक्ति
अस्मिन्	५.	इस	विरक्त्या	२.	वैराग्य (और)
प्रत्यगात्	८.	अन्तर्यामि	ज्ञानेन	३.	ज्ञान से
आत्मानम्	९.	परमात्मा का	विविच्य	४.	विचार करके
धिया	१२.	एकाग्र बुद्धि से	आत्मनि	६.	शरीर में (स्थित)
योग	१०.	समाधि में	चिन्तयेत् ॥	१३.	चिन्तन करना चाहिये
प्रवृत्तया ।	११.	लगी हुई ।			

श्लोकार्थ—अतः भक्ति, वैराग्य और ज्ञान से विचार करके इस शरीर में स्थित उस अन्तर्यामि परमात्मा का समाधि में लगी हुई एकाग्र बुद्धि से चिन्तन करना चाहिये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये तत्त्वसमाम्नाये षड्विंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२६॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

सप्तविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—प्रकृतिस्थोऽपि पुरुषो नाज्यते प्राकृतैर्गुणैः ।
अविकारादकर्तृत्वान्निर्गुणत्वाज्जलार्कवत् ॥१॥

पदच्छेद—

प्रकृतिस्थः अपि पुरुषः न अज्यते प्राकृतैः गुणैः ।
अविकारात् कर्तृत्वात् निर्गुणत्वात् जल अर्कवत् ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतिस्थः	१. प्रकृति में स्थित रहकर	गुणैः ।		७.	सुख-दुःखादि धर्मों में
अपि	२. भी	अविकारात्		१०.	(क्योंकि वह) निर्विकार है (किसी का)
पुरुषः	३. आत्मा	कर्तृत्वात्		११.	कर्ता नहीं है (और)
न	८. नहीं	निर्गुणत्वात्		१२.	निर्गुण है
अज्यते	९. लिप्त होता है	जल		४.	जल में (प्रतिबिम्बित)
प्राकृतैः	६. प्रकृति के	अर्कवत् ॥		५.	सूर्य के समान

श्लोकार्थ—प्रकृति में स्थित रहकर भी आत्मा जल में प्रतिबिम्बित सूर्य के समान प्रकृति के सुख-दुःखादि धर्मों में लिप्त नहीं होता है। क्योंकि वह निर्विकार है किसी का कर्ता नहीं है और निर्गुण है ॥

द्वितीयः श्लोकः

स एष यर्हि प्रकृतेर्गुणेष्वभिविषज्जते ।
अहंक्रियाविमूढात्मा कर्तास्मीत्यभिमन्यते ॥२॥

पदच्छेद—

सः एषः यर्हि प्रकृतेः गुणेषु अभिविषज्जते ।
अहंक्रिया विमूढात्मा कर्ता अस्मि इति अभिमन्यते ॥

शब्दार्थ—

सः	६. वही	अहंक्रिया	७. अहंकार से
एषः	२. आत्मा	विमूढात्मा	८. मोहित बुद्धि होकर
यर्हि	३. जब	कर्ता	९. सब का कर्ता
प्रकृतेः	४. प्रकृति के	अस्मि	१०. हूँ
गुणेषु	५. गुणों में	इति	११. इस प्रकार
अभिविषज्जते ।	६. लिप्त हो जाता है (तब)	अभिमन्यते ॥	१२. मानने लगता है

श्लोकार्थ—वही आत्मा जब प्रकृति के गुणों में लिप्त हो जाता है। तब अहंकार से मोहित बुद्धि होकर सब का कर्ता हूँ इस प्रकार मानने लगता है ॥

तृतीयः श्लोकः

तेन संसारपदवीमवशोऽभ्येत्य निर्वृतः ।
प्रासङ्गिकैः कर्मदोषैः सदसन्मिश्रयोनिषु ॥३॥

पदच्छेद—

तेन संसार पदवीम् अवशः अभ्येत्य निवृतः ।
प्रासङ्गिकैः कर्मदोषैः सत् असत् मिश्र योनिषु ॥

शब्दार्थ—

तेन	३.	उस अभिमान के कारण	प्रासङ्गिकैः	७.	प्रकृति के सङ्ग से किये गये
संसार	४.	संसार के (जन्म-मृत्यु के)	कर्मदोषैः	८.	कर्मों के दोषों से
पदवीम्	५.	चक्र में	सत्	९.	उत्तम
अवशः	१.	स्वतन्त्र (और)	असत्	११.	अधम
अभ्येत्य	६.	फंसकर	मिश्र	१०.	मध्यम (और)
निवृतः ।	२.	शान्तानन्द आत्मा	योनिषु ॥	१२.	योनियों में (भटकता रहता है)

श्लोकार्थ—स्वतन्त्र और शान्तानन्द आत्मा उस अभिमान के कारण संसार के जन्म-मृत्यु के चक्र में फंसकर प्रकृति के सङ्ग से किये गये कर्मों के दोषों से उत्तम, मध्यम और अधम योनियों में भटकता रहता है ।

चतुर्थः श्लोकः

अर्थे ह्यविद्यमानेऽपि संसृतिर्न निवर्तते ।
ध्यायतो विषयानस्य स्वप्नेऽनर्थागमो यथा ॥४॥

पदच्छेद—

अर्थे हि अविद्यमाने अपि संसृतिः न निवर्तते ।
ध्यायतो विषयान् अस्य स्वप्ने अनर्थ आगमः यथा ॥

शब्दार्थ—

अर्थे हि	५.	(उसी प्रकार) संसार के	ध्यायतो	९.	सुख-दुःख की प्राप्ति होती है
अविद्यमाने	६.	असत् होने पर	विषयान्	८.	विषयों में
अपि	७.	भी	अस्य	१०.	इस पुरुष का
संसृतिः	११.	आवागमन	स्वप्ने	२.	स्वप्न में
न	१२.	नहीं	अनर्थ	३.	वस्तु के अभाव में भी
निवर्तते ।	१३.	समाप्त होता है	आगमः	४.	ध्यान रहने से
			यथा ।	१.	जैसे

श्लोकार्थ—जैसे स्वप्न में वस्तुओं के अभाव में भी सुख-दुःख की प्राप्ति होती है । उसी प्रकार संसार के असत् होने पर भी विषयों में ध्यान रहने से इस पुरुष का आवागमन समाप्त नहीं होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

अतएव शनैश्चित्तं प्रसक्तमसतां पथि ।
भक्तियोगेन तीव्रेण विरक्त्या च नयेद्वशम् ।।५।।

पदच्छेद—

अतएव शनैः चित्तम् प्रसक्तम् सताम् पथि ।
भक्तियोगेन तीव्रेण विरक्त्या च नयेत् वशम् ।।

शब्दार्थ—

अतएव	१.	इसीलिये	भक्तियोगेन	७.	भक्ति योग से
शनैः	६.	धीरे-धीरे	तीव्रेण	६.	तीव्र
चित्तम्	५.	चित्त को	विरक्त्या	९.	वैराग्य से
प्रसक्तम्	४.	फंसे हुये	च।	८.	और
सताम्	२.	असत	नयेत्	११.	करे
पथि।	३.	मार्ग में	वशम्।।	१०.	वश में

श्लोकार्थ—इसीलिये असत् मार्ग में फँसे हुये चित्त को धीरे-धीरे तीव्र भक्ति योग से और वैराग्य से वश में करे।

षष्ठः श्लोकः

यमादिभिर्योगपथैरभ्यसञ् श्रद्धयान्वितः ।
मयि भावेन सत्येन मत्कथाश्रवणेन च ।।६।।

पदच्छेद—

यम आदिभिः योगपथैः अभ्यसन् श्रद्धया अन्वितः ।
मयि भावेन सत्येन मत् कथा श्रवणेन च ।।

शब्दार्थ—

यम	१०.	यम-नियम	मयि	१.	मेरे प्रति
आदिभिः	११.	इत्यादि	भावेन	३.	भाव से
योगपथैः	१२.	अष्टाङ्ग योग के मार्ग से	सत्येन	२.	शुद्ध
अभ्यसन्	१३.	अभ्यास करना चाहिये	मत्	४.	मेरी
श्रद्धया	८.	श्रद्धा से	कथा	५.	कथा के
अन्वितः।	९.	युक्त होकर	श्रवणेन	६.	श्रवण से
			च।।	७.	और

श्लोकार्थ—मेरे प्रति शुद्ध भाव से मेरी कथा के श्रवण से और श्रद्धा से शुद्ध होकर यम-नियम इत्यादि अष्टाङ्ग योग के मार्ग से अभ्यास करना चाहिये ।।

सप्तमः श्लोकः

सर्वभूतसमत्वेन निर्वैरेणाप्रसङ्गतः ।
ब्रह्मचर्येण मौनेन स्वधर्मेण बलीयसा ॥७॥

पदच्छेद—

सर्वभूत समत्वेन निर्वैरेण अप्रसङ्गतः ।
ब्रह्मचर्येण मौनेन स्वधर्मेण बलीयसा ॥

शब्दार्थ—

सर्वभूत	२.	सभी प्राणियों के प्रति	ब्रह्मचर्येण	५.	ब्रह्मचर्य (और)
समत्वेन	३.	समभाव	मौनेन	६.	मौन रखकर
निर्वैरेण	४.	मैत्री भाव	स्वधर्मेण	८.	अपने धर्म का (अनुष्ठान करे)
अप्रसङ्गतः ।	१.	आसक्ति से रहित होकर	बलीयसा ॥	७.	भगवान् में समर्पण करके

श्लोकार्थ— आसक्ति से रहित होकर सभी प्राणियों के प्रति समभाव, मैत्री भाव, ब्रह्मचर्य और मौन रखकर भगवान् में समर्पण करके अपने धर्म का अनुष्ठान करे ॥

अष्टमः श्लोकः

यदृच्छयोपलब्धेन सन्तुष्टो मितभुङ् मुनिः ।
विविक्तशरणः शान्तो मैत्रः करुण आत्मवान् ॥८॥

पदच्छेद—

यदृच्छया उपलब्धेन सन्तुष्टः मित भुक् मुनिः ।
विविक्त शरणः शान्तः मैत्रः करुण आत्मवान् ॥

शब्दार्थ—

यदृच्छया	१.	अपने-आप	विविक्त	६.	एकान्त स्थान में
उपलब्धेन	२.	प्राप्त हुये विषयों से	शरणः	७.	निवास करे (उससे)
सन्तुष्टः	३.	सन्तुष्ट रहकर	शान्तः	८.	शान्ति
मित	४.	थोड़ा	मैत्रः	९.	अनुराग
भुक्	५.	भोजन करे (और)	करुण	१०.	करुणा (और)
मुनिः ।	६.	मनन पूर्वक	आत्मवान् ॥	११.	आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है

श्लोकार्थ—अपने-आप प्राप्त हुये विषयों से सन्तुष्ट रहकर थोड़ा-भोजन करे और मनन पूर्वक एकान्त स्थान में निवास करे। उससे शान्ति, अनुराग, करुणा और आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है ॥

नवमः श्लोकः

सानुबन्धे च देहेऽस्मिन्नकुर्वन्नसदाग्रहम् ।
ज्ञानेन दृष्टतत्त्वेन प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥९॥

पदच्छेद—

सानुबन्धे च देहे अस्मिन् अकुर्वन् असद् आग्रहम् ।
ज्ञानेन दृष्ट तत्त्वेन प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥

शब्दार्थ—

सानुबन्धे	४. बन्धु-बान्धवों में	ज्ञानेन	७. ज्ञान से
च	३. और	दृष्ट	१२. दर्शन करे
देहे	२. शरीर में	तत्त्वेन	११. वास्तविक स्वरूप का
अस्मिन्	१. इस	प्रकृतेः	८. प्रकृति के
अकुर्वन्	६. रक्खे (तथा)	पुरुषस्य	१०. पुरुष के
असद्-आग्रहम् ।	५. असत्य, बुद्धि	च ॥	९. और

श्लोकार्थ—इस शरीर में और बन्धु-बान्धवों में असत्य, बुद्धि रक्खे । तथा ज्ञान से प्रकृति के और पुरुष के वास्तविक स्वरूप का दर्शन करे ॥

दशमः श्लोकः

निवृत्तबुद्ध्यवस्थानो दूरीभूतान्यदर्शनः ।
उपलभ्यात्मनाऽऽत्मानं चक्षुषेवार्कमात्मदृक् ॥१०॥

पदच्छेद—

निवृत्त बुद्धिः अवस्थानः दूरीभूत अन्य दर्शनः ।
उपलभ्य आत्मना आत्मानम् चक्षुषा इव अर्कम् आत्म दृक् ॥

शब्दार्थ—

निवृत्त	३. ऊपर उठकर	आत्मना	७. अन्तःकरण से
बुद्धिः	१. बुद्धि की	आत्मानम्	८. आत्मा को
अवस्थानः	२. तीनों अवस्थाओं से	चक्षुषा	१३. नेत्रों से
दूरीभूत	६. न करे (किन्तु)	इव	१२. जैसे
अन्य	४. दूसरे का	अर्कम्	१४. सूर्य का (दर्शन किया जाता है)
दर्शनः ।	५. दर्शन	आत्म	१०. आत्मा का
उपलभ्य	९. प्राप्त करके	दृक् ॥	११. दर्शन करे

श्लोकार्थ—बुद्धि की तीनों अवस्थाओं से ऊपर उठकर दूसरे का दर्शन न करे । किन्तु अन्तःकरण से आत्मा को प्राप्त करके आत्मा का दर्शन करे । जैसे नेत्रों से सूर्य का दर्शन किया जाता है ॥

एकादशः श्लोकः

मुक्तलिङ्गं सदाभासमसति प्रतिपद्यते ।
सतो बन्धुमसच्चक्षुः सर्वानुस्यूतमद्वयम् ॥११॥

पदच्छेद—

मुक्त लिङ्गम् सत् आभासम् असति प्रतिपद्यते ।
सतः बन्धुम् असत् चक्षुः सर्व अनुस्यूतम् अद्वयम् ॥

शब्दार्थ—

मुक्त	२.	रहित है	सतः	७.	वह प्रकृति आदि सत् कारण का
लिङ्गम्	१.	यह आत्मा सूक्ष्म शरीर से	बन्धुम्	८.	अधिष्ठान है
सत्	४.	उस सत् का	असत्	९.	देहादि असत् वस्तुओं का
आभासम्	५.	आभास	चक्षुः	१०.	प्रकाशक है
असति	३.	अहंकारादि असत् वस्तुओं में	सर्व	११.	वह सभी पदार्थों में
प्रतिपद्यते ।	६.	होता है	अनुस्यूतम्	१२.	व्याप्त
			अद्वयम् ॥	१३.	अद्वितीय तत्त्व है

श्लोकार्थ——यह आत्मा सूक्ष्म शरीर से रहित है । अहंकारादि असत् वस्तुओं में उस सत् का आभास होता है । वह प्रकृति आदि सत् कारण का अधिष्ठान है, देहादि असत् वस्तुओं का प्रकाशक है । वह सभी पदार्थों में व्याप्त अद्वितीय तत्त्व है ॥

द्वादशः श्लोकः

यथा जलस्थ आभासः स्थलस्थेनावदृश्यते ।
स्वाभासेन तथा सूर्यो जलस्थेन दिवि स्थितः ॥१२॥

पदच्छेद—

यथा जलस्थः आभासः स्थलस्थेन अवदृश्यते ।
स्व आभासेन तथा सूर्यः जलस्थेन दिवि स्थितः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	स्व	३.	अपनी
जलस्थः	५.	जल में स्थित	आभासेन	४.	परछाईं से
आभासः	६.	सूर्य का प्रतिबिम्ब	तथा	८.	उसी प्रकार
स्थलस्थेन	२.	दीवार पर पड़ी	सूर्यः	१२.	सूर्य का (ज्ञान होता है)
अवदृश्यते ।	७.	ज्ञात होता है	जलस्थेन	९.	जल में स्थित उस प्रतिबिम्ब से
दिवि	१०.	आकाश में	स्थितः ॥	११.	विद्यमान

श्लोकार्थ——जैसे दीवार पर पड़ी अपनी परछाईं से जल में स्थित, सूर्य का प्रतिबिम्ब ज्ञात होता है । उसी प्रकार जल में स्थित उस प्रतिबिम्ब से आकाश में विद्यमान सूर्य का ज्ञान होता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

एवं त्रिवृदहङ्कारो भूतेन्द्रियमनोमयैः ।
स्वाभासैर्लक्षितोऽनेन सदाभासेन सत्यदृक् ॥१३॥

पदच्छेद—

एवम् त्रिवृत् अहंकारः भूत इन्द्रिय मनोमयैः ।
स्वाभासैः लक्षितः अनेन सत् आभासेन सत्य दृक् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	उसी प्रकार	स्वाभासैः	५.	अपने आभास से
त्रिवृत्	६.	वैकारिकादि तीनों प्रकार का	लक्षितः	११.	ज्ञात होता है (और)
अहंकारः	७.	अहंकार (और)	अनेन	१०.	इस अहंकार से
भूत	२.	शरीर	सत्	८.	सत् स्वरूप आत्मा के
इन्द्रिय	३.	इन्द्रिय और	आभासेन	९.	आभास से युक्त
मनोमयैः	४.	मन पर पड़े	सत्य	१२.	सत्य स्वरूप परमात्मा का
			दृक् ॥	१३.	दर्शन होता है

श्लोकार्थ—उसी प्रकार शरीर इन्द्रिय और मन पर पड़े अपने आभास से वैकारिकादि तीनों प्रकार का अहंकार और सत् स्वरूप आत्मा के आभास से युक्त इस अहंकार से ज्ञात होता है और सत्य स्वरूप भगवान् परमात्मा का दर्शन होता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

भूतसूक्ष्मेन्द्रियमनोबुद्ध्यादिष्विह निद्रया ।
लीनेष्वसति यस्तत्र विनिद्रो निरहंक्रियः ॥१४॥

पदच्छेद—

भूतसूक्ष्म इन्द्रिय मनः बुद्धिः आदिषु इह निद्रया ।
लीनेषु असति यः तत्र विनिद्रः निरहंक्रियः ॥

शब्दार्थ—

भूत सूक्ष्म	३.	सूक्ष्म तन्मात्रा	लीनेषु	८.	लीन हो जाने पर
इन्द्रिय	४.	इन्द्रिय	असति	१०.	इस शरीर में
मनः	५.	मन	यः	११.	जो (आत्मा है वह)
बुद्धिः	६.	बुद्धि	तत्र	९.	वहाँ
आदिषु	७.	इत्यादि के	विनिद्रः	१२.	निद्रा से (और)
इह	१.	सुषुप्ति अवस्था में	निरहंक्रियः ॥	१३.	अहंकार से रहित रहता है
निद्रया ।	२.	नींद से			

श्लोकार्थ—सुषुप्ति अवस्था में नींद से सूक्ष्म तन्मात्रा इन्द्रिय, मन, बुद्धि, इत्यादि के लीन हो जाने पर वहाँ इस शरीर में जो आत्मा है वह निद्रा से और अहंकार से रहित रहता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मन्यमानस्तदाऽऽत्मानमनष्टो नष्टवन्मृषा ।
नष्टेऽहङ्करणे द्रष्टा नष्टवित्त इवातुरः ॥१५॥

पदच्छेद—

मन्यमानः तदा आत्मानम् अनष्टः नष्टवत् मृषा ।
नष्टे अहंकरणे द्रष्टा नष्ट वित्त इव आतुरः ॥

शब्दार्थ—

मन्यमानः	९.	मानता हुआ	नष्टे	४.	नष्ट हो जाने पर
तदा	५.	उस समय	अहंकरणे	३.	अहंकार के
आत्मानम्	७.	अपने को	द्रष्टा	१.	(यद्यपि) साक्षी आत्मा
अनष्टः	२.	अविनाशी है (फिर भी मनुष्य)	नष्ट	११.	नष्ट हो गया (हो उसके)
नष्टवत्	८.	नष्ट हुये की भाँति	वित्त	१०.	जिसका धन
मृषा ।	६.	भ्रान्ति से	इव आतुरः ॥	१२.	समान व्याकुल हो जाता है

श्लोकार्थ—यद्यपि साक्षी आत्मा अविनाशी है फिर भी मनुष्य अहंकार के नष्ट हो जाने पर उस समय भ्रान्ति से अपने को नष्ट हुये की भाँति मानता हुआ जिसका धन नष्ट हो गया हो उसके समान व्याकुल हो जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

एवं प्रत्यवमृश्यासावात्मानं प्रतिपद्यते ।
साहङ्कारस्य द्रव्यस्य योऽवस्थानमनुग्रहः ॥१६॥

पदच्छेद—

एवम् प्रत्यवमृश्य असौ आत्मानम् प्रतिपद्यते ।
स अहंकारस्य द्रव्यस्य यः अवस्थानम् अनुग्रहः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	स अहंकारस्य	७.	अहंकार के साथ-साथ
प्रत्यवमृश्य	२.	विचार करके	द्रव्यस्य	८.	सभी द्रव्यों का
असौ	३.	वह पुरुष	यः	६.	जो आत्मा
आत्मानम्	४.	आत्मा को	अवस्थानम्	९.	अधिष्ठान (और)
प्रतिपद्यते ।	५.	पहिचानता है	अनुग्रहः ॥	१०.	प्रकाशक है

श्लोकार्थ—इस प्रकार विचार करके वह पुरुष आत्मा को पहिचानता है जो आत्मा अहंकार के साथ सभी द्रव्यों का अधिष्ठान और प्रकाशक है ॥

सप्तदशः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—पुरुषं प्रकृतिर्ब्रह्मन्न विमुञ्चति कर्हिचित् ।
अन्योन्यापाश्रयत्वाच्च नित्यत्वादनयोः प्रभो ॥१७॥

पदच्छेद—

पुरुषम् प्रकृतिः ब्रह्मन् न विमुञ्चति कर्हिचित् ।
अन्योन्य अपाश्रयत्वात् च नित्यत्वात् अनयोः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

पुरुषम्	३.	पुरुष को	अन्योन्य	११.	एक दूसरे पर
प्रकृतिः	२.	प्रकृति	अपाश्रयत्वात्	१२.	आश्रित हैं
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !	च	१०.	और
न	५.	नहीं	नित्यत्वात् ।	९.	नित्य है
विमुञ्चति	६.	छोड़ सकती है (क्योंकि)	अनयोः	८.	ये दोनों
कर्हिचित् ।	४.	कभी भी	प्रभो ॥	७.	हे भगवन्

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! प्रकृति, पुरुष को कभी भी नहीं छोड़ सकती है । क्योंकि हे भगवन् ! ये दोनों नित्य हैं, और एक दूसरे पर आश्रित हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

यथा गन्धस्य भूमेश्च न भावो व्यतिरेकतः ।
अपां रसस्य च यथा तथा बुद्धेः परस्य च ॥१८॥

पदच्छेद—

यथा गन्धस्य भूमेः च न भावः व्यतिरेकतः ।
अपाम् रसस्य च यथा तथा बुद्धेः परस्य च ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	अपाम्	६.	जल
गन्धस्य	२.	गन्ध	रसस्य	८.	रस की
भूमेः	४.	पृथ्वी की (तथा)	च	७.	और
च	३.	और	यथा	५.	जैसे
न	११.	नहीं (होती)	तथा	१२.	उसी तरह
भावः	१०.	स्थिति	बुद्धेः	१३.	प्रकृति
व्यतिरेकतः ।	९.	अलग-अलग	परस्य	१५.	पुरुष की (भी स्थिति अलग नहीं हो सकती है)
			च ॥	१४.	और

श्लोकार्थ—जैसे गन्ध और पृथ्वी की तथा जैसे जल और रस की अलग-अलग स्थिति नहीं होती है । उसी तरह प्रकृति और पुरुष की भी स्थिति अलग नहीं हो सकती है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अकर्तुः कर्मबन्धोऽयं पुरुषस्य यदाश्रयः ।
गुणेषु सत्सु प्रकृतेः कैवल्यं तेष्वतः कथम् ॥१९॥

पदच्छेद—

अकर्तुः कर्मबन्धः अयम् पुरुषस्य यद् आश्रयः ।
गुणेषु सत्सु प्रकृतेः कैवल्यम् तेषु अतः कथम् ॥

शब्दार्थ—

अकर्तुः	१.	कर्ता न होने पर भी
कर्मबन्धः	६.	संसार का बन्धन (होता है)
अयम्	५.	यह
पुरुषस्य	२.	पुरुष को
यद्	३.	जिस
आश्रयः ।	४.	कारण से
गुणेषु	१०.	गुणों के
सत्सु	११.	रहते
प्रकृतेः	८.	प्रकृति के
कैवल्यम्	१२.	मोक्ष
तेषु	९.	उन
अतः	७.	इसलिये
कथम् ॥	१३.	कैसे हो सकता है

श्लोकार्थ—कर्ता न होने पर भी पुरुष को जिस कारण से यह संसार का बन्धन होता है । इसलिये प्रकृति के उन गुणों के रहते मोक्ष कैसे हो सकता है ॥

विंशः श्लोकः

क्वचित् तत्त्वावमर्शेन निवृत्तं भयमुल्वणम् ।
अनिवृत्तनिमित्तत्वात्पुनः प्रत्यवतिष्ठते ॥२०॥

पदच्छेद—

क्वचित् तत्त्व अवमर्शेन निवृत्तम् भयम् ।
उल्वणम् अनिवृत्त निमित्तत्वात् पुनः प्रत्यवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	५.	यदि कहीं
तत्त्व	१.	तत्त्वों के
अवमर्शेन	२.	विवेक से
निवृत्तम्	६.	समाप्त भी हो जाये (तो)
भयम्	४.	भय
उल्वणम्	३.	संसार का तीव्र
अनिवृत्त	८.	नाश न होने से
निमित्तत्वात्	७.	कारण रूप गुणों का
पुनः	९.	वह (फिर से)
प्रत्यवतिष्ठते ॥	१०.	उपस्थित हो सकता है

श्लोकार्थ—तत्त्वों के विवेक से संसार का तीव्र भय समाप्त भी हो जाये तो कारण रूप गुणों का नाश न होने से वह फिर से उपस्थित हो सकता है ॥

एकविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अनिमित्तनिमित्तेन स्वधर्मेणामलात्मना ।
तीव्रया मयि भक्त्या च श्रुतसम्भृतया चिरम् ॥२१॥

पदच्छेद—

अनिमित्त निमित्तेन स्वधर्मेण अमल आत्मना ।
मयि भक्त्या च श्रुत सम्भृतया चिरम् ॥

शब्दार्थं—

अनिमित्त	१.	निष्काम	मयि	१०.	मेरी
निमित्तेन	२.	कर्म से	भक्त्या	१२.	भक्ति से (प्रकृति के गुणों का नाश हो जाता है)
स्वधर्मेण	३.	अपने कर्तव्य पालन से	च	६.	और
अमल	४.	शुद्ध	श्रुत	८.	सुनी हुई कथाओं में
आत्मना ।	५.	अन्तःकरण से	सम्भृतया	९.	पुष्ट हुई
तीव्रया	११.	तीव्र	चिरम् ॥	७.	बहुत समय तक

श्लोकार्थ—निष्काम कर्म से अपने कर्तव्य पालन से शुद्ध अन्तःकरण से और बहुत समय तक सुनी हुई कथाओं से पुष्ट हुई मेरी तीव्र भक्ति से प्रकृति के गुणों का नाश हो जाता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

ज्ञानेन दृष्टतत्त्वेन वैराग्येण बलीयसा ।
तपोयुक्तेन योगेन तीव्रेणात्मसमाधिना ॥२२॥

पदच्छेद—

ज्ञानेन दृष्ट तत्त्वेन वैराग्येण बलीयसा ।
तपः युक्तेन योगेन तीव्रेण आत्म समाधिना ॥

शब्दार्थं—

ज्ञानेन	३.	ज्ञान से	तपः	६.	तपस्या से
दृष्ट	२.	साक्षात्कार कराने वाले	युक्तेन	७.	परिपूर्ण
तत्त्वेन	१.	तत्त्वों का	योगेन	८.	योगाभ्यास से (और)
वैराग्येण	५.	वैराग्य से	तीव्रेण	१०.	तीव्र
बलीयसा ।	४.	दृढ़	आत्म	९.	चित्त की
			समाधिना ॥	११.	एकाग्रता से (प्राकृत गुणों का नाश होता है)

श्लोकार्थ—तत्त्वों का साक्षात्कार कराने वाले ज्ञान से दृढ़ वैराग्य से तपस्या से परिपूर्ण योगाभ्यास से और चित्त की तीव्र एकाग्रता से (प्राकृत गुणों का नाश होता है) ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

प्रकृतिः पुरुषस्येह दह्यमाना त्वहर्निशम् ।
तिरोभवित्री शनकैरग्नेर्योनिरिवारणिः ॥२३॥

पदच्छेद—

प्रकृतिः पुरुषस्य इह दह्यमाना तु अहर्निशम् ।
तिरोभवित्री शनकैः अग्नेः योनिः इव अरणिः ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतिः	९.	प्रकृति	तिरोभवित्री	१२.	तिरोहित हो जाती है
पुरुषस्य	८.	पुरुष की	शनकैः	११.	धीरे-धीरे
इह	१०.	संसार में	अग्नेः	२.	अग्नि से
दह्यमाना	७.	क्षीण होती हुई	योनिः	३.	उसका कारण
तु	५.	उसी प्रकार (इन साधनों से)	इव	१.	जैसे
अहर्निशम् ।	६.	दिन-रात	अरणिः ॥	४.	अरणि से भस्म हो जाती है

श्लोकार्थ——जैसे अग्नि से उसका कारण अरणि से भस्म हो जाती है। उसी प्रकार इन साधनों से दिन-रात क्षीण होती हुई पुरुष की प्रकृति संसार में धीरे-धीरे तिरोहित हो जाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

भुक्तभोगा परित्यक्ता दृष्टदोषा च नित्यशः ।
नेश्वरस्याशुभं धत्ते स्वे महिम्नि स्थितस्य च ॥२४॥

पदच्छेद—

भुक्त भोगा परित्यक्ता दृष्ट दोषा च नित्यशः ।
न ईश्वरस्य अशुभम् धत्ते स्वे महिम्नि स्थितस्य च ॥

शब्दार्थ—

भुक्त	२.	भोग कर	न	१४.	नहीं
भोगा	१.	भोगों को	ईश्वरस्य	१२.	समर्थ पुरुष का
परित्यक्ता	३.	छोड़ी गई	अशुभम्	१३.	अकल्याण
दृष्ट	७.	देखे जाने से	धत्ते	१५.	कर सकती है
दोषा	६.	दोष	स्वेमहिम्नि	८.	अपने स्वरूप में
च	४.	प्रकृति	स्थितस्य	१०.	स्थित
नित्यशः ।	५.	सदा	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ——भोगों को भोगकर छोड़ी गई प्रकृति सदा दोष देखे जाने से अपने स्वरूप में स्थित और समर्थ पुरुष का अकल्याण नहीं कर सकती है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यथा ह्यप्रतिबुद्धस्य प्रस्वापो बह्वनर्थभृत् ।
स एव प्रतिबुद्धस्य न वै मोहाय कल्पते ॥२५॥

पदच्छेद—

यथा हि प्रतिबुद्धस्य प्रस्वापः बहु अनर्थभृत् ।
सः एव प्रतिबुद्धस्य न वै मोहाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	सः एव	८.	उसे
हि	६.	किन्तु	प्रतिबुद्धस्य	७.	जग जाने पर
अप्रतिबुद्धस्य	२.	सोये हुये मनुष्य को	न	११.	नहीं
प्रस्वापः	३.	स्वप्न में	वै	९.	उससे
बहु	४.	अनेक प्रकार के	मोहाय	१०.	मोह
अनर्थभृत् ।	५.	कष्टों का अनुभव होता है	कल्पते ॥	१२.	होता है

श्लोकार्थ—जैसे सोये हुये मनुष्य को स्वप्न में अनेक प्रकार के कष्टों का अनुभव होता है। किन्तु जग जाने पर उसे, उससे मोह नहीं होता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

एवं विदिततत्त्वस्य प्रकृतिर्मयि मानसम् ।
युञ्जतो नापकुरुत आत्मारामस्य कर्हिचित् ॥२६॥

पदच्छेद—

एवम् युञ्जतः विदित तत्त्वस्य प्रकृतिः मयि मानसम् ।
युञ्जतः न अपकुरुते आत्मा रामस्य कर्हिचित् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	उसी प्रकार	युञ्जतः	६.	लगाये हुये हैं
विदित	३.	ज्ञान हो गया है (तथा)	न	११.	नहीं
तत्त्वस्य	२.	जिनको तत्त्वों का	अपकुरुते	१२.	अपकार कर सकती है
प्रकृतिः	९.	प्रकृति	आत्मा	७.	आत्मा में
मयि	४.	मुझमें	रामस्य	८.	विहार करने वाले (उन पुरुषों का)
मानसम् ।	५.	मन	कर्हिचित् ॥	१०.	कभी भी

श्लोकार्थ—उसी प्रकार जिनको तत्त्वों का ज्ञान हो गया है, तथा मुझमें मन लगाये हुये हैं। आत्मा में विहार करने वाले उन पुरुषों का प्रकृति कभी भी अपकार नहीं कर सकती है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यदैवमध्यात्मरतः कालेन बहुजन्मना ।
सर्वत्र जातवैराग्य आ ब्रह्मभुवनान्मुनिः ॥२७॥

पदच्छेद—

यदा एवम् अध्यात्म रतः कालेन बहु जन्मना ।
सर्वत्र जात वैराग्य आ ब्रह्म भुवनात् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	सर्वत्र	१२.	सभी भोगों से
एवम्	२.	इस प्रकार	जात	१४.	हो जाता है
अध्यात्म	७.	परमात्मा से	वैराग्य	१३.	वैराग्य
रतः	८.	प्रेम करता है (तब उसे)	आ	११.	पर्यन्त
कालेन	६.	बहुत काल	ब्रह्म	९.	ब्रह्म
बहु	४.	अनेक	भुवनात्	१०.	लोक
जन्मना ।	५.	जन्मों में	मुनिः ॥	३.	चिन्तनशील पुरुष

श्लोकार्थ—जब इस प्रकार चिन्तन शील पुरुष अनेक जन्मों में बहुत काल परमात्मा से प्रेम करता है। तब उसे ब्रह्म लोक पर्यन्त सभी भोगों से वैराग्य हो जाता है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

मद्भक्तः प्रतिबुद्धार्थो मत्प्रसादेन भूयसा ।
निःश्रेयसं स्वसंस्थानं कैवल्याख्यं मदाश्रयम् ॥२८॥

पदच्छेद—

मद् भक्तः प्रतिबुद्धे अर्थे मत् प्रसादेन भूयसा ।
निः श्रेयशम् स्व संस्थानम् कैवल्य आख्यम् मद् आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

मद्	३.	मेरा	निः श्रेयसम्	१४.	मुक्ति को (प्राप्त करता है)
भक्तः	४.	भक्त	स्व	१०.	अपने
प्रतिबुद्धे	२.	ज्ञानी	संस्थानम्	११.	स्वरूप भूत
अर्थे	१.	आत्म स्वरूप का	कैवल्य	१२.	कैवल्य
मत्	५.	मेरी	आख्यम्	१३.	नाम की
प्रसादेन	७.	कृपा से	मद्	८.	मेरे
भूयसा ।	६.	महती	आश्रयम् ॥	९.	आश्रित

श्लोकार्थ—आतम स्वरूप का ज्ञानी मेरा भक्त मेरी महती कृपा से मेरे आश्रित अपने स्वरूप भूत कैवल्य नाम की मुक्ति को प्राप्त करता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

प्राप्नोतीहाञ्जसा धीरः स्वदृशाच्छिन्नसंशयः ।
यद्गत्वा न निवर्तेत योगी लिङ्गाद्विनिर्गमे ॥२९॥

पदच्छेद—

प्राप्नोति इह अञ्जसा धीरः स्वदृशा छिन्न संशयः ।
यद् गत्वा न निवर्तेत योगी लिङ्गाद्विनिर्गमे ॥

शब्दार्थ—

प्राप्नोति	१०.	प्राप्त कर लेता है	यद्	११.	जहाँ
इह	३.	इस संसार में	गत्वा	१२.	जाकर
अञ्जसा	९.	सहज में (उस पद को)	न	१३.	नहीं
धीरः	१.	धैर्यशाली	निवर्तेत	१४.	लौटना होता है
स्वदृशा	४.	अपने अनुभव से	योगी	२.	योगी पुरुष
छिन्न	६.	रहित हो जाता है	लिङ्गात्	७.	सूक्ष्म शरीर का
संशयः ।	५.	सन्देह	विनिर्गमे ॥	८.	नाश हो जाने पर

श्लोकार्थ—धैर्यशाली योगी पुरुष इस संसार में अपने अनुभव से सन्देह रहित हो जाता है । सूक्ष्म शरीर का नाश हो जाने पर सहज में उस पद को प्राप्त कर लेता है । जहाँ जाकर लौटना नहीं होता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

यदा न योगोपचितासु चेतो मायासु सिद्धस्य विषज्जतेऽङ्ग ।
अनन्यहेतुष्वथ मे गतिः स्याद् आत्यन्तिकी यत्र न मृत्युहासः ॥३०॥

पदच्छेद—

यदा न योग उपचितासु चेतः मायासु सिद्धस्य विषज्जते अङ्ग ।
अनन्य हेतुषु अथ मे गतिः स्यात् आत्यन्तिकी यत्र न मृत्यु हासः ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जब	अनन्य	८.	नहीं प्राप्त होने वाली
न	१०.	नहीं	हेतुषु	७.	अन्य उपायों से
योग	५.	योग से	अथ, मे	१२.	तब उसे, मेरा
उपचितासु	६.	बढ़ी हुई (तथा)	गतिः, स्यात्	१४.	परम्धाम, मिलता है
चेतः	४.	चित्त	आत्यन्तिकी	१३.	अविनाशी
मायासु	९.	माया मयी (अणिमादि सिद्धियों में)	यत्र	१५.	जहाँ
सिद्धस्य	३.	सिद्धियों को प्राप्त पुरुष का	न	१७.	नहीं
विषज्जते	११.	फंसता है	मृत्यु	१६.	मृत्यु कुछ भी
अङ्ग ॥	१.	हे माता जी !	हासः ॥	१८.	कर सकती है

श्लोकार्थ—हे माता जी ! जब सिद्धियों को प्राप्त पुरुष का चित्त योग से बढ़ी हुई तथा अन्य उपायों से प्राप्त होने वाली मायामयी अणिमादि सिद्धियों में नहीं फंसता है तब उसे मेरा अविनाशी परम-धाम मिलता है । जहाँ मृत्यु कुछ भी नहीं कर सकती है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपख्याने
सप्तविंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२७॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

अष्टत्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—योगस्य लक्षणं वक्ष्ये सबीजस्य नृपात्मजे।
मनो येनैव विधिना प्रसन्नं याति सत्पथम् ॥१॥

पदच्छेद—

योगस्य लक्षणम् वक्ष्ये सबीजस्य नृप आत्मजे।
मनः येन एव विधिना प्रसन्नम् याति सत् पथम् ॥

शब्दार्थ—

योगस्य	३.	योग का	येन	६.	जिसके
लक्षणम्	४.	लक्षण	एव	८.	ही
वक्ष्ये	५.	कहूँगा	विधिना	७.	आचरण से
सबीजस्य	२.	ध्यान मंत्र के साथ	प्रसन्नम्	१०.	सन्तुष्ट होकर
नृप आत्मजे।	१.	हे मातः! मैं	याति	१२.	प्रवृत्त होता है
मनः	६.	चित्त	सत् पथम् ॥	११.	सन्मार्ग में

श्लोकार्थ—हे मातः! मैं ध्यान मंत्र के साथ योग का लक्षण कहूँगा। जिसके आचरण से ही चित्त सन्तुष्ट होकर सन्मार्ग में प्रवृत्त होता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

स्वधर्माचरणं शक्त्या विधर्माच्च निवर्तनम्।
दैवाल्लब्धेन सन्तोष आत्मविच्चरणार्चनम् ॥२॥

पदच्छेद—

स्वधर्म आचरणम् शक्त्या विधर्मात् च निवर्तनम्।
दैवात् लब्धेन सन्तोष आत्मवित् चरण अर्चनम् ॥

शब्दार्थ—

स्वधर्म	२.	अपने धर्म का	दैवात्	७.	भाग्य से
आचरणम्	३.	पालन	लब्धेन	८.	प्राप्त हुई वस्तुओं से
शक्त्या	१.	यथाशक्ति	सन्तोष	९.	सन्तुष्टि (तथा)
विधर्मात्	४.	अधर्म का	आत्मवित्	१०.	आत्मज्ञानियों के
च	६.	और	चरण	११.	चरणों की
निवर्तनम।	५.	परित्याग	अर्चनम्।	१२.	सेवा (करें)

श्लोकार्थ—यथाशक्ति अपने धर्म का पालन, अधर्म का परित्याग और भाग्य से प्राप्त हुई वस्तुओं से सन्तुष्टि तथा आत्म-ज्ञानियों के चरणों की सेवा करें ॥

तृतीयः श्लोकः

ग्राम्यधर्मनिवृत्तिश्च मोक्षधर्मरतिस्तथा ।
मितमेध्यादनं शश्वद्विविक्तक्षेमसेवनम् ॥३॥

पदच्छेद—

ग्राम्यधर्म निवृत्तिः च मोक्षधर्म रतिः तथा ।
मितमेध्य अदनम् शश्वत् विविक्त क्षेम सेवनम् ॥

शब्दार्थ—

ग्राम्यधर्म	१.	विषयों के भोगों से	मितमेध्य	७.	थोड़ा और पवित्र
निवृत्तेः	२.	दूर रहना	अदनम्	८.	भोजन करना (एवम्)
च	३.	और	शश्वत्	९.	निरन्तर
मोक्षधर्म	४.	मुक्ति के मार्ग में	विविक्त	१०.	एकान्त (और)
रतिः	५.	अनुराग करना	क्षेम	११.	निर्भय स्थान में
तथा ।	६.	तथा	सेवनम् ॥	१२.	निवास करना चाहिये

श्लोकार्थ—विषयों के भोगों से दूर रहना और मुक्ति के मार्ग में अनुराग करना तथा थोड़ा और पवित्र भोजन करना एवम् निरन्तर एकान्त और निर्भय स्थान में निवास करना चाहिये ॥

चतुर्थः श्लोकः

अहिंसा सत्यमस्तेयं यावदर्थपरिग्रहः ।
ब्रह्मचर्यं तपः शौचं स्वाध्यायः पुरुषार्चनम् ॥४॥

पदच्छेद—

अहिंसा सत्यम् अस्तेयम् यावत् अर्थ परिग्रहः ।
ब्रह्मचर्यम् तपः शौचम् स्वाध्यायः पुरुष अर्चनम् ॥

शब्दार्थ—

अहिंसा	१.	किसी जीव को न सताना	ब्रह्मचर्यम्	७.	ब्रह्मचर्य से रहना
सत्यम्	२.	सत्य बोलना	तपः	८.	तपस्या करना
अस्तेयम्	३.	चोरी नहीं करना	शौचम्	९.	अन्दर-बाहर से शुद्ध रहना
यावत्	४.	आवश्यकता के अनुसार	स्वाध्यायः	१०.	प्रतिदिन शास्त्राध्यन करना
अर्थ	५.	वस्तु का	पुरुष	११.	भगवान् श्री हरि की
परिग्रहः ।	६.	संग्रह करना	अर्चनम् ॥	१२.	पूजा करनी चाहिये

श्लोकार्थ—किसी जीव को न सताना, सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, आवश्यकता के अनुसार वस्तु का संग्रह करना, ब्रह्मचर्य से रहना, तपस्या करना, अन्दर-बाहर से शुद्ध रहना, प्रतिदिन शास्त्राध्ययन करना तथा भगवान् श्री हरि की पूजा करनी चाहिये ॥

पञ्चमः श्लोकः

मौनं सदाऽऽसनजयस्थैर्यं प्राणजयः शनैः ।
प्रत्याहारश्चेन्द्रियाणां विषयान्मनसा हृदि ॥५॥

पदच्छेद—

मौनम् सदा आसन जय स्थैर्यम् प्राणजयः शनैः ।
प्रत्याहारः च इन्द्रियाणाम् विषयात् मनसा हृदि ॥

शब्दार्थ—

मौनम्	२.	कम बोलना	प्रत्याहार	११.	हटाकर
सदा	१.	हमेशा	च	८.	और
आसन	३.	आसनों का	इन्द्रियाणाम्	९.	इन्द्रियों को
जय	४.	अभ्यास करके	विषयात्	१०.	विषयों से
स्थैर्यम्	५.	स्थिरता से बैठना	मनसा	१२.	मन के द्वारा
प्राणजयः	७.	स्वांस को जीतना	हृदि ॥	१३.	हृदय में ले जाना चाहिये
शनैः ।	६.	धीरे-धीरे			

श्लोकार्थ—हमेशा कम बोलना, आसनों का अभ्यास करके स्थिरता से बैठना, धीरे-धीरे स्वास को जीतना और इन्द्रियों को विषयों से हटा कर मन के द्वारा हृदय में ले जाना चाहिये ॥

षष्ठः श्लोकः

स्वधिष्ण्यानामेकदेशे मनसा प्राणधारणम् ।
वैकुण्ठलीलाभिध्यानं समाधानं तथात्मनः ॥६॥

पदच्छेद—

स्वधिष्ण्यानाम् एक देशे मनसा प्राण धारणम् ।
वैकुण्ठ लीला अभिध्यानम् समाधानम् तथा आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

स्वधिष्ण्यानाम्	१.	अपने अनेक स्थानों में से	वैकुण्ठ लीला	६.	भगवान् श्री हरि की लीलाओं का
एक देशे	२.	एक स्थान में	अभिध्यानम्	७.	निरन्तर चिन्तन करना
मनसा	३.	मन से	समाधानम्	१०.	एकाग्र रखना चाहिये
प्राण	४.	प्राण वायु से	तथा	८.	तथा
धारणम् ।	५.	धारण करना	आत्मनः ॥	९.	चित्त को

श्लोकार्थ—अपने अनेक स्थानों में से एक स्थान में मन से प्राण वायु से धारण करना, भगवान् श्री हरि की लीलाओं का निरन्तर चिन्तन करना तथा चित्त को एकाग्र रखना चाहिये ॥

सप्तमः श्लोकः

एतैरन्यैश्च पथिभिर्मनो दुष्टमसत्पथम् ।
बुद्ध्या युञ्जीत शनकैर्जितप्राणो ह्यतन्द्रितः ॥७॥

पदच्छेद—

एतैः अन्यैः च पथिभिः मनः दुष्टम् असत्, पथम् ।
बुद्धचा युञ्जीत शनकैः जित प्राणः हि अतन्द्रितः ॥

शब्दार्थ—

एतैः	४.	इन साधनों से	बुद्धया	११.	बु[illegible]
अन्यैः	६.	दूसरे	युञ्जीत	१४.	[illegible]
च	५.	और	शनकैः	१२.	[illegible]
पथिभिः	७.	उपायों	जित	३.	[illegible]ाक कर
मनः	१०.	चित्त को	प्राणः	[illegible]	प्राण वायु को
दुष्टम्	९.	दुष्ट	हि	१३.	परमात्मा में
असत्, पथम् ।	८.	कुमार्गगामी	अतन्द्रितः ॥	१.	सावधान मनुष्य

श्लोकार्थ—सावधान मनुष्य प्राण वायु को रोक कर इन साधनों से और दूसरे उपायों से कुमार्गगामी दुष्ट चित्त को बुद्धि के साथ धीरे-धीरे परमात्मा में लगावे ॥

अष्टमः श्लोकः

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य विजितासन आसनम् ।
तस्मिन् स्वस्ति समासीन ऋजुकायः समभ्यसेत् ॥८॥

पदच्छेद—

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य विजित आसन आसनम् ।
तस्मिन् स्वस्ति समासीनः ऋजु कायः समभ्यसेत् ॥

शब्दार्थ—

शुचौ	३.	पवित्र	तस्मिन्	७.	उस पर
देशे	४.	स्थान पर	स्वस्ति	८.	सुखपूर्वक
प्रतिष्ठाप्य	६.	लगा कर	समासीनः	९.	बैठ कर (तथा)
विजित	२.	सिद्धि के पश्चात् (पुरुष)	ऋजु	११.	सीधा करके
आसन	१.	आसन	कायः	१०.	शरीर को
आसनम् ।	५.	कुश-मृग चर्मादि का आसन	समभ्यसेत् ॥	१२.	समाधि का अभ्यास करे

श्लोकार्थ—आसन सिद्धि के पश्चात् पुरुष पवित्र स्थान पर कुश-मृग-चर्मादि का आसन लगा कर उस पर सुखपूर्वक बैठ कर तथा शरीर को सीधा करके समाधि का अभ्यास करे ।

नवमः श्लोकः

प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः ।
प्रतिकूलेन वा चित्तं यथास्थिरमचञ्चलम् ॥९॥

पदच्छेद—

प्राणस्य शोधयेत् मार्गम् पूर कुम्भक रेचकैः ।
प्रतिकूलेन वा चित्तम् यथा स्थिरम् अचञ्चलम् ॥

शब्दार्थ—

प्राणस्य	६.	प्राण वायु के	प्रतिकूलेन	५.	विपरीत क्रम से
शोधयेत्	८.	शोधन करे	वा	४.	अथवा इसके
मार्गम्	७.	मार्ग का	चित्तम्	१०.	मन
पूर	१.	पूरक	यथा	९.	जिससे कि
कुम्भक	२.	कुम्भक (और)	स्थिरम्	११.	स्थिर हो कर
रेचकैः ।	३.	रेचक प्राणायामों से	अचञ्चलम् ॥	१२.	चञ्चल न हो सके

श्लोकार्थ—पूरक, कुम्भक, रेचक प्राणायामों से अथवा इसके विपरीत क्रम से प्राण वायु के मार्ग का शोधन करे जिससे कि मन स्थिर होकर चञ्चल न हो सके ॥

दशमः श्लोकः

मनोऽचिरात्स्याद्विरजं जितश्वासस्य योगिनः ।
वाय्वग्निभ्यां यथा लोहं ध्मातं त्यजति वै मलम् ॥१०॥

पदच्छेद—

मनः अचिरात् स्यात् विरजम् जित श्वासस्य योगिनः ।
वायु अग्निभ्याम् यथा लोहम् ध्मातम् त्यजति वै मलम् ॥

शब्दार्थ—

मनः	१२.	चित्त	वायु	२.	हवा और
अचिरात्	१३.	प्राणायाम से शीघ्र ही	अग्निभ्याम्	३.	आग से
स्यात्	१५.	हो जाता है	यथा	१.	जैसे
विरजम्	१४.	निर्मल	लोहम्	५.	सोना अपने
जित	१०.	जीते हुये	ध्मातम्	४.	तपाया हुआ
श्वासस्य	९.	प्राण वायु को	त्यजति	७.	छोड़ देता है
योगिनः ।	११.	योगी पुरुष का	वै	८.	उसी प्रकार
			मलम् ॥	६.	मल को

श्लोकार्थ—जैसे हवा और आग से तपाया हुआ सोना अपने मल को छोड़ देता है। उसी प्रकार प्राण वायु को जीते हुये योगी पुरुष का चित्त प्राण वायु से शीघ्र ही निर्मल हो जाता है।

एकादशः श्लोकः

प्राणायामैर्दहेद्दोषान्धारणाभिश्च किल्विषान् ।
प्रत्याहारेण संसर्गान्ध्यानेनानीश्वरान् गुणान् ॥११॥

पदच्छेद—

प्राणायामैः दहेत् दोषान् धारणाभिः च किल्विषान् ।
प्रत्याहारेण संसर्गान् ध्यानेन अनीश्वरान् गुणान् ॥

शब्दार्थ—

प्राणायामैः	१.	प्राणायाम में	प्रत्याहारेण	५.	प्रत्याहार से
दहेत्	११.	दूर करना चाहिये	संसर्गान्	६.	विषयों के सम्बन्ध को
दोषान्	२.	शरीर के मल को	ध्यानेन	८.	ध्यान से
धारणाभिः	३.	धारणा से	अनीश्वरान्	९.	प्रकृति के
च	७.	और	गुणान् ।	१०.	दुर्गुणों को
किल्विषम् ॥	४.	पापों को			

श्लोकार्थ—प्राणायाम से शरीर के मल को, धारणा से पापों को, प्रत्याहार से विषयों के सम्बन्ध को और ध्यान से प्रकृति के दुर्गुणों को दूर करना चाहिये ॥

द्वादशः श्लोकः

यदा मनः स्वं विरजं योगेन सुसमाहितम् ।
काष्ठां भगवतो ध्यायेत्स्वासाग्रावलोकनः ॥१२॥

पदच्छेद—

यदा मनः स्वम् विरजम् योगेन सुसमाहितम् ।
काष्ठाम् भगवतः ध्यायेत् स्व स्वासाग्र अवलोकनः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	काष्ठाम्	११.	रूप का
मनः	४.	मन	भगवतः	१०.	भगवान् के
स्वम्	३.	अपना	ध्यायेत्	१२.	ध्यान करना चाहिये
विरजम्	५.	निर्मल (और)	स्व	७.	अपनी
योगेन	२.	योग के द्वारा	स्वासाग्र	९.	नासिका के अग्रभाग में स्थिर करके
सुसमाहितम् ।	६.	एकाग्र हो जाये (तब)	अवलोकनः ॥	८.	दृष्टि को

श्लोकार्थ—जब योग के द्वारा अपना मन निर्मल और एकाग्र हो जाये तब अपनी दृष्टि को नासिका के अग्रभाग में स्थिर करके भगवान् के रूप का ध्यान करना चाहिये ॥

त्रयोदशः श्लोकः

प्रसन्नवदनाम्भोजं पद्मगर्भारुणेक्षणम् ।
नीलोत्पलदलश्यामं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥१३॥

पदच्छेद—

प्रसन्न वदन अम्भोजम् पद्मगर्भ अरुण ईक्षणम् ।
नील उत्पलदल श्यामम् शङ्ख चक्र गदाधरम् ॥

शब्दार्थ—

प्रसन्न	३.	आनन्द से प्रसन्न है	नील	७.	शरीर नील
वदन	१.	भगवान् का मुख	उत्पलदल	८.	कमल-दल के समान
अम्भोजम्	२.	कमल	श्यामम्	१०.	श्याम वर्ण का है (और)
पद्मगर्भ	५.	कमल-कोश के समान	शङ्ख	११.	हाथों में शङ्ख
अरुण	६.	लाल है	चक्र	१२.	चक्र (एवं)
ईक्षणम् ।	४.	नेत्र	गदाधरम् ॥	१३.	गदा सुशोभित है

श्लोकार्थ— भगवान् का मुख-कमल आनन्द से प्रसन्न है, नेत्र कमल-कोश के समान लाल हैं। शरीर नील-कमल-दल के समान श्याम वर्ण का है और हाथों में शङ्ख चक्र एवं गदा सुशोभित है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

लसत्पङ्कजकिञ्जल्कपीतकौशेयवाससम् ।
श्रीवत्सवक्षसं भ्राजत्कौस्तुभामुक्तकन्धरम् ॥१४॥

पदच्छेद—

लसत् पङ्कज किञ्जल्क पीत कौशेय वाससम् ।
श्रीवत्स वक्षसम् भ्राजत् कौस्तुभ आमुक्त कन्धरम् ॥

शब्दार्थ—

लसत्	६.	लहरा रहा है	श्रीवत्स	८.	श्रीवत्स का चिह्न है
पङ्कज	१.	(उनके शरीर पर) कमल के	वक्षसम्	७.	वक्षः स्थल पर
किञ्जल्क	२.	पराग के समान	भ्राजत्	११.	शोभा दे रहा है
पीत	३.	पीला	कौस्तुभ	६.	कौस्तुभ
कौशेय	४.	रेशमी	आमुक्त	१०.	मणि
वाससम् ।	५.	पीताम्बर	कन्धरम् ॥	६.	गले में

श्लोकार्थ—उनके शरीर पर कमल के पराग के समान पीला रेशमी पीताम्बर लहरा रहा है। वक्षः स्थल पर श्रीवत्स का चिह्न है, गले में कौस्तुभ मणि शोभा दे रहा है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मत्तद्विरेफकलया परीतं वनमालया ।
परार्ध्यहारवलयकिरीटाङ्गदनूपुरम् ॥१५॥

पदच्छेद—

मत्त द्विरेफ कलया परीतम् वन मालया ।
परार्ध्य हार वलय किरीट अङ्गद नूपुरम् ॥

शब्दार्थं—

मत्त	४. मतवाले	**परार्ध्य**	७. (उनके अङ्गों में) बहुमूल्य
द्विरेफ	५. भौरों की	**हार**	८. हार
कलया	६. गुञ्जार है (तथा)	**वलय**	९. कंकण
परीतम्	१. (चरणों तक) लटकी हुई	**किरीट**	१०. मुकुट
वन	२. वन	**अङ्गद**	११. बाजूबन्द (और)
मालया ।	३. माला के ऊपर	**नूपुरम् ॥**	१२. पायजेब शोभित हैं

श्लोकार्थ—चरणों तक लटकी हुई वनमाला के ऊपर मतवाले भौरों की गुञ्जार है तथा जिनके अङ्गों में बहुमूल्य हार, कंकण, मुकुट, बाजूबन्द और पायजेब शोभित हैं ॥

षोडशः श्लोकः

काञ्चीगुणोल्लसच्छ्रोणिं हृदयाम्भोजविष्टरम् ।
दर्शनीयतमं शान्तं मनोनयनवर्धनम् ॥१६॥

पदच्छेद—

काञ्ची गुण उल्लसत् श्रोणिम् हृदय अम्भोज विष्टरम् ।
दर्शनीय तमम् शान्तम् मनः नयन वर्धनम् ॥

शब्दार्थं—

काञ्ची	१. करधनी की	**विष्टरम् ।**	७. आसन है (उनका)
गुण	२. लड़ियाँ (भगवान् के)	**दर्शनीय तमम्**	८. बहुत मनोहर
उल्लसत्	४. शोभा बढ़ा रही हैं	**शान्तम्**	९. शान्त-स्वरूप
श्रोणिम्	३. कमर की	**मनः**	१०. हृदय (और)
हृदय	५. भक्तों का हृदय	**नयन**	११. नेत्रों को
अम्भोज	६. कमल (उनका)	**वर्धनम् ॥**	१२. आनन्द देने वाला है

श्लोकार्थ—करधनी की लड़ियाँ भगवान् के कमर की शोभा बढ़ा रही है । भक्तों का हृदय कमल उनका आसन है तथा उनका बहुत मनोहर शान्त-स्वरूप हृदय और नेत्रों को आनन्द देने वाला है ॥

सप्तदशः श्लोकः

अपीच्यदर्शनं शश्वत्सर्वलोकनमस्कृतम् ।
सन्तं वयसि कैशोरे भृत्यानुग्रहकातरम् ॥१७॥

पदच्छेद—

अपीच्य दर्शनम् शश्वत् सर्वलोक नमस्कृतम् ।
सन्तम् वयसि कैशोरे भृत्य अनुग्रह कातरम् ॥

शब्दार्थ—

अपीच्य	१०.	बड़ी मनोहर है	सन्तम्	३.	भगवान् विद्यमान हैं
दर्शनम्	९.	उनकी झाँकी	वयसि	२.	अवस्था में
शश्वत्	६.	सदा	कैशोरे	१.	किशोर
सर्वलोक	७.	सभी लोकों में	भृत्य	४.	अपने भक्तों के ऊपर
नमस्कृतम् ।	८.	वन्दनीय हैं (और)	अनुग्रह, कातरम् ॥	५.	दया करने के लिये व्याकुल हैं

श्लोकार्थ—किशोर अवस्था में भगवान् विद्यमान हैं । अपने भक्तों के ऊपर दया करने के लिये व्याकुल हैं । सदा सभी लोकों में वन्दनीय हैं और उनकी झाँकी बड़ी मनोहर है ॥

अष्टदशः श्लोकः

कीर्तन्यतीर्थयशसं पुण्यश्लोकयशस्करम् ।
ध्यायेद्देवं समग्राङ्गम् यावन्न च्यवते मनः ॥१८॥

पदच्छेद—

कीर्तन्य तीर्थ यशसम् पुण्य श्लोक यशस्करम् ।
ध्यायेत् देवम् समग्र अङ्गम् यावत् न च्यवते मनः ॥

शब्दार्थ—

कीर्तन्य	३.	कीर्तन करने योग्य हैं (वे)	ध्यायेत्	८.	ध्यान करे
तीर्थ	१.	भगवान् की पवित्र	देवम्	६.	नारायण देव के
यशसम्	२.	कीर्ति	समग्र, अङ्गम्	७.	सभी, अङ्गों का (तब-तक)
पुण्य श्लोक	४.	पवित्र कीर्ति (बलि इत्यादि भक्तों के)	यावत्	९.	जब-तक (कि)
यशस्करम् ।	५.	(इस प्रकार) यश को बढ़ाने वाले हैं	न च्यवते	१०.	न हटे
			मनः ॥	१०.	मन (वहाँ से)

श्लोकार्थ—भगवान् की पवित्र कीर्ति कीर्तन करने योग्य हैं (वे पवित्र कीर्ति बलि इत्यादि भक्तों के यश को बढ़ाने वाले हैं । इस प्रकार नारायण देव के सभी अङ्गों का तब-तक ध्यान करे जब तक कि मन वहाँ से न हटे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

स्थितं व्रजन्तमासीनं शयानं वा गुहाशयम् ।
प्रेक्षणीयेहितं ध्यायेच्छुद्धभावेन चेतसा ॥१९॥

पदच्छेद—

स्थितम् व्रजन्तम् आसीनम् शयानम् वा गुहाशयम् ।
प्रेक्षणीय ईहितम् ध्यायेत् शुद्ध भावेन चेतसा ॥

शब्दार्थ—

स्थितम्	३.	खड़े हुये	प्रेक्षणीय	१.	(भगवान् का रूप) दर्शनीय है
व्रजन्तम्	४.	चलते हुये	ईहितम्	२.	अपनी इच्छानुसार
आसीनम्	५.	बैंठे हुये	ध्यायेत्	१०.	ध्यान करना चाहिये
शयानम्	६.	सोये हुये	शुद्धभावेन	८.	निर्मल
वा, गुहाशयम्	७.	अथवा, अन्तर्यामिरूप का	चेतसा	९.	मन से

श्लोकार्थ—भगवान् का स्वरूप दर्शनीय है, अपनी इच्छानुसार खड़े हुये, चलते हुये, बैंठे हुये, सोये हुये अथवा अन्तर्यामि रूप का निर्मल मन से ध्यान करना चाहिये ॥

विंशः श्लोकः

तस्मिँल्लब्धपदं चित्तं सर्वावयवसंस्थितम् ।
विलक्ष्यैकत्र संयुज्यादङ्गे भगवतो मुनिः ॥२०॥

पदच्छेद—

तस्मिन् लब्ध पदम् चित्रम् सर्व अवयव संस्थितम् ।
विलक्ष्य एकत्र संयुज्यात् अङ्गे भगवतः मुनिः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	भगवान् के रूप में	विलक्ष्य	४.	ऐसा देखकर
लब्ध	३.	प्राप्त हो गयी है	एकत्र	१०.	किसी एक
पदम्	२.	स्थिति (उनके)	संयुज्यात्	१२.	लगा
चित्तम्	९.	मन को	अङ्गे	११.	अङ्ग में
सर्व अवयव	७.	सभी अङ्गों में	भगवतः	६.	भगवान् के
संस्थितम् ।	८.	स्थित हुये	मुनिः ॥	५.	योगि-पुरुष

श्लोकार्थ—भगवान् के रूप में स्थिति प्राप्त हो गयी है । ऐसा देखकर योगि-पुरुष भगवान् के सभी अङ्गों में स्थित हुये मन को उनके किसी एक अंग में लगावे ॥

एकविंशः श्लोकः

सञ्चिन्तयेद्भगवतश्चरणारविन्दं वज्राङ्कुशध्वजसरोरुहलाञ्छनाढ्यम् ।
उत्तुङ्गरक्तविलसन्नखचक्रवालज्योत्स्नाभिराहतमहद्धृदयान्धकारम् ॥२१॥

पदच्छेद—

सञ्चिन्तयेत् भगवतः चरण अरविन्दम् वज्र अंङ्कुश ध्वज सरोरुह लाञ्छन आढ्यम् ।
उत्तुङ्ग रक्त विलसत् नख चक्रवाल ज्योत्स्नाभिः आहत महत् हृदय अन्धकारम् ॥

शब्दार्थ—

सञ्चिन्तयेत्	४	ध्यान करना चाहिये (वे)	उत्तुङ्ग	१०.	उनके उभरे हुये
भगवतः	१.	सबसे पहले भगवान् के	रक्त, विलसत्	११.	लाल शोभा मय
चरण, अरविन्दम्	२,३	चरण, कमलों का	नख, चक्रवाल	१२,१३	नख चन्द्रमण्डल की
वज्र, अंङ्कुश	५.	वज्र अंकुश	ज्योत्स्नाभिः	१४.	चाँदनी से (वे)
ध्वज, सरोरुह	६,७.	ध्वज (और) कमल के	आहत	१८.	दूर कर देती है
लाञ्छन	८.	चिह्नों से	महत्	१६.	घोर
आढ्यम् ।	९.	युक्त हैं	हृदय	१५.	भक्तों के हृदय के
			अन्धकारम् ॥	१७.	अज्ञान रूप अन्धकार को

श्लोकार्थ—सबसे पहले भगवान् के चरण कमलों का ध्यान करना चाहिये । वे वज्र, अंङ्कुश, ध्वज और कमल के चिह्नों से युक्त हैं । उनके उभरे हुये लाल शोभामय नख चन्द्रमण्डल की चाँदनी से वे भक्तों के हृदय के घोर अज्ञान रूप अन्धकार को दूर कर देती है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यच्छौचनिःसृतसरित्प्रवरोदकेन तीर्थेन मूर्ध्न्यधिकृतेन शिवः शिवोऽभूत् ।
ध्यातुर्मनःशमलशैलनिसृष्टवज्रं ध्यायेच्चिरं भगवतश्चरणारविन्दम् ॥२२॥

पदच्छेद—

यत् शौच निःसृत सरित् प्रवर उदकेन तीर्थेन मूर्ध्नि अधिकृतेन शिवः शिवः अभूत् ।
ध्यातुः मनः शमल शैल निसृष्ट वज्रम् ध्यायेत् चिरम् भगवतः चरण अरविन्दम् ॥

शब्दार्थ—

यत्, शौच	६.	जिन चरणों के धोवन से	ध्यातुः	१५.	ध्यान करने वालों के
निःसृत	८.	निकली हैं (जिनके)	मनः शमल	१६.	मन के, पाप रूप
सरित, प्रवर	७.	नदियों में श्रेष्ठ गंगा जी	शैल, निसृष्ट	१७.	पर्वत पर, छोड़े गये
उदकेन	१०.	जल को	वज्रम्	१८.	इन्द्र के वज्र के समान हैं
तीर्थेन	९.	पवित्र	ध्यायेत्	५.	ध्यान करना चाहिये
मूर्ध्नि	११.	मस्तक पर	चिरम्	४.	चिर काल तक
अधिकृतेन	१२.	धारण करने से	भगवतः	१.	भगवान् श्री हरि के
शिवः	१३.	मंगलमय महादेव जी	चरण	२.	उन चरण
शिवः, अभूत् ।	१४.	अधिक मंगलमय हो गये (वे चरण)	अरविन्दम् ॥	३.	कमलों का

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के उन चरण कमलों का चिरकाल तक ध्यान करना चाहिये । जिन चरणों के धोवन से नदियों में श्रेष्ठ गंगा जी निकली हैं। जिनके पवित्र जल मस्तक पर धारण करने से मंगलमय महादेव जो अधिक मंगलमय हो गये । वे चरण ध्यान करने वालों के मन के पापरूप पर्वत पर छोड़े गये इन्द्र के वज्र के समान हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

जानुद्वयं जलजलोचनया जनन्या लक्ष्म्याखिलस्य सुरवन्दितया विधातुः ।
ऊर्वोर्निधाय करपल्लवरोचिषा यत् संलालितं हृदि विभोरभवस्य कुर्यात् ॥२३॥

पदच्छेद—

जानु द्वयम् जलज लोचनया जनन्या लक्ष्म्या अखिलस्य सुरवन्दितया विधातुः ।
ऊर्वोः निधाय करपल्लव रोचिषा यत् संलालितम् हृदि विभोः अभवस्य कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

जानु	४.	घुटनों और पिंडलियों का	ऊर्वोः निधाय	१५.	अपनी जाँघों पर रखकर
द्वयम्	३.	दोनों	करपल्लव	१६.	हाथ रूपी पत्तों की
जलज	१२.	कमल	रोचिषा	१७.	कान्ति से
लोचनया	१३.	नयना	यत्	७.	जिनको
जनन्या	१०.	माता	संलालितम्	१८.	प्रेम-पूर्वक दबाती हैं
लक्ष्म्या	१४.	लक्ष्मी जी	हृदि	५.	हृदय में
अखिलस्य	८.	सम्पूर्ण विश्व के	विभोः	२.	भगवान् श्री हरि के
सुरवन्दितया	११.	देवताओं से पूजित	अभवस्य	१.	अजन्मा
विधातुः ।	९.	रचयिता ब्रह्मा जी की	कुर्यात् ॥	६.	ध्यान करना चाहिये

श्लोकार्थ——अजन्मा भगवान् श्री हरि के दोनों घुटनों और पिंडलियों का हृदय में ध्यान करना चाहिये। जिनको सम्पूर्ण विश्व के रचयिता ब्रह्मा जी की माता कमलनयना लक्ष्मी जी अपनी जाघों पर रखकर हाथ रूपी पत्तों की कान्ति से प्रेम पूर्वक दबाती हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

ऊरू सुपर्णभुजयोरधिशोभमानावोजोनिधी अतसिकाकुसुमावभासौ ।
व्यालम्बिपीतवरवाससि वर्तमानकाञ्चीकलापपरिरम्भि नितम्बबिम्बम् ॥२४॥

पदच्छेद—

उरू सुपर्ण भुजयोः अधिशोभमानौ ओजः निधी अतसिका कुसुम अवभासौ ।
व्यालम्बि पीतवर वाससि वर्तमान काञ्ची कलाप परिरम्भि नितम्ब बिम्बम् ॥

शब्दार्थ—

उरू	९.	भगवान् की जाँघों का (ध्यान करे ततः)	**व्यालम्बि**	१२.	एड़ी तक लटकते हुये
सुपर्ण	६.	गरुड़ के	**पीतवर**	१३.	पीले, उत्तम
भुजयोः	७.	दोनों पंखों पर	**वाससि**	१४.	पीताम्बर के ऊपर
अधिशोभमानौ	८.	अधिक सुशोभित	**वर्तमान**	१५.	पहनी हुई
ओजः, निधि	४,५.	बल की खान (तथा)	**काञ्ची, कलाप**	१६,१७	करधनी की लड़ियों का
अतसिका	१.	अलसी के	**परिरम्भि**	१८.	आलिङ्गन कर रहा है
कुसुम	२.	पुष्पों के समान	**नितम्ब**	१०.	कटि
अवभासौ ।	३.	नीली	**बिम्बम् ॥**	११.	भाग का (चिन्तन करें जो)

श्लोकार्थ——अलसी के पुष्पों के समान नीली बल की खान तथा गरुड़ के दोनों पंखों पर अधिक सुशोभित भगवान की जाँघों का ध्यान करे। ततः कटि भाग का चिन्तन करे, जो एड़ी तक लटकते हुये पीले उत्तम पीताम्बर के ऊपर पहनी हुई करधनी की लड़ियों का आलिगन कर रहा है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

नाभिह्रदं भुवनकोशगुहोदरस्थं यत्रात्मयोनिधिषणाखिललोकपद्मम् ।
व्यूढं हरिन्मणिवृषस्तनयोरमुष्य ध्यायेद् द्वयं विशदहारमयूखगौरम् ॥२५॥

पदच्छेद—

नाभि ह्रदम् भुवन कोशगुहा उदरस्थम् यत्र आत्मयोनि धिषण अखिललोक पद्मम् ।
व्यूढम् हरिन्मणि वृषः स्तनयोः अमुष्य ध्यायेत् द्वयम् विशद, हार मयूखगौरम् ॥

शब्दार्थ—

नाभि, ह्रदम्	४.	नाभि सरोवर का (ध्यान करे)	व्यूढम्	१६.	धारण किये गये
भुवन	१.	समस्त ब्रह्माण्ड का	हरिन्मणि	१२.	मरकत मणि के समान नीले
कोशगुहा	२.	आश्रय स्थान	वृषः	११.	श्रेष्ठ
उदरस्थम्	३.	उदर में स्थित (भगवान् के)	स्तनयोः	१३.	दोनों स्तनों का
यत्र	५.	जिसमें	अमुष्य	१०.	उन भगवान् के
आत्मयोनि	६.	ब्रह्माजी का	ध्यायेत्	१४.	ध्यान करे
धिषण	७.	आश्रय स्थान	द्वयम्	१५.	जो (वक्षः स्थल पर)
अखिललोक	८.	सम्पूर्ण, लोकमय	विशद, हार	१७.	उज्ज्वल हार की
पद्मम् ।	९	कमल (प्रकट हुआ है तदनन्तर)	मयूख गौरम् ॥	१८.	किरणों के, गौरवर्ण के प्रतीत होते हैं

श्लोकार्थ—समस्त ब्रह्माण्ड का आश्रय स्थान सम्पूर्ण, लोकमय कमल प्रकट हुआ है । तदनन्तर उन भगवान् के श्रेष्ठ मर... मणि के समान नीले दोनों स्तनों का ध्यान करे, जो वक्षः स्थल पर धारण किये गये उज्वल हार की किरणों से गौरवर्ण के प्रतीत होते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

वक्षोऽधिवासमृषभस्य महाविभूतेः पुंसां मनोनयननिर्वृतिमादधानम् ।
कण्ठं च कौस्तुभमणेरधिभूषणार्थं कुर्यान्मनस्यखिललोकनमस्कृतस्य ॥२६॥

पदच्छेद—

वक्षः अधिवासम् ऋषभस्य महाविभूतेः ..ाम् मनः नयन निर्वृतिम् आदधानम् ।
कण्ठम् च कौस्तुभमणेः अधिभूषण .म् कुर्यात् मनसि अखिललोक नमस्कृतस्य ॥

शब्दार्थं—

वक्षः	२.	वक्षः स्थल	कण्ठम्	११.	गले का
अधिवासम्	४.	निवास स्थान है	च	१४.	जो
ऋषभस्य	१.	पुरुषोत्तम भगवान् का	कौस्तुभमणेः	१५.	कौस्तुभमणि की
महाविभूतेः	३.	लक्ष्मी जी का	अधिभूषणार्थम्	१६.	शोभा बढ़ाता है
पुंसाम्	५.	तथा मनुष्यों के	कुर्यात्	१३.	ध्यान करे
मनः नयन	६.	मन और नेत्रों को	मनसि	१२.	हृदय में
निर्वृतिम्	७.	आनन्द	अखिललोक	९.	सम्पूर्ण विश्व के
आदधानम् ।	८	देता है (तदनन्तर)	नमस्कृतस्य ॥	१०.	वन्दनीय भगवान् के

श्लोकार्थं—पुरुषोत्तम भगवान् का वक्षः स्थल लक्ष्मी जी का निवास स्थान है, तथा मनुष्यों के मन और नेत्रों को आनन्द देता है । तदनन्तर सम्पूर्ण विश्व के वन्दनीय भगवान् के गले का हृदय में ध्यान करे । जो कौस्तुभ मणि की शोभा बढ़ाता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

बाहूंश्च मन्दरगिरेः परिवर्तनेन निर्णिक्तबाहुवलयानधिलोकपालान् ।
सञ्चिन्तयेद्दशशतारमसह्यतेजः शङ्खं च तत्करसरोरुहराजहंसम् ॥२७॥

पदच्छेद—

बाहून् च मन्दरगिरेः परिवर्तनेन निर्णिक्त बाहु वलयान् अधिलोक पालान् ।
सञ्चिन्तयेत् दशशत अरम् असह्य तेजः शङ्खम् च तत् कर सरोरूह राजहंसम् ॥

शब्दार्थ—

बाहून्	३.	भगवान् की भुजाओं का (चिन्तन करे)	सञ्चिन्तयेत्	१७.	चिन्तन करे
च	४.	जिन	दशशत	११.	एक हजार
मन्दरगिरेः	६	मदाराचल की	अरम्	१२.	धार वाले (सुदर्शन चक्र का)
परिवर्तनेन	७.	रगड़ से	असह्य	१०.	सहन नहीं, किया जा सकता है (उसे)
निर्णिक्त	८.	और अधिक उज्ज्वल हो गये हैं	तेजः	६.	तदनन्तर जिसका तेज
बाहु, वलयान्	५.	भुजाओं में पहने हुए, कंकण	शङ्खम्	१६.	श्वेत शंख का
अधिलोक	१.	लोक पालों के	च, तत्	१३.	और, उनके
पालान् ।	२	आश्रय भूत	कर सरोरूह	१४.	कर कमल में स्थित
			राज हंसम् ॥	१५	राजहंस के समान

श्लोकार्थ—लोकपालों के आश्रय भूत भगवान् की भुजाओं का चिन्तन करे; जिन भुजाओं में पहने हुये कंकण मदराचल की रगड़ से और अधिक उज्ज्वल हो गये हैं। तदनन्तर जिसका तेज़ सहन नहीं किया जा सकता है। एक हज़ार धार वाले सुदर्शन चक्र का और उनके कर कमल में स्थित राजहंस के समान श्वेत शंख का चिन्तन करे ॥

अष्टविंशः श्लोकः

कौमोदकीं भगवतो दयितां स्मरेत दिग्धामरातिभटशोणितकर्दमेन ।
मालां मधुव्रतवरूथगिरोपघुष्टां चैत्यस्य तत्त्वममलं मणिमस्य कण्ठे ॥२८॥

पदच्छेद—

कौमोदकीम् भगवतः दयिताम् स्मरेत दिग्धाम् आराति भट शोणित कर्दमेन ।
मालाम् मधुव्रत वरूथ गिरा उपघुष्टाम् चैत्यस्य तत्त्वम् अमलम् मणिम् अस्य कण्ठे ॥

शब्दार्थ—

कौमोदकीम्	८.	कौमोदकी गदा का	मालाम्	१२.	वन माला का (तथा)
भगवतः	६.	भगवान् की	मधुव्रत	९.	(और) भौंरों के
दयिताम्	७.	प्रिय	वरूथ गिरा	१०.	झुण्ड की, गुञ्जार से
स्मरेत	१८.	स्मरण करना चाहिये	उपघुष्टाम्	११.	गुञ्जायमान
दिग्धाम्	५.	सनी हुई	चैत्यस्य	१४.	जीव के
आराति	१	विपक्षी	तत्त्वम्	१६.	तत्त्व स्वरूप
भट	२.	वीरों के	अमलम्	१५.	निर्मल
शोणित	३.	रुधिरसे (और)	मणिम्	१७.	कस्तुभ मणि का
कर्दमेन ।	४.	चर्बी से	अस्य कण्ठे ॥	१३.	भगवान् के गले में

श्लोकार्थ—विपक्षी वीरों के रुधिर से और चर्बी से सनी हुई भगवान् की प्रिय कौमोदकी गदा का और भौंरों के झुण्ड की गुञ्जार से गुञ्जायमान वनमाला का तथा भगवान् के गले में, जीव के निर्मल तत्त्व स्वरूप कौस्तुभ मणि का स्मरण करना चाहिये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

भृत्यानुकम्पितधियेह गृहीतमूर्तेः सञ्चिन्तयेद्भगवतो वदनारविन्दम् ।
यद्विस्फुरन्मकरकुण्डलवल्गितेन विद्योतितामलकपोलमुदारनासम् ॥ २९॥

पदच्छेद—

भृत्य अनुकम्पित धिया इह गृहीत मूर्तेः सञ्चिन्त्येत् भगवतः वदन अरविन्दम् ।
यद् विस्फुरत् मकर कुण्डल वल्गितेन विद्योतित अमल कपोलम् उदार नासम् ॥

शब्दार्थ—

भृत्य	१.	भक्तों पर	यद्, विस्फुरत्	१०.	जिसमें चमकते हुये
अनुकम्पित	२.	दया करने की	मकर, कुण्डल	११.	मकराकृत कुण्डलों के
धिया, इह	३,४.	बुद्धि से ही इस संसार में	वल्गितेन	१२.	हिलने से
गृहीत	६.	धारण करने वाले	विद्योतित	१३.	प्रकाशमान
मूर्तेः	५.	सगुण साकार (रूप में)	अमल	१४.	निर्मल
सञ्चिन्त्येत्	९.	ध्यान करना चाहिये	कपोलम्	१५.	कपोल (और)
भगवतः	७.	भगवान् श्री हरि को	उदार	१६.	सुघड़
वदन, अरविन्दम् ।	८.	मुख-कमल का	नासम् ॥	१७.	नासिका (शोभित हो रही है)

श्लोकार्थ——भक्तों पर दया करने की बुद्धि से ही इस संसार में सगुण-साकार रूप में धारण करने वाले भगवान् श्री हरि के मुख-कमल का ध्यान करना चाहिये । जिसमें चमकते हुये मकराकृत कुण्डलों के हिलने से प्रकाशमान निर्मल कपोल और सुघड़ नासिका शोभित हो रही है ।

त्रिंशः श्लोकः

यच्छ्रीनिकेतमलिभिः परिसेव्यमानं भूत्या स्वया कुटिलकुन्तलवृन्दजुष्टम् ।
मीनद्वयाश्रयमधिक्षिपदब्जनेत्रं ध्यायेन्मनोमयमतन्द्रित उल्लसद्भ्रु ॥३०॥

पदच्छेद—

यत् श्रीनिकेतम् अलिभिः परिसेव्यमानम् भूत्या स्वया कुटिल कुन्तलवृन्द जुष्टम् ।
मीनद्वय आश्रयम् अधिक्षिपत् अब्ज नेत्रम् ध्यायेत् मनोमयम् अतन्द्रितः उल्लसद् भ्रूः ॥

शब्दार्थ—

यत्	४.	जो मुख-कमल	मीनद्वय	११.	दो मछलियों की
श्रीनिकेतम्	७.	कमल के समान	आश्रयम्	१२.	शोभा को
अलिभिः	५.	भौंरों से	अधिक्षिपत्	१३.	तिरस्कृत कर रहे हैं
परिसेव्यमानम्	६.	सेवित	अब्ज, नेत्रम्	१०.	कमल के समान विशाल, दोनों नेत्र
भूत्या	९.	छवि से (शोभित है)	ध्यायेत्	१८.	ध्यान करना चाहिये
स्वया	८.	अपनी	मनोमयम्	१७.	हृदय में
कुटिल	१.	घुंघराली	अतन्द्रितः	१६.	आलस्य रहित होकर
कुन्तल वृन्द	२.	अलकावली से	उल्लसद्	१५.	उभरी हुई हैं ऐसे मुख का भगवान् के
जुष्टम् ।	३.	सुशोभित	भ्रूः ॥	१४.	भौंहें

श्लोकार्थ——घुंघराली अलकावली से सुशोभित जो मुख कमल भौंरों से सेवित कमल के समान अपनी छवि से शोभित है । कमल के समान विशाल दोनों नेत्र दो मछलियों की शोभा को तिरस्कृत कर रहे हैं भौंहें उभरी हुई हैं ऐसे मुख का भगवान् के आलस्य रहित होकर हृदय में ध्यान करना चाहिये ।

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्यावलोकमधिकं कृपयातिघोरतापत्रयोपशमनाय निसृष्टमक्ष्णोः ।
स्निग्धस्मितानुगुणितं विपुलप्रसादं ध्यायेच्चिरं विततभावनया गुहायाम् ॥३१॥

पदच्छेद—

तस्य अवलोकम् अधिकम् कृपया अतिघोर तापत्रय उपशमनाय निसृष्टम् अक्ष्णोः ।
स्निग्ध स्मित अनुगुणितम् विपुल प्रसादम् ध्यायेत् चिरम् वितत भावनया गुहायाम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	४.	भगवान् श्री हरि की	स्निग्ध	१३.	प्रेम (और)
अवलोकम्	६.	चितवन का	स्मित	१४.	मुसकान से
अधिकम्	१५.	अधिकाधिक	अनुगुणितम्	१६.	बढ़ती रहती है (तथा)
कृपया	११.	कृपा-पूर्वक	विपुल	१७.	अत्यन्त
अतिघोर	८.	जो बहुत भयानक	प्रसादम्	१८.	प्रसन्नता की वर्षा करती हैं
तापत्रय	९.	तीनों तापों को	ध्यायेत्	७.	ध्यान करना चाहिये (जो)
उपशमनाय	१०.	शान्त करने के लिये	चिरम्	२.	चिरकाल तक
निसृष्टम्	१२.	प्रकट हुई है	वितत भावनया	३.	अनन्य भक्ति से
अक्ष्णोः ।	५.	आँखों की	गुहायाम् ॥	१.	हृदय की गुहा में

श्लोकार्थ—हृदय की गुहा में चिरकाल तक अनन्य भक्ति से भगवान् श्री हरि की आँखों की चितवन का ध्यान करना चाहिये। जो बहुत भयानक तीनों तापों को शान्त करने के लिये कृपा-पूर्वक प्रकट हुई हैं। प्रेम और मुसकान से अधिकाधिक बढ़ती रहती है तथा अत्यन्त प्रसन्नता की वर्षा करती है।

द्वात्रिंशः श्लोकः

हासं हरेरवनताखिललोकतीव्रशोकाश्रुसागरविशोषणमत्युदारम् ।
सम्मोहनाय रचितं निजमाययास्य भ्रूमण्डलं मुनिकृते मकरध्वजस्य ॥३२॥

पदच्छेद—

हासम् हरेः अवनत अखिललोक तीव्र शोक अश्रु सागर विशोषणम् अति उदारम् ।
सम्मोहनाय रचितम् निजमायया अस्य भ्रूः मण्डलम् मुनिकृते मकरध्वजस्य ॥

शब्दार्थ—

हासम्	२.	हास्य का ध्यान करे	सम्मोहनाय	१४.	मोहित करने के लिये
हरेः	१.	भगवान् श्री हरि के	रचितम्	१७.	निर्मित है
अवनत	४.	प्रणत	निजमायया	१६.	अपनी माया से
अखिल,लोक	३,५.	जो समस्त, जनों के	अस्य	१५.	भगवान् के द्वारा
तीव्र, शोक	६.	भयंकर, शोक से उत्पन्न	भ्रूः	१०.	भौंहों का
अश्रु, सागर	७.	आँसुओं के, सागर को	मण्डलम्	११.	ध्यान करे (जो)
विशोषणम् ।	८.	सुखा देता है (और)	मुनिकृते	१२.	मुनियों के हित के लिये (और)
अतिउदारम् ।	९.	बहुत ही, दयालु है (तदनन्तर)	मकरध्वजस्य ॥	१३.	कामदेव को

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि के हास्य का ध्यान करे; जो समस्त प्रणत जनों के भयंकर शोक से उत्पन्न आँसुओं के सागर को सुखा देता है और बहुत ही दयालु है। तदनन्तर भौंहों का ध्यान करे; जो मुनियों के हित के लिये और कामदेव को मोहित करने के लिये भगवान् के द्वारा अपनी माया से निर्मित है॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ध्यानायनं प्रहसितं बहुलाधरोष्ठभासारुणायिततनुद्विजकुन्दपङ्क्ति ।
ध्यायेत्स्वदेहकुहरेऽवसितस्य विष्णोर्भक्त्याऽऽर्द्रयार्पितमना न पृथग्दिदृक्षेत् ।।३३

पदच्छेद—

ध्यान अयनम् प्रहसितम् बहुल अधरोष्ठ भासा अरुणायित तनुद्विज कुन्द पंक्ति ।
ध्यायेत् स्वदेह कुहरे अवसितस्य विष्णोः भक्त्या आर्द्रया अर्पितमनाः न पृथक् दिदृक्षेत् ।।

शब्दार्थ—

ध्यान, अयनम्	७. ध्यान के, योग्य हैं (जिसमें)	ध्यायेत्	६. ध्यान करना चाहिये (जो)
प्रहसितम्	५. अट्टहास का	स्वदेह, कुहरे	३. अपने शरीर के अन्दर हृदय में
बहुल	६. गाढ़ी	अवसितस्य, विष्णोः	४. विराजमान, भगवान् श्री हरि के
अधरोष्ठ	८. ऊपर-नीचे के होठों की	भक्त्या	२. भक्ति-भाव से
भासा	१०. लालिमा से	आर्द्रया	१. प्रेम-पूर्ण
अरुणायित	१४. लाल लगती है (उसमें)	अर्पितमनाः	१५. तन्मय होकर उसके
तनुद्विज	१२. छोटे-छोटे दाँतों की	न	१७. नहीं
कुन्द,	११. कुन्द पुष्प के समान,	पृथक्	१६. अतिरिक्त किसी को
पंक्ति ।	१३. पङ्क्तियां	दिदृक्षेत् ।।	१८. देखने की इच्छा करे

श्लोकार्थ—प्रेम-पूर्ण भक्ति-भाव से अपने शरीर के अन्दर हृदय में विराजमान भगवान् श्री हरि के अट्टहास का ध्यान करना चाहिये। जिसमें ऊपर-नीचे के होठों की गाढ़ी लालिमा से कुन्द पुष्प के समान छोटे-छोटे दाँतों की पङ्क्तियाँ लाल लगती हैं। उसमें तन्मय होकर उसके अतिरिक्त किसी को देखने की इच्छा नहीं करे ।।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एवं हरौ भगवति प्रतिलब्धभावो भक्त्या द्रवद्धृदय उत्पुलकः प्रमोदात् ।
औत्कण्ठ्यबाष्पकलया मुहुरर्द्यमानस्तच्चापि चित्तबडिशं शनकैर्वियुङ्क्ते ।।३४।।

पदच्छेद—

एवम् हरौ भगवति प्रतिलब्ध भावः भक्त्या द्रवत् हृदय उत्पुलकः प्रमोदात् ।
औत्कण्ठ्य बाष्प कलया मुहुः अर्द्यमानः तद् च अपि चित्त बडिशम् शनकैः वियुङ्क्ते ।।

शब्दार्थ—

एवम्	३. इस प्रकार के ध्यान से (पुरुष)	औत्कण्ठ्य, बाष्प	११. उत्कण्ठा से उत्पन्न, आँसुओं की
हरौ	२. श्री हरि में	कलया, मुहुः	१२. धारा से वह बार-बार
भगवति	१. भगवान्	अर्द्यमानः	१३. शरीर को भिगोने लगता है
प्रतिलब्ध	५. प्राप्त कर लेता है	तद्	१६. उस
भावः	४. भक्ति-भाव को	च	१४. तदनन्तर
भक्त्या	६. भक्ति से (उसका)	अपि	१८. भी
द्रवत्	८. द्रवित हो जाता है (और)	चित्त	१७. साधन भूत मन को
हृदय	७. हृदय	बडिशम्	१५. मछली पकड़ने के काँटे के समान
उत्पुलकः	१२. रोमाञ्च हो जाता है	शनकैः	१६. धीरे-धीरे
प्रमोदात् ।	६. आनन्द के कारण शरीर में	वियुङ्क्ते ।।	२०. परमात्मा से अलग कर लेता है

श्लोकार्थ—भगवान् श्री हरि में इस प्रकार के ध्यान से पुरुष भक्ति-भाव को प्राप्त कर लेता है। भक्ति से उसका हृदय द्रवित हो जाता है और आनन्द के कारण शरीर में रोमाञ्च हो जाता है। उत्कण्ठा से उत्पन्न आँसुओं की धारा से वह बार-बार शरीर को भिगोने लगता है। तदनन्तर मछली पकड़ने के काँटे के समान उस साधन-भूत मन को भी धीरे-धीरे परमात्मा से अलग कर लेता है ।।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

मुक्ताश्रयं यर्हि निर्विषयं विरक्तं निर्वाणमृच्छति मनः सहसा यथार्चिः ।
आत्मानमत्र पुरुषोऽव्यवधानमेकमन्वीक्षते प्रतिनिवृत्तगुणप्रवाहः ॥३५॥

पदच्छेद—

मुक्त आश्रयम् यर्हि निर्विषयम् विरक्तम् निर्वाणम् ऋच्छति मनः सहसा यथा अर्चिः ।
आत्मानम् अत्र पुरुष अव्यवधानम् एकम् अन्वीक्षते प्रतिनिवृत्त गुणप्रवाहः ॥

शब्दार्थ—

मुक्त	४.	विना	**यथा**	९.	समान
आश्रयम्	३.	आश्रय के	**अर्चिः ।**	८.	दीपक की लौ के
यर्हि	१.	जब	**आत्मानम्**	१८.	आत्मा को
निर्विषयम्	५.	विषयों से रहित (और)	**अत्र**	१५.	यहाँ सब जगह
विरक्तम्	६.	आसक्ति से दूर हो जाता है	**पुरुष**	१२.	तदनन्तर पुरुष
निर्वाणम्	१०.	ब्रह्म स्वरूप को	**अव्यवधानम्**	१७.	अखण्ड
ऋच्छति	११.	प्राप्त कर लेता है	**एकम्**	१६.	एक
मनः	२.	चित्त	**अन्वीक्षते**	१९.	व्याप्त देखता है
सहसा	७.	(तब-तक) अकस्मात्	**प्रतिनिवृत्त**	१४.	समाप्त हो जाने से
			गुणप्रवाहः ॥	१३.	देहादि उपाधियों के

श्लोकार्थ—जब चित्त आश्रय के विना विषयों से रहित और आसक्ति से दूर हो जाता है। तब-वह अकस्मात् दीपक की लौ के समान ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त कर लेता है। तदनन्तर पुरुष देहादि उपाधियों के समाप्त हो जाने से यहाँ सब जगह एक अखण्ड परमात्मा को व्याप्त देखता है।

षट्त्रिंशः श्लोकः

सोऽप्येतया चरमया मनसो निवृत्त्या तस्मिन्महिम्न्यवसितः सुखदुःखबाह्ये ।
हेतुत्वमप्यसति कर्तरि दुःखयोर्यत् स्वात्मन् विधत्त उपलब्धपरात्मकाष्ठः ॥३६॥

पदच्छेद—

सः अपि एतया चरमया मनसः निवृत्त्या तस्मिन्, महिम्नि अवसितः सुख दुःख-बाह्ये ।
हेतुत्वम् अपि, असति कर्तरि दुःखयोः यत्, स्वात्मन् विधत्ते उपलब्ध परात्मकाष्ठः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह योगि-पुरुष	**बाह्ये ।**	८.	रहित
अपि	२.	भी	**हेतुत्वम्**	१६.	कारण मानता था
एतया	४.	इस	**अपि, असति**	१७.	कारण अब अहंकार को
चरमया	५.	अन्तिम	**कर्तरि**	१५.	कर्तापन का
मनसः	३.	चित्त की	**दुःखयोः**	१४.	सुख, दुःख के
निवृत्त्या	६.	निवृत्ति हो जाने से	**यत् स्वात्मन्**	१३.	जो, अपनी आत्मा को
तस्मिन्, महिम्नि	९.	उस, आत्मा की महिमा में	**विधत्ते**	१८.	समझने लगता है
अवसितः	१०.	स्थित हो जाता है	**उपलब्ध**	१२.	साक्षात्कार कर लेने पर (वह)
सुख-दुःख	७.	सुख और दुःख से	**परात्म काष्ठः ॥**	११.	परमात्मा के स्वरूप का

श्लोकार्थ—वह योगि-पुरुष भी चित्त की इस अन्तिम निवृत्ति हो जाने से सुख और दुःख से रहित उस आत्मा की महिमा में स्थित हो जाता है। परमात्मा के स्वरूप का साक्षात्कार कर लेने पर वह जो अपनी आत्मा को सुख-दुःख के कर्तापन का कारण मानता था। अब अहंकार को समझने लगता है॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

देहं च तं न चरमः स्थितमुत्थितं वा ।
सिद्धो विपश्यति यतोऽध्यगमत्स्वरूपम् ॥
दैवादुपेतमथ दैववशादपेतं ।
वासो यथा परिकृतं मदिरामदान्धः ॥३७॥

पदच्छेद—

देहम् च तम् न चरमः स्थितम् उत्थितम् वा सिद्ध विपश्यति यतः अध्यगमत् स्वरूपम् ।
दैवात् उपेतम् अथ दैववशात् अपेतम् वासः यथा परिकृतम् मदिरा मद अन्धः ॥

शब्दार्थं—

देहम्	१०.	शरीर के	दैवात्	१४.	भाग्य से
च	२२.	वह	उपेतम्	१५.	कहीं जाने
तम्	९.	उस	अथ	१६.	अथवा
न	१९.	नहीं	दैववशात्	१७.	भाग्य वश
चरमः	७.	अन्तिम अवस्था को प्राप्त	अपेतम्	१८.	कहीं से आने का
स्थितम्	१३.	बैठने का (और)	वासः	६.	वस्त्र का ध्यान नहीं रहता है । (उसी प्रकार)
उत्थितम्	११.	खड़े होने का	यथा	१.	जैसे
वा	१२.	अथवा	परिकृतम्	५.	पहने हुये
सिद्ध	८.	योगि-पुरुष (को अपने)	मदिरा	२.	मदिरा के
विपश्यति	२०.	ज्ञान रहता है	मद	३.	नशे से
यतः	२१.	क्योंकि	अन्धः ॥	४.	मतवाले पुरुष को
अध्यगमत्	२४.	स्थित रहता है	स्वरूपम् ।	२३.	परमानन्द स्वरूप में

श्लोकार्थ—जैसे मदिरा के नशे से मतवाले पुरुष को पहने हुये वस्त्र का ध्यान नहीं रहता है । उसी तरह अन्तिम अवस्था को प्राप्त योगिपुरुष को अपने उस शरीर के खड़े होने का अथवा बैठने का और भाग्य से कहीं जाने अथवा भाग्यवश कहीं से आने का ज्ञान नहीं रहता है । क्योंकि वह परमानन्द स्वरूप में स्थिर रहता है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

देहोऽपि दैववशगः खलु कर्म यावत् ।
स्वारम्भकं प्रतिसमीक्षत एव सासुः ॥
तं सप्रपञ्चमधिरूढसमाधियोगः ।
स्वाप्नं पुनर्न भजते प्रतिबुद्धवस्तुः ॥३८॥

पदच्छेद—

देहः अपि दैव वशगः खलु कर्म यावत् स्वारम्भकम् प्रतिसमीक्षते एव सः असुः ।
तम् सप्रपञ्चम् अधिरूढ समाधि योगः स्वाप्नम् पुनः न भजते प्रतिबुद्ध वस्तुः ॥

शब्दार्थ—

देहः	३.	यह शरीर	तम्	१८.	उस शरीर को
अपि	४.	भी	सप्रपञ्चम्	१७.	प्रपञ्च वाले
दैव	१.	कर्म के	अधिरूढ	१३.	स्थित होकर
वशगः	२.	अधीन रहने वाला	समाधि योगः	१२.	समाधि में
खलु	८.	रहता है	स्वाप्नम्	१६.	स्वप्न के समान
कर्म	७.	कर्म	पुनः	१९.	फिर से
यावत्	५.	जब-तक	न	२०.	नहीं
स्वारम्भकम्	६.	प्रारब्ध	भजते	२१.	धारण करता है
प्रतिसमीक्षते	११.	प्रतीक्षा करता है (तदनन्तर)	प्रतिबुद्ध	१५.	साक्षात्कार कर लेने पर वह (योगी)
एव	९.	तभी तक	वस्तुः ॥	१४.	परमात्मा का
सः असुः ॥	१०.	इन्द्रियों के साथ (जीव की)			

श्लोकार्थ— कर्म के अधीन रहने वाला यह शरीर भी जब-तक प्रारब्ध कर्म रहता है, तभी तक इन्द्रियों के साथ जीव की प्रतीक्षा करता है। तदनन्तर समाधि में स्थित होकर परमात्मा का साक्षात्कार कर लेने पर वह योगी स्वप्न के समान प्रपञ्च वाले उस शरीर को फिर से नहीं धारण करता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

यथा पुत्राच्च वित्ताच्च पृथङ्मर्त्यः प्रतीयते ।
अप्यात्मत्वेनाभिमताद्देहादेः पुरुषस्तथा ॥३९॥

पदच्छेद—

यथा पुत्राच्च वित्तात् च पृथक् मर्त्यः प्रतीयते ।
अपि आत्मत्वेन अभिमतान् देह आदेः पुरुषः तथा ॥

शब्दार्थं—

यथा	१.	जैसे (विचार करने पर)	अपि	१३.	अलग है
पुत्रात् च	३.	पुत्र से और	आत्मत्वेन	९.	आत्मरूप से
वित्तात् च	४.	धन से	अभिमतात्	१०.	मान्य
पृथक्	५	अलग	देह	११.	शरीर
मर्त्यः	२.	जीव	आदेः	१२.	इन्द्रिय इत्यादि से
प्रतीयते ।	६.	प्रतीत होता है	पुरुषः	८.	पुरुष
			तथा ॥	७.	उसी प्रकार

श्लोकार्थ—जैसे विचार करने पर जीव पुत्र से और धन से अलग प्रतीत होता है । उसी प्रकार पुरुष आत्म-स्वरूप से मान्य शरीर इन्द्रिय इत्यादि से अलग है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

यथोल्मुकाद्विस्फुलिङ्गाद्धूमाद्वापि स्वसम्भवात् ।
अप्यात्मत्वेनाभिमताद्यथाग्निः पृथगुल्मुकात् ॥४०॥

पदच्छेद—

यथा उल्मुकात् विस्फुलिङ्गात्, धूमात् वा अपि स्व सम्भवात् ।
अपि आत्मत्वेन अभिमतात्, यथा अग्निः पृथक् उल्मुकात् ॥

शब्दार्थं—

यथा	१.	जैसे	अपि	८.	तथा
उल्मुकात्	२.	जलती लकड़ी से	आत्मत्वेन	१०.	आत्मरूप में
विस्फुलिङ्गात्	३.	चिनगारी	अभिमतात्	११.	मान्य
धूमात्	७.	धुयें से	यथा	९.	जैसे
वा अपि	४.	अथवा	अग्निः	१३.	आग
स्व	५.	अपने से	पृथक्	१४.	अलग है
सम्भवात् ।	६.	उत्पन्न	उल्मुकात् ॥	१२.	जलती लकड़ी से

श्लोकार्थ—जैसे जलती लकड़ी से चिनगारी अथवा अपने से उत्पन्न धुयें से तथा जैसे आत्मारूप में मान्य आग अलग है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

भूतेन्द्रियान्तःकरणात्प्रधानाज्जीवसंज्ञितात् ।
आत्मा तथा पृथग्द्रष्टा भगवान् ब्रह्मसंज्ञितः ॥४१॥

पदच्छेद—

भूत इन्द्रिय अन्तः करणात् प्रधानात् जीवसंज्ञितात् ।
आत्मा तथा पृथक् द्रष्टा भगवान् ब्रह्म संज्ञितः ॥

शब्दार्थ—

भूत	२.	शरीरादि पञ्चमहाभूत	आत्मा	५.	आत्मा
इन्द्रिय	३.	चक्षुः आदि इन्द्रिय (और)	तथा	१.	उसी प्रकार
अन्तःकरणात्	४.	अन्तः करण से	पृथक्	१३.	अलग है
प्रधानात्	६.	प्रकृति से	द्रष्टा	७.	साक्षी पुरुष (तथा)
जीव	८.	जीव	भगवान्	१२.	भगवान् श्री हरि
संज्ञितात् ।	९.	नामक आत्मा से	ब्रह्म	१०.	ब्रह्म
			संज्ञितः ॥	११.	नाम वाले

श्लोकार्थ—उसी प्रकार शरीरादि-पञ्चमहाभूत चक्षुः आदि इन्द्रिय और अन्तः करण से आत्मा प्रकृति से साक्षी पुरुष तथा जीव नामक आत्मा से ब्रह्मनाम वाले भगवान् श्री हरि अलग हैं ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षेतानन्यभावेन भूतेष्विव तदात्मताम् ॥४२॥

पदच्छेद—

सर्वभूतेषु च आत्मानं सर्वभूतानि च आत्मनि ।
ईक्षेत अनन्य भावेन भूतेषु इव तद् आत्मताम् ॥

शब्दार्थ—

सर्व	५.	सभी	आत्मनि ।	११.	आत्मामें
भूतेषु	६.	प्राणियों में	ईक्षेत	१४.	देखना चाहिये
च	८.	और	अनन्य	१२.	समान
आत्मानम्	७.	आत्मा को	भावेन	१३.	रूप से
सर्व	९.	सभी	भूतेषु	२.	सभी शरीरों में
भूतानि	१०.	प्राणियों को	इव	१.	जैसे
च	४.	उसी प्रकार	तदात्मताम् ॥	३.	समानता है

श्लोकार्थ— जैसे-सभी शरीरों में समानता है । उसी प्रकार सभी प्राणियों में आत्मा को और सभी प्राणियों को आत्मा में समान रूप से देखना चाहिये ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

स्वयोनिषु यथा ज्योतिरेकं नाना प्रतीयते।
योनीनां गुणवैषम्यात्तथाऽऽत्मा प्रकृतौ स्थितः ॥४३॥

पदच्छेद—

स्वयोनिषु यथा ज्योतिः एकम् नाना प्रतीयते।
योनीनाम् गुणवैषम्यात् तथा आत्मा प्रकृतौ स्थितः ॥

शब्दार्थ—

स्व	४.	अपने	योनीनाम्	९.	कारणों के
योनिषु	५.	आश्रमों के भेद से	गुण	१०.	गुणों की
यथा	१.	जैसे	वैषम्यात्	११.	विषमता से
ज्योतिः	३.	अग्नि	तथा	८.	उसी प्रकार
एकम्	२.	एक ही	आत्मा	१२.	एक ही आत्मा
नाना	६.	अनेक रूपों में	प्रकृतौ	१३.	प्रकृति में (अनेक रूप से)
प्रतीयते।	७.	प्रतीत होती है	स्थितः।	१४.	भासित होता है

श्लोकार्थ——जैसे एक ही अग्नि अपने आश्रमों के भेदसे अनेक रूपों में प्रतीत होता है। उसी प्रकार कारणों के गुणों की विषमता से एक ही आत्मा प्रकृति में अनेक रूपों में भासित होता है ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मादिमां स्वां प्रकृतिं दैवीं सदसदात्मिकाम्।
दुर्विभाव्यां पराभाव्य स्वरूपेणावतिष्ठते ॥४४॥

पदच्छेद—

तस्मात् इमाम् स्वाम् प्रकृतिम् दैवीम् सद् असद् आत्मिकाम्।
दुर्विभाव्याम् पराभाव्य स्वरूपेण अवतिष्ठते ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये (योगी पुरुष-अपने)	असद्	४.	कार्य
इमाम्	८.	इस	आत्मिकाम्।	५.	स्वरूपा (और)
स्वाम्	७.	अपनी	दुर्विभाव्याम्	६.	अचिन्त्य शक्तिमयी
प्रकृतिम्	९.	माया को	पराभाव्य	१०.	जीत कर
दैवीम्	२.	स्वरूप को ढँक देने वाली	स्वरूपेण	११.	अपने ब्रह्म स्वरूप में
सद्	३.	कारण	अवतिष्ठते ॥	१२.	स्थित होता है ॥

श्लोकार्थ——इसीलिये योगी पुरुष अपने स्वरूप को ढँक देने वाली कारण-कार्य स्वरूपा और अचिन्त्य शक्तिमयी अपनी इस माया को जीत कर अपने ब्रह्म-स्वरूप में स्थित होता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये साधनानुष्ठानं अष्टाविंशः अध्यायः समाप्तः ॥२८॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

एकोनत्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—लक्षणं महदादीनां प्रकृतेः पुरुषस्य च ।
स्वरूपं लक्ष्यतेऽमीषां येन तत्पारमार्थिकम् ॥१॥

पदच्छेद—

लक्षणम् महद् आदीनाम् प्रकृतेः पुरुषस्य च ।
स्वरूपम् लक्ष्यते अमीषाम् येन तस्य पारमार्थिकम् ॥

शब्दार्थ—

लक्षणम्	७.	लक्षण (तथा)	स्वरूपम्	११.	स्वरूप
महद्	५.	महत्तत्त्व	लक्ष्यते	१२.	ज्ञात होता है (उसे आपने बताया)
आदीनाम्	६.	इत्यादि का	अमीषाम्	८.	उनका
प्रकृतेः	२.	प्रकृति	येन	१.	जिस सांख्य शास्त्र से
पुरुषस्य	३.	पुरुष	तस्य	६.	वह
च ।	४.	और	पारमार्थिकम् ॥	१०.	वास्तविक

श्लोकार्थ—जिस सांख्यशाख्य शास्त्र से प्रकृति पुरुष और महत्तत्त्व इत्यादि का लक्षण तथा उनका वह वास्तविक स्वरूप ज्ञात होता है । उसे आपने बताया ।

द्वितीयः श्लोकः

यथा सांख्येषु कथितं यन्मूलं तत्प्रचक्षते ।
भक्तियोगस्य मे मार्गं ब्रूहि विस्तरशः प्रभो ॥२॥

पदच्छेद—

यथा सांख्येषु कथितम् यत् मूलम् तत् प्रचक्षते ।
भक्ति योगस्य मे मार्गम् ब्रूहि विस्तरशः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यथा	३.	संसार का जैसा	भक्ति	११.	भक्ति
सांख्येषु	२.	सांख्यशास्त्र में	योगस्य	१२.	योग का
कथितम्	६.	कहा गया है	मे	९.	(अब) मुझे
यत्	४.	जो	मार्गम्	१३.	स्वरूप
मूलम्	५.	कारण	ब्रूहि	१४.	बतावें
तत्	७.	उसे (आपने)	विस्तरशः	१०.	विस्तार से
प्रचक्षते ।	८.	बता दिया	प्रभो ॥	१.	हे भगवन् ॥

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सांख्यशास्त्र में संसार का जैसा जो कारण कहा गया है । उसे आपने बता दिया । अब मुझे विस्तार से भक्ति-योग का स्वरूप बतायें ॥

तृतीयः श्लोकः

विरागो येन पुरुषो भगवन् सर्वतो भवेत् ।
आचक्ष्व जीवलोकस्य विविधा मम संसृतीः ॥३॥

पदच्छेद—

विरागः येन पुरुषः भगवन् सर्वतः भवेत् ।
आचक्ष्व जीव लोकस्य विविधा मम संसृतीः ॥

शब्दार्थ—

विरागः	४.	वैराग्य	आचक्ष्व	१२.	बतावें
येन	१.	जिस भक्ति योग से	जीव	८.	प्राणियों की
पुरुषः	२.	पुरुष को	लोकस्य	७.	सभी लोकों के
भगवन्	६.	हे प्रभो !	विविधा	९.	अनेक प्रकार की
सर्वतः	३.	सभी वस्तुओं से	मम	११.	मुझे
भवेत् ।	५.	हो जाता है (तदनन्तर)	संसृतीः ॥	१०.	जन्म-मरणादि गतियों को भी

श्लोकार्थ—जिस भक्तियोग से पुरुष को सभी वस्तुओं से वैराग्य हो जाता है। तदनन्तर हे प्रभो ! सभी लोकों के प्राणियों की जन्म-मरणादि गतियों को भी बतावें ॥

चतुर्थः श्लोकः

कालस्येश्वररूपस्य परेषां च परस्य ते ।
स्वरूपं बत कुर्वन्ति यद्धेतोः कुशलं जनाः ॥४॥

पदच्छेद—

कालस्य ईश्वररूपस्य परेषाम् च परस्य ते ।
स्वरूपम् बत् कुर्वन्ति यद् हेतोः कुशलम् जनाः ॥

शब्दार्थ—

कालस्य	११.	काल भगवान् का	स्वरूपम्	१२.	स्वरूप (बतावें)
ईश्वररूपस्य	६.	सर्व समर्थ	बत्	१.	आश्चर्य है (कि)
परेषाम्	८.	ब्रह्मादि देवताओं के	कुर्वन्ति	५.	करते हैं (उस)
च	७.	और	यद्	३.	जिसमें
परस्य	९.	स्वामी	हेतोः कुशलम्	४.	भय से, शुभकर्म
ते	१०.	आप	जनाः ॥	२.	मनुष्य

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि मनुष्य जिसके भय से शुभ कर्म करते हैं, उस सर्व समर्थ और ब्रह्मादि देवताओं के स्वामी आप काल भगवान् का स्वरूप बतावें ॥

पञ्चमः श्लोकः

लोकस्य मिथ्याभिमतेरचक्षुषश्चिरं प्रसुप्तस्य तमस्यनाश्रये ।
श्रान्तस्य कर्मस्वनुविद्धया धिया त्वमाविरासीः किल योगभास्करः ॥५॥

पदच्छेद—

लोकस्य मिथ्या अभिमतेः अचक्षुषः चिरम् प्रसुप्तस्य तमसि अनाश्रये ।
श्रान्तस्य कर्मसु अनुविद्धया धिया त्वम् आविरासीः किल योग भास्करः ॥

शब्दार्थ—

लोकस्य	११.	लोगों को	श्रान्तस्य	१०.	थके हुये
मिथ्या	२.	देहादि अनित्य वस्तुओं में	कर्मसु, अनुविद्धया	८.	कर्म में आसक्त
अभिमतेः	३.	आत्माभिमान करने वाले	धिया	९.	बुद्धि के कारण
अचक्षुषः	१.	हे प्रभो ! अज्ञान के कारण	त्वम्	१३.	आप
चिरम्	६.	दीर्घ काल तक	आविरासीः	१६.	प्रकट हुये हैं
प्रसुप्तस्य	७.	सोये हुये (तथा)	किल	१५.	रूप में
तमसि	५.	अज्ञानान्धकार में	योग	१२.	योग का उपदेश देने के लिये
अनाश्रये ।	४.	अपार	भास्करः ॥	१४.	सूर्य के

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! अज्ञान के कारण देहादि अनित्य वस्तुओं में आत्माभिमान करने वाले अपार अज्ञानान्धकार में दीर्घकाल तक सोये हुये, तथा कर्म में आसक्त बुद्धि के कारण थके हुये लोगों को योग का उपदेश देने के लिये आप सूर्य के रूप में प्रकट हुये हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति मातुर्वचः श्लक्ष्णं प्रतिनन्द्य महामुनिः ।
आबभासे कुरुश्रेष्ठ प्रीतस्तां करुणार्दितः ॥६॥

पदच्छेद—

इति मातुः वचः श्लक्ष्णम् प्रतिनन्द्य महामुनिः ।
आबभाषे कुरुश्रेष्ठ प्रीतः ताम् करुणा अर्दितः ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	आबभाषे	१२.	बोले
मातुः	३.	अपनी माता के	कुरुश्रेष्ठ	१.	हे विदुर जी !
वचः	५.	वचन की	प्रीतः	१०.	प्रसन्न होकर
श्लक्षणम्	४.	मधुर	ताम्	११.	अपनी माता से
प्रतिनन्द्य	६.	प्रशंसा करके	करुणा	८.	दया से
महामुनिः ।	७.	महामुनि कपिल जी	अर्दितः ॥	९.	द्रवित और

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! इस प्रकार अपनी माता के मधुर वचन की प्रशंसा करके महामुनि कपिल जी दया से द्रवित और प्रसन्न होकर अपनी माता से बोले ॥

सप्तमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—भक्तियोगो बहुविधो मार्गैर्भामिनि भाव्यते ।
स्वभावगुणमार्गेण पुंसां भावो विभिद्यते ॥७॥

पदच्छेद—

भक्तियोग बहुविधः मार्गैः भामिनि भाव्यते ।
स्वभाव गुण मार्गेण पुंसाम् भावः विभिद्यते ॥

शब्दार्थ—

भक्तियोग	३.	भक्ति योग	स्वभाव	६.	स्वभाव (और)
बहुविधः	४.	अनेक प्रकार का	गुण	७.	गुण के
मार्गैः	२.	भाव के भेद से	मार्गेण	८.	भेद से
भामिनि	१.	हे मातः ।	पुंसाम्	६.	मनुष्यों की
भाव्यते ।	५.	बताया गया है (तथा)	भावः	१०.	भावनायें (भी)
			विभिद्यते ॥	११.	अनेक प्रकार की होती हैं

श्लोकार्थ—हे मातः ! भाव के भेद से भक्ति योग अनेक प्रकार का बताया गया है तथा स्वभाव और गुण के भेद से मनुष्यों की भावनायें भी अनेक प्रकार की होती हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

अभिसंधाय यो हिंसां दम्भं मात्सर्यमेव वा ।
संरम्भी भिन्नदृग्भावं मयि कुर्यात्स तामसः ॥८॥

पदच्छेद—

अभिसंधाय यः हिंसाम् दम्भम् मात्सर्यम् एव वा ।
संरम्भी भिन्नदृग्भावं मयि कुर्यात् सः तामसः ॥

शब्दार्थ—

अभिसंधाय	८.	भाव से	संरम्भी	२.	क्रोधी
यः	१.	जो मनुष्य	भिन्नदृग्भावं	३.	भेद-भाव रखने वाला
हिंसाम्	४.	और हिंसा	मयि	८.	मुझमें
दम्भम्	५.	अहंकार	कुर्यात्	६.	भक्ति करता है
मात्सर्यम्	७.	ईर्ष्या से	सः	१०.	वह
एव वा	६.	अथवा	तामसः ॥	११.	तामस भक्त कहलाता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य क्रोधी, भेद-भाव रखने वाला और हिंसा, अहंकार, अथवा ईर्ष्या से मुझमें भक्ति करता है, वह तामस भक्त कहलाता है ॥

नवमः श्लोकः

विषयानभिसंधाय यश ऐश्वर्यमेव वा ।
अर्चादावर्चयेद्यो मां पृथग्भावः स राजसः ॥६॥

पदच्छेद—

विषयान् अभिसंधाय यशः ऐश्वर्यम् एव वा ।
अर्च्चा आदौ अर्चयेत् यः माम् पृथक् भावः सः राजसः ॥

शब्दार्थ—

विषयान्	५.	विषयों की	**अर्चा आदौ**	८.	मूर्ति आदि में
अभिसंधाय	६.	कामना से	**अर्चयेत्**	१०.	पूजा करता है
यशः	२.	यश	**यः**	१.	जो मनुष्य
ऐश्वर्यम्	३.	ऐश्वर्य	**माम्**	९.	मेरी
एव	७.	ही	**पृथक् भावः**	११.	भेद-भाव रखने वाला
वा ।	४.	अथवा	**सः राजसः ॥**	१२.	वह राजस भक्त (कहलाता है)

श्लोकार्थ—जो मनुष्य ऐश्वर्य, यश अथवा विषयों की कामना से ही मूर्ति आदि में मेरी पूजा करता है। भेद-भाव रखने वाला वह राजस भक्त कहलाता है ॥

दशमः श्लोकः

कर्मनिर्हारमुद्दिश्य परस्मिन् वा तदर्पणम् ।
यजेद्यष्टव्यमिति वा पृथग्भावः स सात्त्विकः ॥१०॥

पदच्छेद—

कर्म निर्हारम् उद्दिश्य परस्मिन् वा तद् अर्पणम् ।
यजेत् यष्टव्यम् इति वा पृथक् भावः सः सात्त्विकः ॥

शब्दार्थ—

कर्म	१.	(जो मनुष्य) पापों के	**यजेत्**	११.	भजन करता है
निर्हारम्	२.	नाश के	**यष्टव्यम्**	९.	भजन करना चाहिये
उद्दिश्य	३.	प्रयोजन से	**इति**	१०.	इस भावना से
परस्मिन्	५.	परमात्मा में	**वा**	८.	अथवा
वा	४.	अथवा	**पृथक् भावः**	१२.	भेद- दृष्टि वाला
तद्	६.	कर्मों के	**सः**	१३.	वह
अर्पणम् ।	७.	समर्पण के लिये	**सात्त्विकः ॥**	१४.	सात्त्विक भक्त कहलाता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य पापों के नाश के प्रयोजन से अथवा परमात्मा में कर्मों के समर्पण के लिये अथवा भजन करना चाहिये इस भावना से भजन करता है। भेद दृष्टि वाला वह सात्त्विक भक्त कहलाता है ॥

एकादशः श्लोकः

मद्गुणश्रुतिमात्रेण मयि सर्वगुहाशये ।
मनोगतिरविच्छिन्ना यथा गङ्गाऽम्भसोऽम्बुधौ ॥११॥

पदच्छेद—

मद् गुण श्रुति मात्रेण मयि सर्व गुहाशये ।
मनो गतिः अविच्छिन्ना यथा गङ्गा अम्भसः अम्बुधौ ॥

शब्दार्थ—

मद्	५.	(उसी प्रकार) मेरे	मनो	११.	मन की
गुण	६.	गुणों को	गतिः	१२.	स्थिति (निर्गुण भक्ति है)
श्रुति	७.	श्रवण	अविच्छिन्ना	४.	निरन्तर गिरता रहता है
मात्रेण	८.	मात्र से	यथा	१.	जैसे
मयि	९.	मुझ	गङ्गा अम्भसः	२.	गङ्गा का प्रवाह
सर्व गुहाशये ।	१०.	सर्वान्तिर्यामि में	अम्बुधौ ॥	३.	समुद्र में

श्लोकार्थ—जैसे गङ्गा का प्रवाह समुद्र में निरन्तर गिरता रहता है । उसी प्रकार मेरे गुणों के श्रवण मात्र से मुझ सर्वान्तिर्यामि में मन की स्थिति निर्गुण भक्ति है ॥

द्वादशः श्लोकः

लक्षणं भक्तियोगस्य निर्गुणस्य ह्युदाहृतम् ।
अहैतुक्यव्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥१२॥

पदच्छेद—

लक्षणम् भक्ति योगस्य निर्गुणस्य हि उदाहृतम् ।
अहैतुकी व्यवहिता या भक्तिः पुरुषोत्तमे ॥

शब्दार्थ—

लक्षणम्	१०.	लक्षण	अहैतुकी	३.	निष्काम (और)
भक्ति	८.	भक्ति	व्यवहिता	४.	अनन्य
योगस्य	९.	योग का	या	२.	जो
निर्गुणस्य	७.	निर्गुण	भक्तिः	५.	प्रेम (है)
हि	६.	वही	पुरुषोत्तमे ॥	१.	भगवान् पुरुषोत्तम में
उदाहृतम् ।	११.	कहा गया है			

श्लोकार्थ—भगवान् पुरुषोत्तम में जो निष्काम और अनन्य प्रेम है । वही निर्गुण भक्ति योग का लक्षण कहा गया है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

सालोक्यसार्ष्टिसामीप्यसारूप्यैकत्वमप्युत ।
दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनं जनाः ॥१३॥

पदच्छेद—

सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य सारूप्य एकत्वम् अपि उत ।
दीयमानम् न गृह्णन्ति विना मत् सेवनम् जनाः ॥

शब्दार्थ—

सालोक्य	६.	भगवान् के धाम में नित्यनिवास	दीयमानम्	५.	दिये जाने पर (भी)
सार्ष्टि	७.	भगवत् ऐश्वर्य का भोग	न	१३.	नहीं
सामीप्य	८.	भगवान् की नित्य सन्निधि	गृह्णन्ति	१४.	स्वीकार करते हैं
सारूप्य	९.	भगवान् के समान रूप प्राप्ति	विना	४.	छोड़कर
एकत्वम्	११.	ब्रह्म रूप की प्राप्ति	मत्	२.	मेरी
अपि	१२.	भी	सेवनम्	३.	सेवा भक्ति को
उत ।	१०.	अथवा	जनाः ॥	१.	भक्त जन

श्लोकार्थ—भक्त जन मेरी सेवा भक्ति को छोड़कर दिये जाने पर भी भगवान् के धाम में नित्य निवास भगवत् ऐश्वर्य का भोग भगवान् की नित्य सन्निधि भगवान् के समान रूप प्राप्ति अथवा ब्रह्म रूप की प्राप्ति भी स्वीकार नहीं करते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

स एव भक्तियोगाख्य आत्यन्तिक उदाहृतः ।
येनातिव्रज्य त्रिगुणं मद्भावायोपपद्यते ॥१४॥

पदच्छेद—

सः एव भक्तियोग आख्य आत्यन्तिकः उदाहृतः ।
येन अतिव्रज्य त्रिगुणम् मद् भावाय उपपद्यते ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	येन	७.	जिससे (पुरुष)
एव	२.	ही	अतिव्रज्य	९.	छोड़कर
भक्तियोग	३.	भक्ति योग	त्रिगुणम्	८.	तीनों गुणों को
आख्य	४.	नाम से प्रसिद्ध	मद्	१०.	मेरी
आत्यन्तिकः	५.	परम पुरुषार्थ	भावाय	११.	प्रेमा भक्ति को
उदाहृतः।	६.	कहा गया है	उपपद्यते ॥	१२.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—वह ही भक्ति योग नाम से प्रसिद्ध परम पुरुषार्थ कहा गया है। जिससे तीनों गुणों को छोड़कर मेरी प्रेमा भक्ति को प्राप्त करता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

निषेवितेनानिमित्तेन स्वधर्मेण महीयसा ।
क्रियायोगेन शस्तेन नातिहिंस्रेण नित्यशः ॥१५॥

पदच्छेद—

निषेवितेन अनिमित्तेन स्व धर्मेण महीयसा ।
क्रियायोगेन शस्तेन न अतिहिंस्रेण नित्यशः ॥

शब्दार्थ—

निषेवितेन	५.	पालन करने से (तथा)	क्रियायोगेन	१०.	क्रिया का अनुष्ठान करने से (भगवान् में लग जाता है मन)
अनिमित्तेन	१.	निष्काम भाव से	शस्तेन	९.	उत्तम
स्व	३.	अपने	न	८.	रहित
धर्मेण	४.	नित्य-नैमित्तिक धर्म का	अतिहिंस्रेण	७.	हिंसा से
महीयसा ।	२	श्रद्धापूर्वक	नित्यशः ॥	६.	प्रतिदिन

श्लोकार्थ—निष्काम भाव से श्रद्धापूर्वक अपने नित्य-नैमित्तिक धर्म का पालन करने से तथा प्रतिदिन हिंसा से रहित उत्तम क्रिया का अनुष्ठान करने से मन भगवान् में लग जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

मद्धिष्ण्यदर्शनस्पर्शपूजास्तुत्यभिवन्दनैः ।
भूतेषु मद्भावनया सत्त्वेनासङ्गमेन च ॥१६॥

पदच्छेद—

मद् धिष्ण्य दर्शन स्पर्श पूजा स्तुति अभिवन्दनैः ।
भूतेषु मद् भावनया सत्त्वेन असङ्गमेन च ॥

शब्दार्थ—

मद्	१.	मेरी	भूतेषु	७.	प्राणियों में
धिष्ण्य	२.	प्रतिमा का	मद्	८.	मेरी
दर्शन	३.	दर्शन	भावनया	९.	भावना करने से
स्पर्श	४.	स्पर्श	सत्त्वेन	११.	धीरतापूर्वक (विषयों में)
पूजा, स्तुति	५.	पूजा, स्तुति (और)	असङ्गमेन	१२.	अनासक्ति से (मन भगवान् में लगता है)
अभिवन्दनैः ।	६.	प्रणाम करने से	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—मेरी प्रतिमा का दर्शन, स्पर्श, पूजा, स्तुति और प्रणाम करने से प्राणियों में मेरी भावना करने से और धीरतापूर्वक विषयों में अनासक्ति से मन भगवान् में लगता है

सप्तदशः श्लोकः

महतां बहुमानेन दीनानामनुकम्पया ।
मैत्र्या चैवात्मतुल्येषु यमेन नियमेन च ।।१७।।

पदच्छेद—

महताम् बहुमानेन दीनानाम् अनुकम्पया ।
मैत्र्या च एव अत्मतुल्येषु यमेन नियमेन च ।।

शब्दार्थं—

महताम्	१.	महान् लोगों का	च	८.	और
बहुमानेन	२.	आदर करने से	एव	६.	ही
दीनानाम्	३.	अनाथों पर	आत्मतुल्येषु	५.	अपने समान लोगों में
अनुकम्पया ।	४.	कृपा करने से	यमेन	९.	यम
मैत्र्या	७.	मैत्री-भाव से	नियमेन	११.	नियम का पालन करने से भगवान् में लगता है मन
च ।।	१०.	एवं			

श्लोकार्थ—महान् लोगों का आदर करने से अनाथों पर कृपा करने से अपने समान लोगों में ही मैत्री भाव से और यम एवम् नियम का पालन करने से मन भगवान् में लगता है ।।

अष्टदशः श्लोकः

आध्यात्मिकानुश्रवणान्नामसङ्कीर्तनाच्च मे ।
आर्जवेनार्यसङ्गेन निरहंक्रियया तथा ।।१८।।

पदच्छेद—

आध्यात्मिक अनुश्रवणात् नाम संङ्कीर्तनात् च मे ।
आर्जवेन आर्य सङ्गेन निरहंक्रियया तथा ।।

शब्दार्थं—

आध्यात्मिक	१.	अध्यात्म विषयों का	आर्जवेन	६.	सरलता से
अनुश्रवणात्	२.	श्रवण करने से	आर्य	७.	श्रेष्ठ लोगों के
नाम संङ्कीर्तनात्	४.	नाम का संकीर्तन करने से	सङ्गेन	८.	सत्संग से
च	५.	और	निरहंक्रियया	१०.	निरहंकार से मन भगवान् में
मे ।।	३.	मेरे	तथा ।।	९.	तथा

श्लोकार्थ—अध्यात्म विषयों का श्रवण करने से मेरे नाम का संकीर्तन करने से और सरलता से श्रेष्ठ लोगों के सत्संग से तथा निरहंकार से मन भगवान् में लगता है ।।

एकोनविंशः श्लोकः

मद्धर्मणो गुणैरेतैः परिसंशुद्ध आशयः ।
पुरुषस्याञ्जसाभ्येति श्रुतमात्रगुणं हि माम् ॥१६॥

पदच्छेद—

मद् धर्मणः गुणैः एतैः परिसंशुद्धः आशयः ।
पुरुषस्य अञ्जसा अभ्येति श्रुतमात्र गुणम् हि माम् ॥

शब्दार्थ—

मद्	३. मेरे	पुरुषस्य	५. भक्त-पुरुष का
धर्मणः	४. भागवत धर्म का पालन करने से	अञ्जसा	११. सरलता से
गुणैः	२. गुणों से	अभ्येति	१२. लग जाता है
एतैः	१. इन	श्रुतमात्र	६. श्रवण मात्र से
परिसंशुद्धः	६. निर्मल	गुणम्	८. (मेरे) गुणों के
आशयः ॥	७. अन्तः करण	हि माम् ॥	१०. ही मुझ में

श्लोकार्थ—इन गुणों से मेरे भागवत धर्म का पालन करने से भक्त-पुरुष का निर्मल अन्त.करण मेरे गुणों के श्रवण मात्र से ही मुझमें सरलता से लग जाता है ॥

विंशः श्लोकः

यथा वातरथो घ्राणमावृङ्क्ते गन्ध आशयात् ।
एवं योगरतं चेत आत्मानमविकारि यत् ॥२०॥

पदच्छेद—

यथा वातरथः घ्राणम् आवृङ्क्ते गन्ध आशयात् ।
एवम् योगरतम् चेतः आत्मानम् अविकारि यत् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	एवम्	७. उसी प्रकार
वातरथः	३. वायुरूप रथ के द्वारा	योगरतम्	८. भक्ति-योग में लगा हुआ,
घ्राणम्	५. नासिका इन्द्रिय तक	चेतः	१०. चित्त है (वह)
आवृङ्क्ते	६. पहुँच जाता है	आत्मानम्	१२. परमात्मा को (प्राप्त कर लेता है)
गन्ध	२. गन्ध	अविकारि	११. निर्गुण
आशयात् ।	४. पुष्प से (उड़कर)	यत् ॥	६. जो

श्लोकार्थ—जैसे गन्ध वायुरूप रथ के द्वारा पुष्प से उड़कर नासिका इन्द्रिय तक पहुँच जाता है । उसी प्रकार भक्ति-योग में लगा हुआ जो चित्त है वह निर्गुण परमात्मा को प्राप्त करता है ॥

एकविंशः श्लोकः

अहं सर्वेषु भूतेषु भूतात्मावस्थितः सदा ।
तमवज्ञाय मां मर्त्यः कुरुतेऽर्चाविडम्बनम् ॥२१॥

पदच्छेद—

अहम् सर्वेषु भूतेषु भूत आत्मा अवस्थितः सदा ।
तम् अवज्ञाय माम् मर्त्यः कुरुते अर्चा विडम्बनम् ।

शब्दार्थ—

अहम्	१.	मैं	तम्, अवज्ञाय	७.	उसका, अनादर कर
सर्वेषु	३.	सभी	माम्	९.	मेरी
भूतेषु	४.	प्राणियों को	मर्त्यः	८.	मनुष्य
भूत आत्मा	५.	आत्मा रूप से	कुरुते	१२.	करता है
अवस्थितः	६.	स्थित हूँ	अर्चा	१०	प्रतिमा में पूजा करने का
सदा ।	२.	हमेशा	विडम्बनम्	११.	केवल पाखण्ड

श्लोकार्थ—मैं हमेशा सभी प्राणियों में आत्मा रूप से स्थित हूँ । उसका अनादर करके मनुष्य मेरी प्रतिमा में पूजा करने का केवल पाखण्ड करता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यो मां सर्वेषु भूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम् ।
हित्वार्चां भजते मौढ्याद्भस्मन्येव जुहोति सः ॥२२॥

पदच्छेद—

यः माम् सर्वेषु भूतेषु सन्तम् आत्मानम् ईश्वरम् ।
हित्वा अर्चाम् भजते मौढ्यात् भस्मनि एव जुहोति सः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो मनुष्य	हित्वा	८.	छोड़कर
माम्	६.	मुझ	अर्चाम्	१०.	प्रतिमा में
सर्वेषु	२.	सम्पूर्ण	भजते	११.	आराधना करता है
भूतेषु	३.	प्राणियों में	मौढ्यात्	९.	अज्ञान-वश
सन्तम्	५.	विद्यमान	भस्मनि	१३.	राख में
आत्मानम्	४.	आत्मा रूप से	एव	१४.	ही
ईश्वरम् ।	७.	परमात्मा को	जुहोति	१५.	हवन करता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य सम्पूर्ण प्राणियों में आत्मा रूप से विद्यमान मुझ परमात्मा को छोड़कर अज्ञान वश प्रतिमा में अराधना करता है । वह राख में ही हवन करता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

द्विषतः परकाये मां मानिनो भिन्नदर्शिनः ।
भूतेषु बद्धवैरस्य न मनः शान्तिमृच्छति ॥२३॥

पदच्छेद—

द्विषतः परकाये माम् मानिनः भिन्न दर्शिनः ।
भूतेषु बद्ध वैरस्य न मनः शान्तिम् ऋच्छति ॥

शब्दार्थ—

द्विषतः	८. द्वेष करते हैं	भूतेषु	३. सभी प्राणियों से
परकाये	६. दूसरों के शरीर में स्थित	बद्ध	५. करते हैं (वे मानों)
माम्	७. मुझसे	वैरस्य	४. वैर
मानिनः	२. अहंकारी (जो लोग)	न	१०. नहीं
भिन्न दर्शिनः ।	१. भेद बुद्धि रखने वाले	मनःशान्तिम्	९. (उनका) मन शान्ति को
		ऋच्छति ॥	११. प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—भेद बुद्धि रखने वाले अहंकारी जो लोग सभी प्राणियों से वैर करते हैं। वे मानों दूसरों के शरीर में स्थित मुझसे द्वेष करते हैं। उनका मन शान्ति को नहीं प्राप्त करता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अहमुच्चावचैर्द्रव्यैः क्रिययोत्पन्नयानघे ।
नैव तुष्येऽर्चितोऽर्चायां भूतग्रामावमानिनः ॥२४॥

पदच्छेद—

अहम् अच्चावचैः द्रव्यैः क्रियया उत्पन्नया अनघे ।
नैव तुष्ये अर्चितः अर्चायाम् भूत ग्राम अवमानिनः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१०. मैं	नैव	११. नहीं
उच्चावचैः	४. बढ़िया-घटिया	तुष्ये	१२. प्रसन्न होता हूँ
द्रव्यैः	५. सामग्रियों के द्वारा	अर्चितः	९. पूजा करे (तो भी)
क्रियया	७. अनुष्ठान से (मेरी)	अर्चायाम्	८. प्रतिमा में
उत्पन्नया	६. किये गये	भूतग्राम	२. (जो) प्राणियों के समूह का
अनघे ।	१. हे मातः ।	अवमानिनः ॥	३. अनादर करता है (यदि वह)

श्लोकार्थ— हे मातः ! जो प्राणियों के समूह का अनादर करता है। यदि वह बढ़िया-घटिया सामग्रियों के द्वारा किये गये अनुष्ठान से मेरी प्रतिमा में पूजा करें, तो भी मैं प्रसन्न नहीं होता हूँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

अर्चादावर्चयेत्तावदीश्वरं मां स्वकर्मकृत् ।
यावन्न वेद स्वहृदि सर्वभूतेष्ववस्थितम् ॥२५॥

पदच्छेद—

अर्चा आदौ अर्चयेत् तावत् ईश्वरम् माम् स्वकर्म कृत् ।
यावत् न वेद स्वहृदि सर्व भूतेषु अवस्थितम् ॥

शब्दार्थ—

अर्चा आदौ	३.	प्रतिमा, आदि में	**यावत्**	८.	जब-तक
अर्चयेत्	७.	पूजन करे	**न**	१३.	न
तावत्	४.	तब-तक	**वेद**	१४.	ज्ञान हो जावे
ईश्वरम्	६.	परमात्मा का	**स्वहृदि**	९.	अपने हृदय में (और)
माम्	५.	मुझ	**सर्व**	१०.	सभी
स्वकर्म	१.	अपने धर्म का	**भूतेषु**	११.	प्राणियों में
कृत् ।	२.	पालन करने वाला (मनुष्य)	**अवस्थितम् ॥**	१२.	विराजमान मुझ (परमात्मा का)

श्लोकार्थ—अपने धर्म का पालन करने वाला मनुष्य प्रतिमा-आदि में तब-तक मुझ परमात्मा का पूजन करे। जब-तक अपने हृदय में और सभी प्राणियों में विराजमान मुझ परमात्मा का ज्ञान न हो जावे ॥

षड्विंशः श्लोकः

आत्मनश्च परस्यापि यः करोत्यन्तरोदरम् ।
तस्य भिन्नदृशो मृत्युर्विदधे भयमुल्बणम् ॥२६॥

पदच्छेद—

आत्मनः च परस्य अपि यः करोति अन्तरः उदरम् ।
तस्य भिन्न दृशः मृत्यु विदधे भयम् उल्वणम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मनः	२.	अपने	**तस्य**	८.	उस
च परस्य	३.	और, पराये का	**भिन्न**	९.	भेद
अपि	५.	भी	**दृशः**	१०.	दर्शी के सामने (मैं)
यः	१.	जो (मनुष्य)	**मृत्यु**	११.	मृत्यु के रूप में
करोति	७.	करता है	**विदधे**	१४.	उत्पन्न करता हूँ
अन्तरः	६.	भेद	**भयम्**	१३.	भय
उदरम् ।	४.	थोड़ा	**उल्वणम् ॥**	१२.	महान्

श्लोकार्थ—जो मनुष्य अपने और पराये का थोड़ा भी भेद करता है। उस भेद-दर्शी के सामने मैं मृत्यु के रूप महान् भय उत्पन्न करता हूँ।

सप्तविंशः श्लोकः

अथ मां सर्वभूतेषु भूतात्मानं कृतालयम् ।
अर्हयेद्दानमानाभ्यां मैत्र्याभिन्नेन चक्षुषा ॥२७॥

पदच्छेद—

अथ माम् सर्व भूतेषु भूत आत्मानम् कृत आलयम् ।
अर्हयेत् दान मानाभ्याम् मैत्र्या अभिन्नेन चक्षुषा ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अतः (मनुष्यों को)	अर्हयेत्	१३.	पूजन करना चाहिये
माम्	७.	मुझ (परमात्मा का)	दान	८.	दान (और)
सर्व	२.	सभी	मानाभ्याम्	९.	सम्मान से
भूतेषु	३.	प्राणियों में	मैत्र्या	११.	मित्रता
भूत आत्मानम्	६.	उनकी आत्मा रूप से स्थित	अभिन्नेन	१०.	प्रगाढ़
कृत	५.	बनाकर	चक्षुषा ॥	१२.	समान दृष्टि से
आलयम् ।	४.	घर			

श्लोकार्थ—अतः मनुष्यों को सभी प्राणियों में घर बना कर उनकी आत्मारूप से स्थित मुझ परमात्मा का दान और सम्मान से प्रगाढ़ मित्रता से तथा समान दृष्टि से पूजन करना चाहिये ॥

अष्टविंशः श्लोकः

जीवाः श्रेष्ठा ह्यजीवानां ततः प्राणभृतः शुभे ।
ततः सचित्ताः प्रवरास्ततश्चेन्द्रियवृत्तयः ॥२८॥

पदच्छेद—

जीवाः श्रेष्ठाः हि अजीवानाम् ततः प्राणभृतः शुभे ।
ततः सचित्ताः प्रवराः ततः च इन्द्रिय वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

जीवाः	३.	वृक्षादि जीव	ततः	८.	श्वास लेने वालों से
श्रेष्ठाः	४.	उत्तम हैं	सचित्ताः	९.	चित्त वाले जीव
हि	७.	श्रेष्ठ हैं	प्रवराः	१४.	श्रेष्ठ हैं
अजीवानाम्	२.	पाषाण आदि जड़ की अपेक्षा	ततः	११.	उनसे
ततः	५.	उससे	च	१०.	और
प्राणभृतः	६.	श्वास लेने वाले जीव	इन्द्रिय	१२.	इन्द्रियों की
शुभे ।	१.	हे मातः !	वृत्तयः ॥	१३.	वृत्ति वाले जीव

श्लोकार्थ—हे मातः ! पाषाण आदि जड़ की अपेक्षा वृक्षादि जीव उत्तम हैं । उससे श्वास लेने वाले जीव श्रेष्ठ हैं । श्वास लेने वालों से चित्त वाले जीव और उनसे इन्द्रियों की वृत्ति वाले जीव श्रेष्ठ हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तत्रापि स्पर्शवेदिभ्यः प्रवरा रसवेदिनः ।
तेभ्यो गन्धविदः श्रेष्ठास्ततः शब्दविदो वराः ॥२९॥

पदच्छेद—

तत्र अपि स्पर्श वेदिभ्यः प्रवराः रसवेदिनः ।
तेभ्यः गन्ध विदः श्रेष्ठाः ततः शब्द विदाः वरा ॥

शब्दार्थं—

तत्र	१.	उन इन्द्रिय वाले प्राणियों में	तेभ्यः	७.	उनकी अपेक्षा
अपि	२.	भी	गन्ध	८.	गन्ध का
स्पर्श	३.	स्पर्श का	विदः	९.	ग्रहण करने वाले (भौंरे आदि जीव)
वेदिभ्यः	४.	अनुभव करने वाले जीवों से	श्रेष्ठाः	१०.	श्रेष्ठ हैं (तथा)
प्रवराः	६.	श्रेष्ठ हैं	ततः शब्द	११.	उनसे भी, शब्द को
रसवेदिनः ।	५.	रस का ग्रहण करने वाले (मछली आदि जीव)	विदाः वरा ॥	१२.	सुनने वाले सर्पादि जीव उत्तम हैं ।

श्लोकार्थ—उन इन्द्रियों वाले प्राणियों में भी स्पर्श का अनुभव करने वाले जीवों से रसका ग्रहण करने वाले मछली आदि जीव श्रेष्ठ हैं । उनकी अपेक्षा गन्ध का ग्रहण करने वाले भौंरे आदि जीव-श्रेष्ठ हैं । तथा उनसे भी शब्द को सुनने वाले सर्पादि जीव उत्तम हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

रूपभेदविदस्तत्र ततश्चोभयतोदतः ।
तेषां बहुपदाः श्रेष्ठाश्चतुष्पादस्ततो द्विपात् ॥३०॥

पदच्छेद—

रूप भेद विदः तत्र ततः च उभयतोदतः ।
तेषाम् बहुपदाः श्रेष्ठाः चतुष्पादः ततः द्विपात् ॥

शब्दार्थं—

रूप	३.	रूपों का	तेषाम्	८.	उनमें भी
भेद	२.	भिन्न-भिन्न	बहुपदाः	१०.	अनेक पैर वाले जीव (तथा)
विदः	४.	ज्ञान रखने वाले (काकादि जीव श्रेष्ठ हैं)	श्रेष्ठाः	१४.	श्रेष्ठ हैं
तत्र	१.	उनमें भी	चतुष्पादः	११.	चार पैर वाले जीव
ततः	५.	उनकी अपेक्षा	ततः	१२.	उनकी अपेक्षा
च	७.	और	द्विपात् ॥	१३.	दो पैर वाले मनुष्य
उभयतोदतः ।	६.	ऊपर-नीचे दाँत वाले जीव (श्रेष्ठ हैं)			

श्लोकार्थ—उनमें भी भिन्न-भिन्न रूपों का ज्ञान रखने वाले काकादि जीव श्रेष्ठ हैं । उनकी अपेक्षा ऊपर-नीचे दाँतों वाले जीव श्रेष्ठ हैं और उनमें भी अनेक पैर वाले जीव तथा चार पैर वाले जीव उनकी अपेक्षा दो पैर वाले मनुष्य श्रेष्ठ हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

ततो वर्णाश्च चत्वारस्तेषां ब्राह्मण उत्तमः ।
ब्राह्मणेष्वपि वेदज्ञो ह्यर्थज्ञोऽभ्यधिकस्ततः ॥३१॥

पदच्छेद—

ततः वर्णाः च चत्वारः तेषाम् ब्राह्मणः उत्तमः ।
ब्राह्मणेषु अपि वेदज्ञः हि अर्थज्ञः अभ्यधिकः ततः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. उन मनुष्यों में	ब्राह्मणेषु	८. ब्राह्मणों में
वर्णाः	३. वर्ण	अपि	९. भी
च	४. और	वेदज्ञः	१०. वेद पाठी
चत्वारः	२. (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) चार	हि	११. तथा
तेषाम्	५. उन वर्णों में (भी)	अर्थज्ञः	१३. वेद के तात्पर्य को जानने वाले
ब्राह्मणः	६. ब्राह्मण	अभ्यधिकः	१४. अधिक श्रेष्ठ हैं
उत्तमः ।	७. उत्तम है	ततः ॥	१२. उसकी अपेक्षा

श्लोकार्थ—उन मनुष्यों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार वर्ण और उन वर्णों में भी ब्राह्मण उत्तम हैं । ब्राह्मणों में भी वेदपाठी तथा उसकी अपेक्षा वेद के तात्पर्य को जानने वाले अधिक श्रेष्ठ हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अर्थज्ञात्संशयच्छेत्ता ततः श्रेयान् स्वकर्मकृत् ।
मुक्तसङ्गस्ततो भूयानदोग्धा धर्ममात्मनः ॥३२॥

पदच्छेद—

अर्थज्ञात् संशय छेत्ता ततः श्रेयान् स्वकर्म कृत् ।
मुक्त सङ्ग ततः भूयान् अदोग्धा धर्मम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

अर्थज्ञात्	१. वेद के ज्ञाता की अपेक्षा	मुक्त	९. रहित (और)
संशय	२. सन्देह का	सङ्ग	८. आसक्ति से
छेत्ता	३. निवारण करने वाला	ततः	१०. उसकी अपेक्षा
ततः	४. (तथा) उसकी अपेक्षा	भूयान्	१४. मनुष्य श्रेष्ठ है
श्रेयान्	७. श्रेष्ठ है (उससे भी अधिक)	अदोग्धा	१३. निष्काम भाव से पालन करने वाला
स्वकर्म	५. अपने धर्म का	धर्मम्	१२. धर्म का
कृत् ।	६. पालन करने वाला	आत्मनः ॥	११. अपने

श्लोकार्थ—वेद के ज्ञाता की अपेक्षा सन्देह का निवारण करने वाला तथा उसकी अपेक्षा अपने धर्म का पालन करने वाला श्रेष्ठ है । उससे भी अधिक आसक्ति से रहित और उसकी अपेक्षा अपने धर्म का निष्काम भाव से पालन करने वाला मनुष्य श्रेष्ठ है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तस्मान्मय्यर्पिताशेषक्रियार्थात्मा निरन्तरः ।
मय्यर्पितात्मनः पुंसो मयि संन्यस्तकर्मणः ।
न पश्यामि परं भूतमकर्तुः समदर्शनात् ॥३३॥

पदच्छेद—

तस्मात् मयि अर्पित अशेष क्रिया अर्थ आत्मा निरन्तरः ।
मयि अर्पित आत्मनः पुंसः मयि सन्यस्त कर्मणः ।
न पश्यामि परम् भूतम् अकर्तुः सम दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसलिये	पुंसः	१५. मनुष्य से
मयि	४. मुझमें	मयि	१०. मुझे
अर्पित	५. समर्पण करके	सन्यस्त	१२. अर्पण करके
अशेष, क्रिया	२. सम्पूर्ण कर्म	कर्मणः ।	११. कर्म
अर्थ, आत्मा	३. फल शरीर को	न पश्यामि	१८. नहीं देखता हूँ
निरन्तरः ।	६ भेद-भाव से रहित होना चाहिये	परम्,	१६. श्रेष्ठ (किसी दूसरे)
मयि	७. मुझमें	भूतम्	१७. प्राणी को
अर्पित	९. समर्पित करके (तथा)	अकर्तुः	१३. कर्तापन से रहित (और)
आत्मनः	८. चित्त	सम दर्शनात् ॥	१४. समदर्शी

श्लोकार्थ—इसलिये सम्पूर्ण कर्म फल और शरीर को मुझमें समर्पण करके भेद-भाव से रहित होना चाहिये । मुझमें चित्त समर्पित करके तथा मुझे कर्म अर्पण करके कर्तापन से रहित और समदर्शी मनुष्य से श्रेष्ठ किसी दूसरे प्राणी को नहीं देखता हूँ ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मनसैतानि भूतानि प्रणमेद्बहु मानयन् ।
ईश्वरो जीवकलया प्रविष्टो भगवानिति ॥३४॥

पदच्छेद—

मनसः एतानि भूतानि प्रणमेत् बहु मानयन् ।
ईश्वरः जीवः कलया प्रविष्टः भगवान् इति ॥

शब्दार्थ—

मनसः	११. मन से	ईश्वरः	१. परमात्मा
एतानि	७. इन सभी	जीवः	३. जीव रूप में
भूतानि	८. प्राणियों को	कलया	४. अपने अंश से
प्रणमेत्	१२. प्रणाम करना चाहिये	प्रविष्टः	५. विद्यमान है
बहु	९. बहुत	भगवान्	२. भगवान् ही
मानयन् ।	१०. आदर के साथ	इति ॥	६. ऐसा समझ कर

श्लोकार्थ—परमात्मा भगवान् ही जीव रूप में अपने अंश से विद्यमान है । ऐसा समझ कर इन सभी प्राणियों को बहुत आदर के साथ प्रणाम करना चाहिये ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

भक्तियोगश्च योगश्च मया मानव्युदीरितः ।
ययोरेकतरेणैव पुरुषः पुरुषं व्रजेत् ॥३५॥

पदच्छेद—

भक्तियोगः च योगः च मया मानवि उदीरितः ।
ययोः एकतरेण एव पुरुषः पुरुषम् व्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

भक्तियोगः	३. भक्तियोग	ययोः	७. जिन दोनों में से
च	४. और	एकतरेण	८. किसी एक साधन से
योगः च	५ अष्टांग योग का	एव	९. ही
मया	२. मैंने (तुमसे)	पुरुषः	१०. जीवात्मा
मानवि	१. हे मातः ।	पुरुषम्	११. परमात्मा को
उदीरितः ।	६. वर्णन किया है	व्रजेत् ॥	१२. प्राप्त कर सकता है

श्लोकार्थ—हे मातः ! मैंने तुमसे भक्ति-योग और अष्टांग-योग का वर्णन किया है । जिन दोनों में से किसी एक साधन से ही जीवात्मा परमात्मा को प्राप्त कर सकता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एतद्भगवतो रूपं ब्रह्मणः परमात्मनः ।
परं प्रधानपुरुषं दैवं कर्मविचेष्टितम् ॥३६॥

पदच्छेद—

एतद् भगवतः रूपम् ब्रह्मणः परमात्मनः ।
परम् प्रधान पुरुषम् दैवम् कर्म विचेष्टितम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	१. यही	परम्	७. श्रेष्ठ (एवं)
भगवतः	४. भगवान का	प्रधान, पुरुषम्	६. प्रकृति और पुरुष से
रूपम्	५. स्वरूप है (जो)	दैवम्	८. अदृष्ट कहलाता है
ब्रह्मणः	२. पर-ब्रह्म	कर्म	९. इसी से सारी क्रियायें
परमात्मनः ।	३. परमात्मा	विचेष्टितम् ॥	१०. होती हैं

श्लोकार्थ—यही पर-ब्रह्म परमात्मा भगवान् का स्वरूप है । जो प्रकृति और पुरुष से श्रेष्ठ एवं अदृष्ट कहलाता है । इसी से सारी क्रियायें होती हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

रूपभेदास्पदं दिव्यं काल इत्यभिधीयते ।
भूतानां महदादीनां यतो भिन्नदृशां भयम् ॥३७॥

पदच्छेद—

रूप भेद आस्पदम् दिव्यम् कालः इति अभिधीयते ।
भूतानाम् महत् आदीनाम् यतः भिन्न दृशाम् भयम् ॥

शब्दार्थ—

रूप	१.	भिन्न-भिन्न	भूतानाम्	१३.	प्राणियों को
भेद	२.	रूपों का	महत्	९.	महत्तत्त्व
आस्पदम्	३.	कारण (और)	आदीनाम्	१०.	इत्यादि के अभिमानी
दिव्यम्	४.	अलौकिक	यतः	८.	जिससे
कालः	५.	(वही) काल	भिन्न	११.	भेद
इति	६.	इस नाम से	दृशाम्	१२.	दर्शी
अभिधीयते ।	७.	कहा जाता है	भयम् ॥	१४.	भय होता है

श्लोकार्थ—भिन्न-भिन्न रूपों का कारण और अलौकिक वही काल इस नाम से कहा जाता है । जिससे महत्तत्त्व इत्यादि के अभिमानी भेद-दर्शी प्राणियों को भय होता है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

योऽन्तःप्रविश्य भूतानि भूतैरत्त्यखिलाश्रयः ।
स विष्ण्वाख्योऽधियज्ञोऽसौ कालः कलयतां प्रभुः ॥३८॥

पदच्छेद—

यः अन्तः प्रविश्य भूतानि भूतैः अत्ति अखिल आश्रयः ।
सः विष्णु आख्यः अधियज्ञः असौ कालः कलयताम् प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	सः	११.	वही
अन्तः	५.	अन्तःकरण में	विष्णु	१४.	विष्णु
प्रविश्य	६.	प्रविष्ट होकर	आख्यः	१५.	स्वरूप से
भूतानि	४.	सभी प्राणियों के	अधियज्ञः	१३.	यज्ञों का फल देने वाला
भूतैः	७.	प्राणियों से ही (उनका)	असौ	१६.	प्रसिद्ध है
अत्ति	८.	संहार कराता है	कालः	१२.	काल
अखिल	२.	सम्पूर्ण जगत् का	कलयताम्	९.	सृष्टि करने वाले देवताओं का भी
आश्रयः ।	३.	कारण होने से	प्रभुः ॥	१०.	शासक

श्लोकार्थ—जो सम्पूर्ण जगत का कारण होने से सभी प्राणियों के अन्तःकरण में प्रविष्ट होकर प्राणियों से ही उनका संहार कराता है । सृष्टि करने वाले देवताओं का भी शासक वही काल यज्ञों का फल देने वाला विष्णु स्वरूप से प्रसिद्ध है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

न चास्य कश्चिद्दयितो न द्वेष्यो न च बान्धवः ।
आविशत्यप्रमत्तोऽसौ प्रमत्तं जनमन्तकृत् ॥३९॥

पदच्छेद—

न च अस्य कश्चित् दयितः न द्वेष्यः न च बान्धवः ।
आविशति अप्रमत्तः असौ प्रमत्तम् जनम् अन्तकृत् ॥

शब्दार्थ—

न, च	२.	न तो	बान्धवः	८.	सगा सम्बन्धी है
अस्य	१.	इस काल रूप विष्णु का	आविशति	१३.	प्रवेश करके उनका
कश्चित्	३.	कोई	अप्रमत्तः	१०.	सावधान रहता है (और)
दयितः	४.	प्रिय है	असौ	९.	वह सदा
न द्वेष्य	५.	न शत्रु है	प्रमत्तम्	११.	असावधान
न	७.	न कोई	जनम्	१२.	मनुष्यों के अन्दर
च	६.	और	अन्तकृत् ॥	१४.	नाश कर देता है

श्लोकार्थ—इस काल रूप विष्णु का न तो कोई प्रिय है, न शत्रु है और न कोई सगा सम्बन्धी है । वह सदा सावधान रहता है, और असावधान मनुष्यों के अन्दर प्रवेश करके उनका नाश कर देता है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

यद्भयाद्वाति वातोऽयं सूर्यस्तपति यद्भयात् ।
यद्भयाद्वर्षते देवो भगणो भाति यद्भयात् ॥४०॥

पदच्छेद—

यद् भयात् वाति वातः अयम् सूर्यः तपति यद् भयात् ।
यद् भयात् वर्षते देवः भगणः भाति यद् भयात् ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	जिस काल के	यद्	९.	जिसके
भयात्	२.	भय से	भयात्	१०.	भय से
वाति	४.	बहती है	वर्षते	१२.	वर्षा करता है (और)
वातः	३.	हवा	देवः	११.	इन्द्र
अयम्	७.	यह	भगणः	१५.	तारे
सूर्यः तपति	८.	सूर्य तपता है	भाति	१६.	चमकते हैं
यद्	५.	जिसके	यद्	१३.	जिसके
भयात् ।	६.	भय से	भयात् ॥	१४.	भय से

श्लोकार्थ—जिस काल के भय से हवा बहती है, जिसके भय से सूर्य तपता है । जिसके भय से इन्द्र वर्षा करता है और जिसके भय से तारे चमकते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

यद्वनस्पतयो भीता लताश्चौषधिभिः सह ।
स्वे स्वे कालेऽभिगृह्णन्ति पुष्पाणि च फलानि च ॥४१॥

पदच्छेद—

यद् वनस्पतयः भीताः लताः च औषधिभिः सह ।
स्वे-स्वे काले अभिगृह्णन्ति पुष्पाणि च फलानि च ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	जिस काल से	स्वे-स्वे	८.	अपने-अपने
वनस्पतयः	५.	वनस्पतियां	काले	९.	समय पर
भीताः	२.	भयभीत होकर	अभिगृह्णन्ति	१३.	धारण करती है
लताः	७.	लतायें	पुष्पाणि	१०.	फूलों को
च	६.	और	च	११.	और
औषधिभिः ॥	३.	औषधियों के	फलानि च	१२.	फलों को
सह ।	४.	सहित			

श्लोकार्थ—जिस काल से भयभीत होकर औषधियों के सहित वनस्पतियाँ और लतायें अपने-अपने समय पर फूलों को और फलों को धारण करती है ।

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

स्रवन्ति सरितो भीता नोत्सर्पत्युदधिर्यतः ।
अग्निरिन्धे सगिरिभिर्भूर्न मज्जति यद्भयात् ॥४२॥

पदच्छेद—

स्रवन्ति सरितः भीताः न उत्सर्पति उदधिः यतः ।
अग्निः इन्धे सगिरिभिः भूः न मज्जति यद् भयात् ॥

शब्दार्थ—

स्रवन्ति	४.	बहती है	अग्निः	१०.	अग्नि
सरितः	३.	नदियाँ	इन्धे	११.	जलती है (और)
भीताः	२.	डर से	सगिरिभिः	१२.	पर्वतों के साथ
न	६.	नहीं	भूः न	१३.	पृथ्वी नहीं
उत्सर्पति	७.	उलंघन करता है	मज्जति	१४.	डूबती है
उदधिः	५.	समुद्र (मर्यादा का)	यद्	८.	जिसके
यतः ।	१.	जिस काल के	भयात् ॥	९.	भय से

श्लोकार्थ—जिस काल के डर से नदियाँ बहती हैं । समुद्र मर्यादा का उलंघन नहीं करता है । जिसके भय से अग्नि जलती है और पर्वतों के साथ पृथ्वी नहीं डूबती है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

नभो ददाति श्वसतां पदं यन्नियमाददः ।
लोकं स्वदेहं तनुते महान् सप्तभिरावृतम् ॥४३॥

पदच्छेद—

नभः ददाति श्वसताम् पदम् यत् नियमाद् अदः ।
लोकम् स्वदेहम् तनुते महान् सप्तभिः आवृतम् ॥

शब्दार्थ—

नभः	४.	आकाश	लोकम्	१२.	ब्रह्माण्ड की
ददाति	७.	अवकाश देता है (तथा)	स्वदेहम्	११.	अपने शरीर की (और)
श्वसताम्	५.	प्राणियों को	तनुते	१३.	सृष्टि करता है
पदम्	६.	साँस लेने का	महान्	८.	महत्तत्त्व
यत्	१.	जिस काल के	सप्तभिः	९.	अहंकारादि सात
नियमाद्	२.	आदेश से	आवृतम् ॥	१०.	आवरणों से युक्त
अदः ।	३.	वह			

श्लोकार्थ—जिस काल के आदेश से वह आकाश प्राणियों को अवकाश देता है तथा महत्तत्त्व अहंकारादि सात आवरणों से युक्त अपने शरीर की और ब्रह्माण्ड की सृष्टि करता है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

गुणाभिमानिनो देवाः सर्गादिष्वस्य यद्भयात् ।
वर्तन्तेऽनुयुगं येषां वश एतच्चराचरम् ॥४४॥

पदच्छेद—

गुण अभिमानिनः देवाः सर्गादिषु अस्य यद् भयात् ।
वर्तन्ते अनुयुगम् येषाम् वश एतत् चराचरम् ॥

शब्दार्थ—

गुण	३.	सत्त्वादि गुणों के	वर्तन्ते	१३.	प्रवृत्त होते हैं
अभिमानिनः	४.	नियामक	अनुयुगम्	१२.	युग के अनुसार
देवाः	५.	देवगण	येषाम्	६.	जिनके
सर्गादिषु	११.	सृष्टि आदि में	वश	७.	अधीन
अस्य	१०.	इस जगत् की	एतत्	८.	यह
यद्	१.	जिस काल के	चराचरम् ॥	९.	चराचर जगत् है
भयात् ।	२.	भय से			

श्लोकार्थ—जिस काल के भय से सत्त्वादि गुणों के नियामक देवगण, जिनके अधीन यह चराचर जगत् है, इस जगत् की सृष्टि आदि में युग के अनुसार प्रवृत्त होते हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सोऽनन्तोऽन्तकरः कालोऽनादिरादिकृदव्ययः ।
जनं जनेन जनयन्मारयन्मृत्युनान्तकम् ॥४५॥

पदच्छेद—

सः अनन्तः अन्तकरः कालः अनादिः आदिकृत् अव्ययः ।
जनम् जनेन जनयन् मारयन् मृत्युना अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१. वह		जनम्	९.	पुत्र को
अनन्तः	६. उसका अन्त न होने पर भी		जनेन	८.	पिता से
अन्तकर	७. अन्त करने वाला है (वह)		जनयन्	१०.	उत्पन्न करता हुआ
कालः	३. काल		मारयन्	१३.	अन्त कर देता है
अनादिः	४. स्वयं अनादि है किन्तु दूसरों का		मृत्युना	११.	मृत्यु से
आदिकृत्	५. उत्पादक है		अन्तकम् ॥	१२.	स्वयं यमराज का भी
अव्ययः ।	२. अविनाशी				

श्लोकार्थ—वह अविनाशी काल स्वयं अनादि है, किन्तु दूसरों का उत्पादक है। उसका अन्त न होने पर भी अन्त करने वाला है। पिता से पुत्र को उत्पन्न करता हुआ मृत्यु से स्वयं यमराज का भी अन्त कर देता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपाख्याने एकोनत्रिंशः अध्यायः समाप्तः ॥२९॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

त्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

कपिल उवाच—तस्यैतस्य जनो नूनं नायं वेदोरुविक्रमम् ।

काल्यमानोऽपि बलिनो वायोरिव घनावलिः ॥१॥

पदच्छेद— तस्य एतस्य जनः नूनम् न अयम् वेद उरु विक्रमम् ।

कालयमानः अपि बलिनः वायोः इव घन आवलिः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१०.	सर्व प्रसिद्ध उस	विक्रमम् ।	१३.	पराक्रम को
एतस्य	११.	काल के	काल्यमानः	६.	उड़ाये जाने पर
जनः	९.	मनुष्य	अपि	७.	भी उसके बल को नहीं जानता है
नूनम्	१४.	अवश्य ही	बलिनः	४.	बलवान
न	१५.	नहीं	वायोः	५.	वायु से
अयम्	८.	(उसी प्रकार)	इव	१.	जैसे
वेद	१६.	जानता है	घन	२.	मेघों का
उरु	१२.	महान्	आवलिः ॥	३.	समूह

श्लोकार्थ— जैसे मेघों का समूह बलवान् वायु से उड़ाये जाने पर भी उसके बल को नहीं जानता है। उसी प्रकार यह मनुष्य सर्व प्रसिद्ध उस काल के महान् पराक्रम को अवश्य ही नहीं जानता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

यं यमर्थमुपादत्ते दुःखेन सुखहेतवे ।

तं तं धुनोति भगवान् पुमाञ्छोचति यत्कृते ॥२॥

पदच्छेद—

यम्-यम् अर्थम् उपादत्ते दुःखेन सुख हेतवे ।

तम्-तम् धुनोति भगवान् पुमान् शोचति यत् कृते ॥

शब्दार्थ—

यम्-यम्	४.	जिस-जिस	तम्-तम्	९.	उस-उस वस्तु को
अर्थम्	५.	वस्तु को	धुनोति	१०.	नष्ट कर देते हैं
उपादत्ते	७.	एकत्रित करता है	भगवान्	८.	भगवान्
दुःखेन	६.	कष्ट से	पुमान्	१.	पुरुष
सुख	२.	सुख	शोचति	१२.	शोक करता है
हेतवे ।	३.	पाने के लिये	यत् कृते ॥	११.	जिसके लिये (वह)

श्लोकार्थ—पुरुष सुख पाने के लिये जिस-जिस वस्तु को कष्ट से एकत्रित करता है। भगवान् उस-उस वस्तु को नष्ट कर देता है। जिसके लिये वह शोक करता है ॥

तृतीयः श्लोकः

यदध्रुवस्य देहस्य सानुबन्धस्य दुर्मतिः ।
ध्रुवाणि मन्यते मोहाद् गृहक्षेत्रवसूनि च ॥३॥

पदच्छेद—

यद् ध्रुवस्य देहस्य सानुबन्धस्य दुर्मतिः ।
ध्रुवाणि मन्यते मोहाद् गृह क्षेत्र वसूनि च ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	क्योंकि	ध्रुवाणि	१०.	नित्य
ध्रुवस्य	४.	नाशवान्	मन्यते	११.	मानता है
देहस्य	५.	शरीर के (और)	मोहाद्	३.	अज्ञान-वश
सानुबन्धस्य	६.	वन्धु-बान्धवों के	गृह, क्षेत्र	७.	घर, खेत
दुर्मतिः ।	२.	कुबुद्धि मनुष्यों के	वसूनि	९.	धन को
			च ॥	८.	एवम्

श्लोकार्थ—क्योंकि कुबुद्धि मनुष्यों के अज्ञान-वश नाशवान् शरीर के और बन्धु-बान्धवों के घर, खेत एवम् धन को नित्य मानता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

जन्तुर्वै भव एतस्मिन् यां यां योनिमनुव्रजेत् ।
तस्यां तस्यां स लभते निर्वृतिं न विरज्यते ॥४॥

पदच्छेद—

जन्तुः वै भव एतस्मिन् याम्-याम् योनिम् अनुव्रजेत् ।
तस्याम् तस्याम् सः लभते निर्वृतिम् न विरज्यते ॥

शब्दार्थ—

जन्तुः	१.	जीव	तस्याम्	८.	उसी
वै	१२.	अतः उससे	तस्याम्	९.	उसी योनि में
भव	३.	संसार में	सः	७.	वह
एतस्मिन्	२.	इस	लभते	११.	अनुभव करने लगता है
याम्-याम्	४.	जिस-जिस	निर्वृतिम्	१०.	सुख का
योनिम्	५.	योनि को	न	१३.	नहीं
अनुव्रजेत् ।	६.	प्राप्त करता है	विरज्यते ॥	१४.	विरत होता है

श्लोकार्थ—जीव इस संसार में जिस-जिस योनि को प्राप्त करता है। वह उसी-उसी योनि में सुख का अनुभव करने लगता है। अतः उससे विरत नहीं होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

नरकस्थोऽपि देहं वै न पुमांस्त्यक्तुमिच्छति ।
नारक्यां निर्वृतौ सत्यां देवमायाविमोहितः ॥५॥

पदच्छेद—

नरकस्थः अपि देहम् वै न पुमान् त्यक्तुम् इच्छति ।
नारक्याम् निर्वृतौ सत्याम् देवमाया विमोहितः ॥

शब्दार्थ—

नरकस्थः	४.	नरक में रहने पर	इच्छति ।	१४.	चाहता है
अपि	५.	भी	नारक्याम्	६.	नारकीय योनि में
देहम्	६.	उस शरीर को	निर्वृतौ	७.	सुख का
वै	१०.	भी	सत्याम्	८.	अनुभव करने के कारण
न	११.	नहीं	देवमाया	१.	भगवान् की माया से
पुमान्	३.	मनुष्य	विमोहितः ॥	२.	मोहित हुआ
त्यक्तुम्	१२.	छोड़ना			

श्लोकार्थ—भगवान् की माया से मोहित हुआ मनुष्य नरक में रहने पर भी नारकीय योनि में सुख का अनुभव करने के कारण उस शरीर को भी छोड़ना नहीं चाहता है ॥

षष्ठः श्लोकः

आत्मजायासुतागारपशुद्रविणबन्धुषु ।
निरूढमूलहृदय आत्मानं बहु मन्यते ॥६॥

पदच्छेद—

आत्म जाया सुत आगार पशु द्रविण बन्धुषु ।
निरूढ मूल हृदयः आत्मानम् बहु मन्यते ॥

शब्दार्थ—

आत्म	१.	शरीर	निरूढ	१०.	आसक्त करके (वह)
जाया	२.	स्त्री	मूल	९.	अत्यन्त
सुत	३.	पुत्र	हृदयः	८.	मन को
आगार	४.	घर	आत्मानम्	११.	अपने को
पशु	५.	पशु	बहु	१२.	भाग्यशाली
द्रविण	६.	धन (और)	मन्यते ॥	१३.	मानता है
बन्धुषु ।	७.	बन्धु-बान्धवों में			

श्लोकार्थ—शरीर, स्त्री, पुत्र, घर, पशु, धन, और बन्धु-बान्धवों में मन को अत्यन्त आसक्त करके वह अपने को भाग्यशाली मानता है ॥

सप्तमः श्लोकः

सन्दह्यमानसर्वाङ्ग एषामुद्वहनाधिना ।
करोत्यविरतं मूढो दुरितानि दुराशयः ॥७॥

पदच्छेद—

सन्दह्यमान सर्व अङ्ग एषाम् उद्वहन आधिना ।
करोति अविरतम् मूढः दुरितानि दुराशयः ॥

शब्दार्थ—

सन्दह्यमान	६.	जलते रहते हैं (अतः)	**करोति**	११.	करता है
सर्व	४.	उसके सारे	**अविरतम्**	९.	निरन्तर
अङ्ग	५.	अङ्ग	**मूढः**	८.	मूर्ख
एषाम्	१.	इन कुटुम्बियों के	**दुरितानि**	१०.	अनेक प्रकार का पाप
उद्वहन	२.	पालन-पोषण की	**दुराशयः ॥**	७.	दूषित हृदय (वह)
आधिना ।	३.	चिन्ता से			

श्लोकार्थ— इन कुटम्बियों के पालन-पोषण की चिन्ता से उसके सारे अङ्ग जलते रहते हैं । अतः दूषित हृदय वह मूर्ख निरन्तर अनेक प्रकार का पाप करता है ॥

अष्टमः श्लोकः

आक्षिप्तात्मेन्द्रियः स्त्रीणामसतीनां च मायया ।
रहोरचितयाऽऽलापैः शिशूनां कलभाषिणाम् ॥८॥

पदच्छेद—

आक्षिप्ता आत्म इन्द्रियः स्त्रीणाम् असतीनाम् च मायया ।
रहः रचितया आलापैः शिशूनाम् कलभाषिणाम् ॥

शब्दार्थ—

आक्षिप्ता	१२.	फंस जाती है	**मायया**	५.	माया में
आत्म	१०.	मन (और)	**रहः**	३.	एकान्त में
इन्द्रियः	११.	इन्द्रियाँ	**रचितया**	४.	फैलाई गई
स्त्रीणाम्	२.	स्त्रियों की	**आलापैः**	९.	बातों में (उनका)
असतीनाम्	१.	कुलटा	**शिशूनाम्**	८.	बालकों की
च	६.	और	**कलभाषिणाम् ॥**	७.	मधुर बोलने वाले

श्लोकार्थ—कुलटा स्त्रियों की एकान्त में फैलाई गई माया में और मधुर बोलने वाले बालकों की बातों में उनका मन और इन्द्रियां फंस जाती है ।

नवमः श्लोकः

गृहेषु कूटधर्मेषु दुःखतन्त्रेष्वतन्द्रितः ।
कुर्वन्दुःखप्रतीकारं सुखवन्मन्यते गृही ॥९॥

पदच्छेद—

गृहेषु कूट धर्मेषु दुःख तन्त्रेषु अतन्द्रितः ।
कुर्वन् दुःख प्रतीकारम् सुखवत् मन्यते गृही ॥

शब्दार्थ—

गृहेषु	२.	घर के	कुर्वन्	१०.	करता हुआ (कुछ)
कूट	५.	कपट पूर्ण	दुःख	८.	दुःख का
धर्मेषु	६.	कर्मों में	प्रतीकारम्	९.	निवारण
दुःख	३.	दुःख	सुखवत्	११.	सुख का
तन्त्रेषु	४.	प्रधान (और)	मन्यते	१२.	अनुभव करता है
अतन्द्रितः ।	७.	आलस्य रहित होकर	गृही ॥	१.	वह गृहस्थ

श्लोकार्थ—वह गृहस्थ घर के दुःख-प्रधान और कपट पूर्ण कर्मों में आलस्य रहित होकर दुःख का निवारण करता हुआ कुछ सुख का अनुभव करता है ॥

दशमः श्लोकः

अर्थैरापादितैर्गुर्व्या हिंसयेतस्ततश्च तान् ।
पुष्णाति येषां पोषेण शेषभुग्यात्यधः स्वयम् ॥१०॥

पदच्छेद—

अर्थैः आपादितैः गुर्व्या हिंसया इतः ततः च तान् ।
पुष्णाति येषाम् पोषेण शेषभुक् याति अधः स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

अर्थैः	६.	धन से	पुष्णाति	९.	पालन-पोषण करता है
आपादितैः	५.	संचित	येषाम्	१०.	जिनके
गुर्व्या	३.	भयंकर	पोषेण	११.	पालन-पोषण में (उनसे)
हिंसया	४.	हिंसा के द्वारा	शेषभुक्	१२.	बचा अन्न खाता है (और)
इतः	१.	यहाँ	याति	१५.	जाता है
ततः	२.	वहाँ	अधः	१४.	अधो गति में
च	७.	वह	स्वयम् ॥	१३.	अपने आप
तान् ।	८.	उन लोगों का			

श्लोकार्थ—यहाँ-वहाँ भयंकर हिंसा के द्वारा संचित धन से वह उन लोगों का पालन-पोषण करता है जिनके पालन-पोषण में उनसे बचा अन्न खाता है और अपने आप अधोगति में जाता है ॥

एकादशः श्लोकः

वार्तायां लुप्यमानायामारब्धायां पुनः पुनः ।
लोभाभिभूतो निःसत्त्वः परार्थे कुरुते स्पृहाम् ॥११॥

पदच्छेद—

वार्तायाम् लुप्यमानायाम् आरब्धायाम् पुनः पुनः ।
लोभ अभिभूतः निः सत्त्वः परार्थे कुरुते स्पृहाम् ॥

शब्दार्थ—

वार्तायाम्	४.	जीविका	**लोभ**	६.	लोभ के
लुप्यमानायाम्	५.	न मिलने पर (वह)	**अभिभूतः**	७	वश में
आरब्धायाम्	३.	प्रयत्न करने पर भी	**निः सत्त्वः**	८.	अधीर होकर
पुनः	१.	बार	**परार्थे**	९.	दूसरे के धन की
पुनः ।	२.	बार	**कुरुते**	११.	करता है
			स्पृहाम् ॥	१०.	लालच

श्लोकार्थ—बार-बार प्रयत्न करने पर भी जीविका न मिलने पर वह लोभ के वश में अधीर होकर दूसरे के धन की लालच करता है ॥

द्वादशः श्लोकः

कुटुम्बभरणाकल्पो मन्दभाग्यो वृथोद्यमः ।
श्रिया विहीनः कृपणो ध्यायञ्छ्वसिति मूढधीः ॥१२॥

पदच्छेद—

कुटुम्ब भरण अकल्पः मन्दभाग्यः वृथा उद्यमः ।
श्रिया विहीनः कृपणः ध्यायन् श्वसिति मूढधीः ॥

शब्दार्थ—

कुटुम्ब	१.	परिवार के	**श्रिया**	७.	धन से
भरण	२.	पालन-पोषण में	**विहीनः**	८.	हीन होकर (वह)
अकल्पः	३.	असमर्थ	**कृपणः**	१०.	दीन
मन्दभाग्यः	४.	(इस) अभागे का	**ध्यायन्**	११.	सोचता रहता है (तथा)
वृथा	६.	व्यर्थ हो जाता है	**श्वसिति**	१२.	लम्बी-लम्बी सांसे लेता है
उद्यमः ।	५.	प्रयत्न	**मूढधीः ॥**	९.	मूर्ख (और)

श्लोकार्थ—परिवार के पालन-पोषण में असमर्थ उस अभागे का प्रयत्न व्यर्थ हो जाता है । धन से हीन होकर वह मूर्ख और दीन सोचता रहता है तथा लम्बी-लम्बी साँसें लेता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

एवं स्वभरणाकल्पं तत्कलत्रादयस्तथा ।
नाद्रियन्ते यथा पूर्वं कीनाश इव गोजरम् ॥१३॥

पदच्छेद—

एवम् स्व भरण अकल्पम् तत् कलत्र आदयः तथा ।
न आद्रियन्ते यथा पूर्वम् कीनाश इव गो जरम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	न	११.	नहीं
स्व	२.	अपने	आद्रियन्ते	१२.	आदर करते हैं
भरण	३.	पालन-पोषण में	यथा	१०.	जैसा
अकल्पम्	४.	असमर्थ (उस व्यक्ति का)	पूर्वम्	९.	पहले
तत्	५.	उसके	कीनाश	१४.	कृपण किसान
कलत्र	६.	स्त्री, पुत्र	इव	१३.	जैसे
आदयः	७.	इत्यादि	गो	१६.	बैल की (उपेक्षा करते हैं)
तथा ।	८.	उसी प्रकार	जरम्॥	१५.	बुड्ढे

श्लोकार्थ——इस प्रकार अपने पालन-पोषण में असमर्थ उस व्यक्ति का उसके स्त्री-पुत्र इत्यादि, उसी प्रकार पहले जैसा आदर नहीं करते हैं । जैसे कृपण किसान बुड्ढे बैल की उपेक्षा करता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तत्राप्यजातनिर्वेदो भ्रियमाणः स्वयम्भृतैः ।
जरयोपात्तवैरूप्यो मरणाभिमुखो गृहे ॥१४॥

पदच्छेद—

तत्रापि अजात निर्वेदः भ्रियमाणः स्वयम् भृतैः ।
जरया उपात्त वैरूप्यः मरण अभिमुखः गृहे ॥

शब्दार्थ—

तत्रापि	१.	फिर भी (उसे)	जरया	७.	बुढ़ापे से (वह)
अजात	३.	नहीं होता है (अपितु)	उपात्त	९.	हो जाता है (और)
निर्वेदः	२.	वैराग्य	वैरूप्यः	८.	कुरूप
भ्रियमाणः	६.	(उसका) पालन करते हैं	मरण	११.	मरण
स्वयम्	४.	अपने आप	अभिमुखः	१२.	आसन्न (पड़ा रहता है)
भृतैः ।	५.	जिनका पालन करता था (वे लोग)	गृहे ॥	१०.	घर में

श्लोकार्थ——फिर भी उसे वैराग्य नहीं होता है, अपितु अपने आप जिनका पालन करता था, वे लोग उसका पालन करते हैं । बुढ़ापे से वह कुरूप हो जाता है, और घर में मरण-आसन्न पड़ा रहता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

आस्तेऽवमत्योपन्यस्तं गृहपाल इवाहरन् ।
आमयाव्यप्रदीप्ताग्निरल्पाहारोऽपचेष्टितः ॥१५॥

पदच्छेद—

आस्ते अवमत्या उपन्यस्तम् गृहपालः इव आहरन् ।
आमयावी अप्रदीप्त अग्निः अल्प आहारः अल्प चेष्टितः ॥

शब्दार्थ—

आस्ते	१२.	पड़ा रहता है	आमयावी	१.	(उसका शरीर) रोगी (और)
अवमत्या	९.	अपमान के साथ	अप्रदीप्त	३.	मन्द हो जाने से वह
उपन्यस्तम्	१०.	टुकड़े	अग्निः	२.	जठराग्नि
गृहपालः	७.	कुत्ते के	अल्प	४.	थोड़ा
इव	८.	समान	आहारः	५.	भोजन (और)
आहरन् ।	११.	खाकर	अल्प, चेष्टितः	६.	कम काम करता है (तथा)

श्लोकार्थ—उसका शरीर रोगी और जठराग्नि मन्द हो जाने से वह थोड़ा भोजन और कम काम करता है तथा कुत्ते के समान अपमान के साथ टुकड़े खाकर पड़ा रहता है ॥

षोडशः श्लोकः

वायुनोत्क्रमतोत्तारः कफसंरुद्धनाडिकः ।
कासश्वासकृतायासः कण्ठे घुरघुरायते ॥१६॥

पदच्छेद—

वायुना उत्क्रमता उत्तारः कफ संरुद्ध नाडिकः ।
कास श्वास कृत आयासः कण्ठे घुरघुरायते ॥

शब्दार्थ—

वायुना	२.	वायु से (उसकी)	कास	७.	खांसने (और)
उत्क्रमता	१.	उठती	श्वास	८.	साँस लेने में
उत्तारः	३.	पुतलियाँ चढ़ जाती हैं	कृत	१०.	होता है (और)
कफ	५.	कफ	आयासः	९.	कष्ट
संरुद्ध	६.	जम जाता है	कण्ठे	११.	गले में
नाडिकः ।	४.	नाड़ियों में	घुरघुरायते ॥	१२.	घर-घराहट की आवाज़ होती है ।

श्लोकार्थ—उठती वायु से उसकी पुतलियाँ चढ़ जाती हैं नाड़ियों में कफ जम जाता है । खांसने और सांस लेने में कष्ट होता और गले में घर-घराहट की आवाज होती है ॥

सप्तदशः श्लोकः

शयानः परिशोचद्भिः परिवीतः स्वबन्धुभिः ।
वाच्यमानोऽपि न ब्रूते कालपाशवशं गतः ॥१७॥

पदच्छेद—

शयानः परिशोचद्भिः परिवीतः स्वबन्धुभिः ।
वाच्यमानः अपि न ब्रूते कालपाश वशम् गतः ॥

शब्दार्थ—

शयानः	४. पड़ा हुआ (वह)	**अपि**	६. भी
परिशोचद्भिः	१. शोक करते हुये	**नब्रूते**	१०. नहीं बोलता है
परिवीतः	३. बीच में	**कालपाश**	७. मृत्यु के
स्वबन्धुभिः ।	२. अपने-बन्धुओं के	**वशम्**	८. वश में
वाच्यमानः	५. बुलाये जाने पर	**गतः ॥**	९. होने से

श्लोकार्थ—शोक करते हुये अपने-बन्धुओं के बीच में पड़ा हुआ वह बुलाये जाने पर भी मृत्यु के वश में होने से नहीं बोलता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

एवं कुटुम्बभरणे व्यापृतात्माजितेन्द्रियः ।
म्रियते रुदतां स्वानामुरुवेदनयास्तधीः ॥१८॥

पदच्छेद—

एवम् कुटुम्ब भरणे व्यापृत आत्मा अजित इन्द्रियः ।
म्रियते रुदताम् स्वानाम् उरु वेदनया अस्त धीः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	**म्रियते**	१४. मृत्यु को प्राप्त (हो जाता है)
कुटुम्ब	२. परिवार के	**रुदताम्**	१०. रोते हुये
भरणे	३. पालन-पोषण में	**स्वानाम्**	११. अपने बन्धुओं के बीच
व्यापृत	४. आसक्त	**उरु**	१२. भयंकर
आत्मा	७. चित्त	**वेदनया**	१३. पीड़ा से
अजित	७. वश में न कर सकने वाला	**अस्त**	८. (वह) मूढ
इन्द्रियः ।	६. इन्द्रियों को	**धीः ॥**	९. बुद्धि

श्लोकार्थ—इस प्रकार परिवार के पालन-पोषण में आसक्त चित्त इन्द्रियों को वश में न कर सकने वाला वह मूढ बुद्धि रोते हुये अपने बन्धुओं के बीच भयंकर पीड़ा से मृत्यु को प्राप्त हो जाता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यमदूतौ तदा प्राप्तौ भीमौ सरभसेक्षणौ ।
स दृष्ट्वा त्रस्तहृदयः शकृन्मूत्रं विमुञ्चति ॥१९॥

पदच्छेद—

यम दूतौ तदा प्राप्तौ भीमौ सरभस ईक्षणौ ।
सः दृष्ट्वा त्रस्ता हृदयः शकृत् मूत्रम् विमुञ्चति ॥

शब्दार्थ—

यम	२.	यम राज के	सः	८.	वह
दूतौ	६.	दो दूत	दृष्ट्वा	९.	(उन्हें) देखकर
तदा	१.	उस समय	त्रस्ता	११.	भयभीत होता हुआ
प्राप्तौ	७.	आते हैं	हृदयः	१०.	मन से
भीमौ	५.	भयंकर	शकृत्	११.	मल
सरभस	३.	क्रोध से लाल-लाल	मूत्रम्	१२.	मूत्र
ईक्षणौ ।	४.	आँखों वाले	विमुञ्चति ।	१३.	करने लगता है

श्लोकार्थ—उस समय यमराज के क्रोध से लाल-लाल आँखों वाले भयंकर दो दूत आते हैं वह उन्हें देखकर मन में भयभीत होता हुआ मल-मूत्र करने लगता है ॥

विंशः श्लोकः

यातनादेह आवृत्य पाशैर्बद्ध्वा गले बलात् ।
नयतो दीर्घमध्वानं दण्ड्यं राजभटा यथा ॥२०॥

पदच्छेद—

यातना देहे आवृत्य पाशैः बद्ध्वा गले बलात् ।
नयतः दीर्घम् अध्वानम् दण्डचम् राजभटाः यथा ॥

शब्दार्थ—

यातना	४.	(उसी प्रकार वे उसे)	नयतः	१३.	ले जाते है
देहे	५.	शरीर में	दीर्घम्	१०.	लम्बे
आवृत्य	६.	डालकर (और)	अध्वानम्	११.	यमलोक के मार्ग में
पाशैः	८.	फन्दा	दण्डचम्	३.	अपराधी को (ले जाता है)
बद्ध्वा	९.	बाँधकर	राजभटाः	२.	सिपाही
गले	७.	बल पूर्वक	यथा ॥	१.	जैसे
बलात् ।	१२.	बल पूर्वक			

श्लोकार्थ—जैसे सिपाही अपराधी को ले जाता है । उसी प्रकार वे लोग उसे यातना शरीर में डालकर और गले में फन्दा बाँधकर यमलोक के लम्बे मार्ग में बल पूर्वक ले जाते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

तयोर्निर्भिन्नहृदयस्तर्जनैर्जातवेपथुः ।
पथि श्वभिर्भक्ष्यमाण आर्तोऽघं स्वमनुस्मरन् ॥२१॥

पदच्छेद—

तयोः निर्भिन्न हृदयः तर्जनैः जात वेपथुः ।
पथिः श्वभिः भक्ष्यमाणः आर्तः अघम् स्वम् अनुस्मरन् ॥

शब्दार्थ—

तयोः	१. उन दोनों की	पथि श्वभिः	७. मार्ग में कुत्ते
निर्भिन्न	४. फटने लगता है	भक्ष्यमाणः	८. नोचते हैं (और वह)
हृदयः	३. उसका हृदय	आर्तः	१२. दुःखी हो जाता है
तर्जनैः	२. फटकार से	अघम्	१०. पापों का
जात	६. होने लगता है	स्वम्	९. अपने
वेपथुः ।	५. शरीर में कम्पन	अनुस्मरन् ॥	११. स्मरण करके

श्लोकार्थ—उन दोनों की फटकार से उसका हृदय फटने लगता है। शरीर में कम्पन होने लगता है। मार्ग में कुत्ते नोचते हैं। और वह अपने पापों का स्मरण करके दुःखी हो जाता है॥

द्वाविंशः श्लोकः

क्षुत्तृट्परीतोऽर्कदवानलानिलैः सन्तप्यमानः पथि तप्तबालुके ।
कृच्छ्रेण पृष्ठे कशया च ताडितश्चलत्यशक्तोऽपि निराश्रमोदके ॥२२॥

पदच्छेद—

क्षुत् तृट् परीतः अर्क दवानल अनिलैः सन्तप्यमानः पथि तप्त बालुके ।
कृच्छ्रेण पृष्ठे कशया च ताडितः चलति अशक्तः अपि निराश्रम उदके ॥

शब्दार्थ—

क्षुत्, तृट्	६. भूख (और) प्यास से	कृच्छ्रेण	१५. बड़े कष्ट से
परीतः अर्क	७. बेचैन (वह) धूप	पृष्ठे, कशया	१२. पीठ पर, कोड़े से
दवानल	८. दावानल (और)	च	१४. और (वह)
अनिलैः	९. लू से	ताडितः	१३. मारते हैं
सन्तप्यमानः	१०. तपता है	चलति	१६. चलता है
पथि	५. मार्ग में	अशक्तः, अपि	११. चलने में असमर्थ होने पर, भी (उसे यमदूत)
तप्त	३. तपी	निराश्रम	१. विश्राम स्थान (और)
बालुके ।	४. रेती वाले	उदके ॥	२. जल से रहित

श्लोकार्थ—विश्राम स्थान और जल से रहित तपी रेती वाले मार्ग में भूख और प्यास से बेचैन वह धूप, दावानल और लू से तपता है। चलने में असमर्थ होने पर भी उसे यमदूत पीठ पर कोड़े से मारते हैं। और वह बड़े कष्ट से चलता है॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तत्र तत्र पतञ्छ्रान्तो मूर्च्छितः पुनरुत्थितः ।
पथा पापीयसा नीतस्तरसा यमसादनम् ॥२३॥

पदच्छेद—

तत्र तत्र पतन् श्रान्तः मूर्च्छितः पुनः उत्थितः ।
पथा पापीयसा नीतः तरसा यम सादनम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र-तत्र	१.	वह जहाँ-तहाँ	पथा	८.	मार्ग से
पतन्	४.	गिरता है (और)	पापीयसा	७.	कष्ट दायक
श्रान्तः	२.	थक कर (एवं)	नीतः	१२.	ले जाया जाता है
मूर्च्छितः	३.	मूर्च्छित होकर	तरसा	११.	बड़े वेग से
पुनः	५.	फिर से	यम	९.	यम के
उत्थितः ।	६.	उठता है (इस प्रकार)	सादनम् ॥	१०.	लोक को

श्लोकार्थ—वह जहाँ-तहाँ थक कर एवं मूर्छित होकर गिरता है और फिर से उठता है। इस प्रकार कष्ट दायक मार्ग से यम के लोक को ले जाया जाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

योजनानां सहस्राणि नवतिं नव चाध्वनः ।
त्रिभिर्मुहूर्तैर्द्वाभ्यां वा नीतः प्राप्नोति यातनाः ॥२४॥

पदच्छेद—

योजनानाम् सहस्राणि नवतिम् नव च अध्वनः ।
त्रिभिः मुहूर्तैः द्वाभ्याम् वा नीतः प्राप्नोति यातनाः ॥

शब्दार्थ—

योजनानाम्	४.	योजन	त्रिभिः मुहूर्तैः	७.	तीन, मुहूर्त में
सहस्राणि	३.	हज़ार	द्वाभ्याम्, वा	६.	दो, अथवा
नवतिम् नव	२.	निन्यानवे	नीतः	८.	पार कराते हैं (और वह)
च	१.	यमदूत उससे	प्राप्नोति	१०.	यम पुरी में पहुँचता है
अध्वनः ।	५.	मार्ग को	यातनाः ॥	९.	यातना भोग के लिये

श्लोकार्थ—यमदूत उससे निन्यानवे हज़ार योजन मार्ग को दो, अथवा तीन मुहूर्त में पार कराते हैं। और वह यातना भोग के लिये यम पुरी में पहुँचता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

आदीपनं स्वगात्राणां वेष्टयित्वोल्मुकादिभिः ।
आत्ममांसादनं क्वापि स्वकृत्तं परतोऽपि ॥२५॥

पदच्छेद—

आदीपनम् स्व गात्राणाम् वेष्टयित्वा उल्मुक आदिभिः ।
आत्म मांस अदनम् क्वापि स्व कृत्तम् परतः अपि वा ॥

शब्दार्थ—

आदीपनम्	६. जलाते हैं (और वह)	आत्म	१२. अपने शरीर के
स्व	४. उसके	मांस अदनम्	१३. मांस को, खाता है
गात्राणाम्	५. शरीर को	क्वापि	७. कहीं
वेष्टयित्वा	३. डाल कर	स्व	८. स्वयम्
उल्मुक	१. जलती लकड़ी	कृत्तम्	११. काटे गये
आदिभिः ।	२. इत्यादि के (बीच में)	परतः अपि	१०. दूसरे से, भी
		वा ॥	९. अथवा

श्लोकार्थं—जलती लकड़ी इत्यादि के बीच में डाल कर उसके शरीर को जलाते हैं, और वह कहीं स्वयम् अथवा दूसरे से काटे गये अपने शरीर के मांस को खाता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

जीवतश्चान्त्राभ्युद्धारः श्वगृध्रैर्यमसादने ।
सर्पवृश्चिकदंशाद्यैर्दशद्भिश्चात्मवैशसम् ॥२६॥

पदच्छेद—

जीवतः च अन्त्र अभ्युद्धारः श्वगृध्रैः यम सादने ।
सर्प वृश्चिक दंश आद्यैः दशद्भिः च आत्म वैशसम् ॥

शब्दार्थ—

जीवतः	३. जीते जी (उसकी)	सर्प, वृश्चिक	८. सांप, बिच्छू
च	६. और	दंशः आद्यैः	९. डांस, इत्यादि जीव
अन्त्र	४. अंतड़ियों को	दशद्भिः	७. डंक मारने वाले
अभ्युद्धारः	५. खींचते हैं	च	१०. उसके
श्वगृध्रैः	२. कुत्ते और गोध	आत्म	११. शरीर को
यम सादने ।	१. यम पुरी में	वैशसम् ॥	१२. पीड़ा पहुँचाते हैं

श्लोकार्थ—यम पुरी में जीते जी उसकी अंतड़ियों को खींचते हैं, और डंक मारने वाले सांप, बिच्छू, डांस इत्यादि जीव उसके शरीर को पीड़ा पहुँचाते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कृन्तनं चावयवशो गजादिभ्यो भिदापनम् ।
पातनं गिरिशृङ्गेभ्यो रोधनं चाम्बुगर्तयोः ॥२७॥

पदच्छेद—

कृन्तनम् च अवयवशः गज आदिभ्यः भिदापनम् ।
पालनम् गिरिश्रृङ्गेभ्यः रोधनम् च अम्बु गर्तयोः ॥

शब्दार्थ—

कृन्तनम्	२.	काटा जाता है	पालनम्	८.	गिराया जाता है
च	३.	तथा (उसे)	गिरिश्रृङ्गेभ्यः	७.	उसे पर्वत की चोटी से
अवयवशः	१.	उसके एक-एक अङ्ग को	रोधनम्	१२.	बन्द कर दिया जाता है
गज	४.	हाथी	च	९.	और
आदिभ्यः	५.	इत्यादि से	अम्बु	१०.	जल या
भिदापनम् ।	६.	चिरवाया जाता है	गर्तयोः ॥	११.	गड्ढे में

श्लोकार्थ—उसके एक-एक अङ्ग को काटा जाता है। तथा उसे हाथी इत्यादि से चिरवाया जाता है। उसे पर्वत की चोटी से गिराया जाता है। और जल या गड्ढे में बन्द कर दिया जाता है।

अष्टविंशः श्लोकः

यास्तामिस्रान्धतामिस्रा रौरवाद्याश्च यातनाः ।
भुङ्क्ते नरो वा नारी वा मिथः सङ्गेन निर्मिताः ॥२८॥

पदच्छेद—

याः तामिस्र अन्धतामिस्राः रौरव आद्याः च यातनाः ।
भुङ्क्ते नरः वा नारी वा मिथः, सङ्गेन निर्मिताः ॥

शब्दार्थ—

याः	६.	जो	भुङ्क्ते	१५.	भोगना पड़ता है
तामिस्र	१.	तामिस्र	नरः	११.	पुरुष हो
अन्धतामिस्राः	२.	अन्धतामिस्र	वा	१२.	या
रौरव	४.	रौरव	नारी	१३.	स्त्री
आद्याः	५.	इत्यादि नरक की	वा	१४.	उन्हें
च	३.	और	मिथः, सङ्गेन	८.	परस्पर, संसर्ग से
यातनाः ।	७.	यातनायें	निर्मिता ॥	१०.	उत्पन्न हैं ।

श्लोकार्थ—तामिस्र, अन्धतामिस्र और रौरव इत्यादि नरक की जो यातनायें परस्पर संसर्ग से उत्पन्न हैं। पुरुष हो या स्त्री उन्हें भोगना पड़ता है॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

अत्रैव नरकः स्वर्ग इति मातः प्रचक्षते ।
या यातना वै नारक्यस्ता इहाप्युपलक्षिताः ॥२९॥

पदच्छेद—

अत्र एव नरकः स्वर्गः इति मातः प्रचक्षते ।
याः यातना वै नारक्यः ताः इह अपि उपलक्षिताः ॥

शब्दार्थ—

अत्र	२. यहीं	याः	९. जो
एव	३. पर	यातनाः	११. यातनायें हैं
नरकः	४. नरक (और)	वै	८. क्योंकि
स्वर्गः	५. स्वर्ग है	नारक्यः	१०. नारकी
इति	६. ऐसा लोग	ताः	१२. वे
मातः	१. हे मातः जी !	इह, अपि	१३. यहाँ पर भी
प्रचक्षते ।	७. कहते हैं	उपलक्षिताः ॥	१४. देखी जाती हैं

श्लोकार्थ—हे माता जी ! यहीं पर नरक और स्वर्ग है, ऐसा लोग कहते हैं, क्योंकि जो नारकी यातनायें हैं; वे यहाँ पर भी देखी जाती हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

एवं कुटुम्बं बिभ्राण उदरम्भर एव वा ।
विसृज्येहोभयं प्रेत्य भुङ्क्ते तत्फलमीदृशम् ॥३०॥

पदच्छेद—

एवम् कुटुम्बम् बिभ्राणः उदरम्भरः एव वा ।
विसृज्य इह उभयम् प्रेत्य भुङ्क्ते तत् फलम् ईदृशम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	विसृज्य	९. छोड़कर
कुटुम्बम्	२. परिवार को	इह	७. इस संसार में
बिभ्राणः	३. पालन-पोषण करने वाला	उभयम्	८. कुटुम्ब और शरीर दोनों को
उदरम्भरः	६. पेट भरने वाला (मनुष्य)	प्रेत्य	१०. परलोक में जाने पर
एव	५. केवल (अपना ही)	भुङ्क्ते	१३. भोगता है
वा ।	४. अथवा	तत्, फलम्	१२. पाप के, फल को
		ईदृशम् ॥	११. इस प्रकार

श्लोकार्थ—इस प्रकार परिवार का पालन-पोषण करने वाला अथवा केवल अपना ही पेट भरने वाला मनुष्य इस संसार में कुटुम्ब और शरीर दोनों को छोड़ कर परलोक में जाने पर इस प्रकार पाप के फल को भोगता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एकः प्रपद्यते ध्वान्तं हित्वेदं स्वकलेवरम् ।
कुशलेतरपाथेयो भूतद्रोहेण यद् भृतम् ॥३१॥

पदच्छेद—

एकः प्रपद्यते ध्वान्तम् हित्वा इदम् स्व कलेवरम् ।
कुशल इतर पाथेयः भूत द्रोहेण यद् भृतम् ॥

शब्दार्थ—

एकः	१२.	अकेले ही	कुशल	९.	पुण्य (से भिन्न)
प्रपद्यते	१४.	पहुँचता है	इतर	१०.	पाप कर्म को
ध्वान्तम्	१३.	नरक में	पाथेयः	११.	साथ लेकर (वह)
हित्वा	४.	छोड़कर	भूत	५.	प्राणियों के
इदम्	२.	इस	द्रोहेण	६.	वैर से
स्व	१.	अपने	यद्	७.	जो
कलेवरम् ।	३.	शरीर को (यहीं)	भृतम् ॥	८.	एकत्रित है (उस)

श्लोकार्थ—अपने इस शरीर को यहीं छोड़कर प्राणियों के वैर से जो एकत्रित है; उस पाप कर्म को साथ लेकर वह अकेला ही नरक में पहुँचता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

दैवेनासादितं तस्य शमलं निरये पुमान् ।
भुङ्क्ते कुटुम्बपोषस्य हृतवित्त इवातुरः ॥३२॥

पदच्छेद—

दैवेन आसादितम् तस्य शमलम् निरये पुमान् ।
भुङ्क्ते कुटुम्ब पोषस्य हृतवित्तः इव आतुरः ॥

शब्दार्थ—

दैवेन	१.	भाग्य से	भुङ्क्ते	९.	भोगता है (और)
आसादितम्	२.	प्राप्त	कुटुम्ब	३.	परिवार
तस्य	५.	उस	पोषस्य	४.	पालन के
शमलम्	६.	पाप के फल को	हृतवित्तः	१०.	जिसका सर्वस्य चुरा लिया गया है (उसके)
निरये	८.	नरक में	इव	११.	समान
पुमान् ।	७.	मनुष्य	आतुरः	१२.	व्याकुल (होता है)

श्लोकार्थ—भाग्य से प्राप्त परिवार पालन के उस पाप के फल को मनुष्य नरक में भोगता है । और जिसका सर्वस्व चुरा लिया गया है, उसके समान व्याकुल होता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

केवलेन ह्यधर्मेण कुटुम्बभरणोत्सुकः।
याति जीवोऽन्धतामिस्रं चरमं तमसः पदम् ॥३३॥

पदच्छेद—

केवलेन हि अधर्मेण कुटुम्ब भरण उत्सुकः।
याति जीवः अन्धतामिस्रम् चरमम् तमसः पदम् ॥

शब्दार्थ—

केवलेन	१. जो केवल	याति	६. जाता है (जिसका)
हि	६. (अपने) ही	जीवः	५. वह मनुष्य
अधर्मेण	७. पाप से	अन्धतामिस्रम्	८. अन्धतामिस्र नरक में
कुटुम्ब	२. परिवार के	चरमम्	११. अन्तिम
भरण	३. पालन-पोषण में (ही)	तमसः	१०. नरकों में
उत्सुकः।	४. लगा रहता है	पदम् ॥	१२. स्थान है

श्लोकार्थ—जो केवल परिवार के पालन-पोषण में ही लगा रहता है; वह मनुष्य अपने ही पाप से अन्तामिस्र नरक में जाता है, जिसका नरकों में अन्तिम स्थान है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अधस्तान्नरलोकस्य यावतीर्यातनादयः।
क्रमशः समनुक्रम्य पुनरत्राव्रजेच्छुचिः ॥३४॥

पदच्छेद—

अधस्तात् नरलोकस्य यावतीः यातना आदयः।
क्रमशः समनुक्रम्य पुनः अत्र आव्रजेत् शुचिः ॥

शब्दार्थ—

अधस्तात्	२. पहले	क्रमशः	६. (उनको) क्रम से
नरलोकस्य	१. मनुष्य योनि मिलने के	समनुक्रम्य	७. भोग कर
यावतीः	३. जितनी	पुनः	९. फिर से
यातना	४. यातनायें (और)	अत्र	१०. इस मनुष्य योनि को
आदयः।	५. शूकरादि योनियों के कष्ट हैं	आव्रजेत्	११. प्राप्त करता है
		शुचिः ॥	८. पवित्र होकर (वह जीव)

श्लोकार्थ—मनुष्य योनि मिलने के पहले जितनी यातनायें और शूकरादि योनियों के कष्ट हैं उनको क्रम से भोगकर पवित्र होकर वह जीव फिर से इस मनुष्य योनि को प्राप्त करता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपाख्याने कर्मविपाको नाम त्रिंशः अध्यायः समाप्तः ॥३०॥

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

एकत्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—कर्मणा दैवनेत्रेण जन्तुर्देहोपपत्तये ।
स्त्रियाः प्रविष्ट उदरं पुंसो रेतःकणाश्रयः ॥१॥

पदच्छेद—

कर्मणा दैव नेत्रेणा जन्तुः देह उपपत्तये ।
स्त्रियाः प्रविष्टः उदरम् पुंसः रेतः कण आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

कर्मणा	४.	पूर्व जन्म के कर्मानुसार	स्त्रियाः	१०.	स्त्री के
दैव	२.	भगवान् की	प्रविष्टः	१२.	प्रवेश करता है
नेत्रेण	३.	प्रेरणा से (अपने)	उदरम्	११.	गर्भ में
जन्तुः	१.	जीव	पुंसः	७.	पुरुष के
देह	५.	मनुष्य शरीर	रेतः कण	८.	वीर्य के कण के
उपपत्तये ।	६.	पाने के लिये	आश्रयः ॥	९.	सहारे

श्लोकार्थ—जीव भगवान् की प्रेरणा से अपने पूर्व जन्म के कर्मानुसार मनुष्य शरीर पाने के लिये पुरुष के वीर्य के सहारे स्त्री के गर्भ में प्रवेश करता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

कललं त्वेकरात्रेण पञ्चरात्रेण बुद्बुदम् ।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेश्यण्डं वा ततः परम् ॥२॥

पदच्छेद—

कललम् तु एक रात्रेण पञ्च रात्रेण बुद्बुदम् ।
दशाहेन तु कर्कन्धूः पेशी अण्डम् वा ततः परम् ।

शब्दार्थ—

कललम्	३.	एकाकार कलल	दशाहेन	८.	(तदनन्तर वह) दस दिन में
तु	४.	तथा	तु	१०.	तथा
एक	१.	एक	कर्कन्धूः	९.	बेर के समान कड़ा
रात्रेण	२.	रात्रि में (वह वीर्य के साथ मिलकर)	पेशी	१२.	मांस पेशी
पञ्च	५.	पांच	अण्डम्	१४.	अण्डाकार हो जाता है
रात्रेण	६.	रात्रि में	वा	१३.	अथवा
बुद्बुदम् ।	७.	बुल-बुले के समान हो जाता है	ततः परम् ॥	११.	उसके बाद

श्लोकार्थ—एक रात्रि में वह वीर्य के साथ मिलकर एकाकार कलल तथा पांच रात्रि में बुल-बुले के समान हो जाता है । तदनन्तर वह दश दिन में बेर के समान कड़ा तथा उसके बाद मांस पेशी अथवा अण्डाकार हो जाता है ॥

तृतीयः श्लोकः

मासेन तु शिरो द्वाभ्यां बाह्वङ्घ्र्याद्यङ्गविग्रहः ।
नखलोमास्थिचर्माणि लिङ्गच्छिद्रोद्भवस्त्रिभिः ॥३॥

पदच्छेद—

मासेन तु शिरो द्वाभ्याम् बाहु अङ्घ्रि आदि अङ्गविग्रहः ।
नख लोम अस्थि चर्माणि लिङ्ग छिद्र उद्भवः त्रिभिः ॥

शब्दार्थ—

मासेन	२.	एक मास में	नख	१०.	नाखून
तु	१	तदनन्तर	लोम	११.	रोम
शिरो	३.	शिर (तथा)	अस्थि	१२.	हड्डी
द्वाभ्याम्	४.	दूसरे महीने	चर्माणि	१३.	चमड़ी
बाहु	५.	हाथ	लिङ्ग	१४.	स्त्री, पुरुष के चिह्न (और)
अङ्घ्रि	६.	पैर	छिद्र	१५.	अन्य छिद्र
आदि	७.	इत्यादि	उद्भवः	१६.	उत्पन्न हो जाते हैं
अङ्गविग्रहः ।	८.	अङ्ग निकल आते हैं	त्रिभिः ॥	९.	तीसरे महीने में

श्लोकार्थ—तदनन्तर एक मास में शिर तथा दूसरे महीने हाथ, पैर इत्यादि अङ्ग निकल आते हैं तीसरे महीने नाखून, रोम, चमड़ा, स्त्री-पुरुष के चिह्न और अन्य छिद्र उत्पन्न हो जाते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

चतुर्भिर्धातवः सप्त पञ्चभिः क्षुत्तृडुद्भवः ।
षड्भिर्जरायुणा वीतः कुक्षौ भ्राम्यति दक्षिणे ॥४॥

पदच्छेद—

चतुर्भिः धातवः सप्त पञ्चभिः क्षुत् तृड् उद्भवः ।
षड्भिः जरायुणा वीतः कुक्षौ भ्राम्यति दक्षिणे ॥

शब्दार्थ—

चतुर्भिः	१.	चौथे मास	षड्भिः	७.	छठवें मास (वह)
धातवः	३.	धातुयें (उत्पन्न हो जाती हैं)	जरायुणा	८.	झिल्ली में
सप्त	२.	रक्त, मांसादि सातों	वीतः	९.	लिपट कर (माँ की)
पञ्चभिः	४.	पांचवें मास	कुक्षौ	११.	कोख में
क्षुत् तृड्	५.	भूख और प्यास	भ्राम्यति	१२.	घूमने लगता है
उद्भवः ।	६.	लगने लगती है	दक्षिणे ॥	१०.	दाहिनी

श्लोकार्थ—चौथे मास रक्त मांसादि सातों धातुयें उत्पन्न हो जाती हैं। पांचवें मास भूख और प्यास लगने लगती है। छठवें मास वह झिल्ली में लिपट कर मां की दाहिनी कोख में घूमने लगता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

मातुर्जग्धान्नपानाद्यैरेधद्धातुरसम्मते ।
शेते विण्मूत्रयोर्गर्ते स जन्तुर्जन्तुसम्भवे ॥५॥

पदच्छेद—

मातुः जग्ध अन्न पान आद्यैः एधत् धातुः असम्मते ।
शेते विष्ट मूत्रयोः गर्ते सः जन्तुः जन्तु सम्भवे ॥

शब्दार्थ—

मातुः	१.	(उस समय) माता के	शेते	१६.	सोया पड़ा रहता है
जग्ध	२.	खाये हुये	विष्ट	१३.	विष्ठा (और)
अन्न	३.	अन्न	मूत्रयोः	१४.	मूत्र के
पान	४.	जल	गर्ते	१५.	गड्ढे में
आद्यैः	५.	इत्यादि से	सः	८.	इस प्रकार वह
एधत्	७.	पुष्ट होती हैं	जन्तुः	९.	जीव
धातुः	६.	उसकी धातुयें	जन्तु	१०.	(जहाँ) कीड़े
असम्मते ।	१२.	घृणित	सम्भवे ॥	११.	उत्पन्न होते हैं (उस)

श्लोकार्थ—उस समय माता के खाये हुये अन्न-जल इत्यादि से उसकी धातुयें पुष्ट होती हैं। इस प्रकार वह जीव जहाँ कीड़े उत्पन्न होते हैं; उस घृणित विष्ठा और मूत्र के गड्ढे में पड़ा रहता है ॥

षष्ठः श्लोकः

कृमिभिः क्षतसर्वाङ्गः सौकुमार्यात्प्रतिक्षणम् ।
मूर्च्छामाप्नोत्युरुक्लेशस्तत्रत्यैः क्षुधितैर्मुहुः ॥६॥

पदच्छेद—

कृमिभिः क्षत सर्व अङ्गः सौकुमार्यात् प्रतिक्षणम् ।
मूर्च्छाम् आप्नोति उरु क्लेशः तत्रत्यैः क्षुधितै र्मुहुः ॥

शब्दार्थ—

कृमिभिः	३.	कीड़े	मूर्च्छाम्	११.	अचेत
क्षत	६.	काटते रहते हैं	आप्नोति	१२.	हो जाता है
सर्व	४.	उसके सारे	उरु क्लेशः	८.	उसे भयंकर पीड़ा होती है (और वह)
अङ्गः	५.	अङ्गों को	तत्रत्यैः	१.	वहाँ के
सौकुमार्यात्	७.	अत्यन्त कोमल होने से	क्षुधितैः	२.	भूखे
प्रतिक्षणम् ।	९.	क्षण-क्षण में	मुहुः ॥	१०.	बार-बार

श्लोकार्थ—वहाँ के भूखे कीड़े उसके सारे अङ्गों को काटते रहते हैं; अत्यन्त कोमल होने से उसे भयंकर पीड़ा होती हैं और वह क्षण-क्षण में बार-बार अचेत हो जाता है ॥

सप्तमः श्लोकः

कटुतीक्ष्णोष्णलवणरूक्षाम्लादिभिरुल्बणैः ।
मातृभुक्तैरुपस्पृष्टः सर्वाङ्गोत्थितवेदनः ॥७॥

पदच्छेद—

कटु तीक्ष्ण उष्ण लवण रूक्ष, अम्ल आदिभिः उल्बणैः ।
मातृ भुक्तैः उपस्पृष्टः सर्व अङ्ग उत्थित वेदनः ॥

शब्दार्थं—

कटु	३.	कड़वे	मातृ	१.	माता के द्वारा
तीक्ष्ण	४.	तीते	भुक्तैः	२.	खाये गये
उष्ण	५.	गर्म	उपस्पृष्टः	१०.	स्पर्श होने पर
लवण	६.	नमकीन	सर्व	११.	(उसके) सारे
रूक्ष, अम्ल	७.	रूखे, खट्टे	अङ्ग	१२.	अङ्गों में
आदिभिः	८.	इत्यादि	उत्थित	१४.	होती है
उल्बणैः ।	९.	उग्र पदार्थों का	वेदनः ॥	१३.	बहुत पीड़ा

श्लोकार्थ—माता के द्वारा खाये गये कड़ुवे, तीते, गर्म, नमकीन, रूखे खट्टे इत्यादि उग्र पदार्थों का स्पर्श होने पर उसके सारे अङ्गों में बहुत पीड़ा होती है ॥

अष्टमः श्लोकः

उल्बेन संवृतस्तस्मिन्नन्त्रैश्च बहिरावृतः ।
आस्ते कृत्वा शिरः कुक्षौ भुग्नपृष्ठशिरोधरः ॥८॥

पदच्छेद—

उल्बेन संवृतः तस्मिन् अन्त्रैः च बहिः आवृतः ।
आस्ते कृत्वा शिरः कुक्षौ भुग्न पृष्ठ शिरोधरः ॥

शब्दार्थ—

उल्बेन	२.	झिल्ली से	आस्ते	१४.	पड़ा रहता है
संवृतः	३.	लिपटा (हुआ वह जीव)	कृत्वा	१०.	कुण्डलाकार करके
तस्मिन्	१.	(माता के) उस गर्भ में	शिरः	८.	सिर को
अन्त्रैः	५.	आँतों से	कुक्षौ	९.	पेट की ओर
च	७.	और	भुग्न	१३.	मोड़ कर
बहिः	४.	ऊपर	पृष्ठ	११.	पीठ और
आवृतः ।	६.	बंधा रहता है	शिरोधरः ॥	१२.	गर्दन को

श्लाकार्थ—माता के उस गर्भ में झिल्ली से लिपटा हुआ वह जीव झिल्ली से ऊपर आँतों से बंधा रहता है; और सिर को पेट की ओर कुण्डलाकार करके पीठ और गर्दन को मोड़ कर पड़ा रहता है ॥

नवमः श्लोकः

अकल्पः स्वाङ्गचेष्टायां शकुन्त इव पञ्जरे।
तत्र लब्धस्मृतिर्दैवात्कर्म जन्मशतोद्भवम्।
स्मरन्दीर्घमनुच्छ्वासं शर्म किं नाम विन्दते ॥९॥

पदच्छेद— अकल्पः स्वाङ्ग चेष्टायाम् शकुन्तः इव पञ्जरे।
तत्र लब्ध स्मृतिः दैवात् कर्म जन्म शत उद्भवम्।
स्मरन् दीर्घम् अनुच्छ्वासम् शर्म किम् नाम विन्दते ॥

शब्दार्थं—

अकल्पः	५.	असमर्थ (रहता है)	जन्म	११.	जन्मों में
स्वाङ्ग	३.	अपने अङ्गों को	शत	१०.	सैकड़ों
चेष्टायाम्	४.	हिलाने-डुलाने में	उद्भवम्।	१२.	किये गये
शकुन्तः, इव	२.	पक्षी के समान	स्मरन्	१४.	स्मरण करता हुआ (वह)
पञ्जरे।	१.	पिंजरे में बन्द	दीर्घम्	१५.	लम्बी
तत्र	६.	उस समय	अनुच्छ्वासम्	१६.	सांसें (लेता है)
लब्ध	९.	हो जाने के कारण	शर्म	१९.	शान्ति
स्मृतिः	८.	स्मरण शक्ति	किम्	१८.	क्या (उसे)
दैवात्	७.	भगवान् की प्रेरणा से	नाम	१७.	उस स्थिति में
कर्म	१३.	कर्मों का	विन्दते ॥	२०.	मिल सकती है

श्लोकार्थं—पिंजरे में बन्द पक्षी के समान अपने अङ्गों को हिलाने डुलाने में असमर्थ रहता है। उस समय भगवान् की प्रेरणा से स्मरण शक्ति हो जाने के कारण सैकड़ों जन्मों में किये गये कर्मों का स्मरण करता हुआ वह लम्बी सांसें लेता है। उस स्थिति में क्या उसे शान्ति मिल सकती है ॥

दशमः श्लोकः

आरभ्य सप्तमान्मासाल्लब्धबोधोऽपि वेपितः।
नैकत्रास्ते सूतिवातैर्विष्ठाभूरिव सोदरः ॥१०॥

पदच्छेद— आरभ्य सप्तमात् मासात् लब्ध बोधः अपि वेपितः।
न एकत्र आस्ते सूति वातैः विष्ठा भूः इव सोदरः ॥

शब्दार्थं—

आरभ्य	३.	प्रारम्भ में (उसमें)	न	१४.	नहीं (रह सकता है)
सप्तमात्	१.	सातवें	एकत्र, आस्ते	१३.	एक जगह, स्थिर
मासात्	२.	महीने के	सूति, वातैः	७.	प्रसूति के, वायु से
लब्ध	६.	उदय हो जाता है (उस समय)	विष्ठा	११.	मल के, कीड़ों के
बोधः	४.	ज्ञान शक्ति का	भूः	१०.	उत्पन्न होने वाले
अपि	५.	भी	इव	१२.	समान
वेपितः।	८.	चलायमान	सोदरः ॥	९.	उसी उदर में

श्लोकार्थं—सातवें महीने के प्रारम्भ में उसमें ज्ञान शक्ति का भी उदय हो जाता है। उस समय प्रसूति के वायु से चलायमान वह उसी उदर में उत्पन्न होने वाले मल के कीड़ों के समान एक जगह स्थिर नहीं रह सकता है ॥

एकादशः श्लोकः

नाथमान ऋषिर्भीतः सप्तवध्रिः कृताञ्जलिः ।
स्तुवीत तं विक्लवया वाचा येनोदरेऽर्पितः ॥११॥

पदच्छेद— नाथमान ऋषिः भीतः सप्त वध्रिः कृत अञ्जलिः ।
स्तुवीत तम् विक्लवया वाचा येन उदरे अर्पितः ॥

शब्दार्थं—

नाथमान	७.	दया की याचना करता हुआ	स्तुवीत	११.	स्तुति करता है
ऋषिः	३.	देहात्मदर्शी (वह जीव)	तम्	१०.	उस परमात्मा की
भीतः	४.	भयभीत होकर	विक्लवया	५.	दीन
सप्त	१.	रक्त; मांसादि सात धातुओं से	वाचा	६.	वाणी में
वध्रिः	२.	बंधा हुआ	येन	१२.	जिसने उसे
कृत	९.	जोड़ कर	उदरे	१३.	माता के उदर में
अञ्जलिः ।	८.	हाथ	अर्पितः ॥	१४.	डाला है

श्लोकार्थ—रक्त, मांसादि सात धातुओं से बंधा हुआ देहात्मदर्शी वह जीव भयभीत होकर दीन वाणी में दया की याचना करता हुआ हाथ जोड़ कर उस परमात्मा को स्तुति करता है । जिसने उसे माता के उदर में डाला है ॥

द्वादशः श्लोकः

जन्तुरुवाच—**तस्योपसन्नमवितुं जगदिच्छयात्तनानातनोर्भुवि चलच्चरणारविन्दम् ।**
सोऽहं व्रजामि शरणं ह्यकुतोभयं मे येनेदृशी गतिरदर्श्यसतोऽनुरूपा ॥१२॥

पदच्छेद—तस्य उपसन्नम् अवितुम् जगत् इच्छया आत्त, नाना तनोः भुवि चलत् चरण अरविन्दम् ।
सः अहम् व्रजामि शरणम् हि अकुतो भयम् मे येन ईदृशी गतिः, अदर्शि असतः अनुरूपा ॥

शब्दार्थ—

तस्य	८.	उस परमात्मा के	सः अहम्	१२.	वह अधम मैं
उपसन्नम्	१.	अपनी शरण में आये हुये	व्रजामि	१४.	लेता हूँ
अवितुम्	३.	रक्षा करने की	शरणम्	१३.	शरण
जगत्	२.	संसार की	हि	१९.	जो मुझ
इच्छया	४.	इच्छा से	अकुतो, भयम्	१०.	निर्भय
आत्त	७.	धारण करने वाले	मे	१६.	मुझे
नाना	५.	अनेक प्रकार के	येन	१५.	जिन्होंने
तनोः	६.	शरीर को	ईदृशी	१७.	इस प्रकार की
भुवि चलत्	९.	पृथ्वी पर, विचरण करने वाले	गतिः, अदर्शि	१८.	दशा दिखलाई है
चरण अरविन्दम् ।	११.	पाद पदमों की	असतः अनुरूपा ॥	२०.	दुष्ट के योग्य

श्लोकार्थ—अपनी शरण में आये हुये संसार की रक्षा करने की इच्छा से अनेक प्रकार के शरीर को धारण करने वाले उस परमात्मा के पृथ्वी पर विचरण करने वाले निर्भय पाद पद्मों की, वह अधम मैं शरण लेता हूँ । जिन्होंने मुझे इस प्रकार की दशा दिखलाई है, जो मुझ दुष्ट के योग्य है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यस्त्वत्र बद्ध इव कर्मभिरावृतात्मा भूतेन्द्रियाशयमयीमवलम्ब्य मायाम् ।
आस्ते विशुद्धमविकारमखण्डबोधमातप्यमानहृदयेऽवसितं नमामि ॥१३॥

पदच्छेद—

यः तु अत्र बद्धः इव कर्मभिः आवृत, आत्मा भूत इन्द्रिय आशयमयीम् अवलम्ब्य मायाम् ।
आस्ते विशुद्धम् अविकारम् अखण्ड बोधम् आतप्यमान हृदये अवसितम् नमामि ॥

शब्दार्थ—

यः	८.	जो जीव	आस्ते	१०.	पड़ा रहता है (सो मैं)
तु, अत्र	१.	तथा, इस माता के गर्भ में	विशुद्धम्	१४	उपाधि रहित
बद्धः इव	९.	बंधे हुये के, समान	अविकारम्	१५.	निर्विकार
कर्मभिः	६.	पुण्य और पाप कर्मों से	अखण्ड	१६.	अखण्ड
आवृत, आत्मा	७.	आच्छादित स्वरूप वाला	बोधम्	१७.	ज्ञान स्वरूप (परमात्मा को)
भूत, इन्द्रिय	२.	शरीर, इन्द्रिय (और)	आतप्यमान	११.	(अपने) सन्तप्त
आशयमयीम्	३.	अन्तःकरण रूप	हृदये	१२.	हृदय में
अवलम्ब्य	५.	सहारा लेकर	अवसितम्	१३.	स्फुरित होने वाले
मायाम् ।	४.	माया का	नमामि ॥	१८.	नमस्कार करता हूँ

श्लोकार्थ—तथा इस माता के गर्भ में शरीर, इन्द्रिय और अन्तःकरण रूप माया का सहारा लेकर पुण्य और पाप कर्मों से आच्छादित स्वरूप वाला जो जीव बंधे हुये के समान पड़ा रहता है; सो मैं अपने सन्तप्त हृदय में स्फुरित होने वाले उपाधि रहित, निर्विकार, अखण्ड ज्ञान स्वरूप परमात्मा को नमस्कार करता हूँ ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यः पञ्चभूतरचिते रहितः शरीरेच्छन्नो यथेन्द्रियगुणार्थचिदात्मकोऽहम् ।
तेनाविकुण्ठमहिमानमृषिं तमेनं वन्दे परं प्रकृतिपूरुषयोः पुमांसम् ॥१४॥

पदच्छेद—

यः पञ्चभूत रचिते रहितः शरीरे छन्नः यथा इन्द्रिय गुण अर्थ चिदात्मकः अहम् ।
तेन अविकुण्ठ महिमानम् ऋषिम् तम् एनम् वन्दे परम प्रकृति पूरुषयोः पुमांसम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	तेन	१०.	उस (अहंकारी से)
पञ्चभूत	४.	पाँच महाभूतों से	अविकुण्ठ	१२.	कुण्ठित नहीं हुई है
रचिते	५.	निर्मित	महिमानम्	११.	जिसकी महिमा
रहितः	३.	असङ्ग (होने पर भी)	ऋषिम्, तम्	१३.	आत्मदर्शी, उस
शरीरे, छन्नः	६.	शरीर में, बंधा हुआ हूँ	एनम्	१६.	इस
यथा, इन्द्रिय	७.	इसलिये, इन्द्रिय	वन्दे	१८.	वन्दना करता हूँ
गुण, अर्थ	८.	सत्त्वादि गुण, शब्दादि विषय	परम	१५.	परे
चिदात्मकः	९.	अहंकार स्वरूप हूँ	प्रकृति, पूरुषयोः	१४.	प्रकृति (और) पुरुष से
अहम् ।	२.	मैं	पुमांसम् ॥	१७.	परम पुरुष की

श्लोकार्थ—जो मैं असङ्ग होने पर भी पांच महाभूतों से निर्मित शरीर में बंधा हुआ हूँ । इसलिये इन्द्रिय सत्त्वादि गुण शब्दादि विषय और अहंकार स्वरूप हूँ । उस अहंकारी से जिसकी महिमा कुण्ठित नहीं हुई है; आत्मदर्शी उस प्रकृति और पुरुष से परे परम पुरुष की वन्दना करता हूँ ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यन्माययोरुगुणकर्मनिबन्धनेऽस्मिन् सांसारिके पथि चरंस्तदभिश्रमेण ।
नष्टस्मृतिः पुनरयं प्रवृणीत लोकं युक्त्या कया महदनुग्रहमन्तरेण ॥१५॥

पदच्छेद–यत् मायया उरु गुण कर्म निबन्धने अस्मिन् सांसारिके पथि चरन् तद् अभिश्रमेण ।
नष्ट स्मृतिः पुनः अयम् प्रवृणीत लोकम् युक्त्या कया महत् अनुग्रहम् अन्तरेण ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जिस परमात्मा की	नष्ट	४.	नाश हो जाने के कारण
मायया	२.	माया से	स्मृतिः	३.	स्मरण शक्ति का
उरु, गुण	६.	अनेक प्रकार के सत्त्वादि गुण (और)	पुनः	१८.	फिर से
कर्म	७.	पुण्य-पाप-कर्मों के	अयम्	५.	यह जीव
निबन्धने	८.	बन्धन से युक्त	प्रवृणीत	१६.	जान सकेगा
अस्मिन्	९.	इस	लोकम्,	१७.	अपने स्वरूप को,
सांसारिके, पथि	१०.	संसार के, मार्ग में	युक्त्या	१६.	उपाय से
चरन्	१२.	भटकता रहता है	कया	१५.	किस
तद्, अभिश्रमेण ।	११.	उसके कष्टों को झेलता हुआ	महत्, अनुग्रहम्	१३.	उस परमात्मा की, कृपा के
			अन्तरेण ॥	१४.	बिना (यह)

श्लोकार्थ—जिस परमात्मा की माया से स्मरण शक्ति का नाश हो जाने के कारण यह जीव अनेक प्रकार के सत्त्वादि गुण और पुण्य-पाप कर्मों के बन्धन से युक्त इस संसार के मार्ग में उसके कष्टों को झेलता हुआ भटकता रहता है। उस परमात्मा की कृपा के बिना यह किस उपाय से अपने स्वरूप को जान सकेगा।

षोडशः श्लोकः

ज्ञानं यदेतददधात्कतमः स देवस्त्रैकालिकं स्थिरचरेष्वनुवर्तितांशः ।
तं जीवकर्मपदवीमनुवर्तमानास्तापत्रयोपशमनाय वयं भजेम ॥१६॥

पदच्छेद–ज्ञानम् यद् एतद् अदधात् कतमः सः देवः त्रैकालिकम् स्थिर चरेषु अनुवर्तित अंशः ।
तम् जीव कर्म पदवीम् अनुवर्तमानाः तापत्रय उपशमनाय वयम् भजेम ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	३.	ज्ञान (हुआ है उसे)	अंशः ।	९.	अन्तर्यामि अंश से
यद्, एतद्	१.	(मुझे) जो, यह	तम्	१७.	उस परमात्मा का
अदधात्	७.	दिया है (वह परमात्मा)	जीव	११.	जीव रूप
कतमः	५.	अतिरिक्त किस	कर्म, पदवीम्	१२.	कर्म के, बन्धन को
सः	४.	उस परमात्मा के	अनुवर्तमानाः	१३.	प्राप्त होने वाले
देवः	६.	देवता ने	ताप त्रय	१५	तीनों तापों की
त्रैकालिकम्	२.	तीनों कालों का	उपशमनाय	१६.	शान्ति के लिये
स्थिर, चरेषु	८.	स्थावर और जंगम, समस्त प्राणियों में	वयम्	१४.	हम लोग
अनुवर्तित	१०	विद्यमान है (अतः)	भजेम ॥	१८.	भजन करते हैं

श्लोकार्थ—मुझे जो यह तीनों कालों का ज्ञान हुआ है उसे उस परमात्मा के अतिरिक्त किस देवता ने दिया है। वह परमात्मा स्थावर और जंगम समस्त प्राणियों में अन्तर्यामि अंश से विद्यमान है। अतः जीवरूप कर्म के बन्धन को प्राप्त होने वाले हम लोग तीनों तापों की शान्ति के लिये उस परमात्मा का भजन करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

देह्यन्यदेहविवरे जठराग्निनास्रुग्
विण्मूत्रकूपपतितो भृशतप्तदेहः ।
इच्छन्नितो विवसितुं गणयन् स्वमासान्
निर्वास्यते कृपणधीर्भगवन् कदा नु ॥१७॥

पदच्छेद—

देही अन्य देह विवरे जठराग्निना असृग् विट् मूत्र कूप पतितः भृश तप्त देहः ।
इच्छन् इतः विवसितुम् गणयन् स्वमासाम् निर्वास्यते कृपण धीः भगवन् कदा नु ॥

शब्दार्थ—

देही, अन्य	१.	शरीरधारी यह जीव, माता के	इतः, विवसितुम्	६.	इस उदर से निकलने की
देह, विवरे	२.	शरीर के, उदर में	गणयन्	१२.	गिनता रहता है (तथा)
जठराग्निना	६.	उसकी जठराग्नि से	स्वमासान्	११.	अपने महीने
असृग्	४.	रुधिर के	निर्वास्यते	१८.	निकाला जायेगा
विट्, मूत्र	३.	मल-मूत्र के (एवं)	कृपण	१६.	दीन यहाँ से
कूप पपितः	५.	कुयें में पड़ा रहता है (और)	धीः	१५.	मन्द बुद्धि
भृश, तप्त	८.	अत्यन्त, तपता है	भगवन्	१४.	हे भगवन् ! यह
देहः ।	७.	उसका शरीर	कदा	१७.	कब
इच्छन्	१०.	इच्छा करता हुआ (वह)	नु ॥	१३.	यह प्रार्थना करता है कि

श्लोकार्थ—शरीरधारी यह जीव माता के उदर में मल-मूत्र एवं रुधिर के कुयें में पड़ा रहता है; और उसकी जठराग्नि से उसका शरीर अत्यन्त तपता है । इस उदर से निकलने की इच्छा करता हुआ वह अपने महीने गिनता रहता है । तथा यह प्रार्थना करता है कि हे भगवन् ! यह मन्द बुद्धि दीन यहाँ से कब निकाला जायेगा ॥

अष्टादशः श्लोकः

येनेदृशीं गतिमसौ दशमास्य ईश ।
संग्राहितः पुरुदयेन भवादृशेन ।
स्वेनैव तुष्यतु कृतेन स दीननाथः ।
को नाम तत्प्रति विनाञ्जलिमस्य कुर्यात् ॥१८॥

पदच्छेद—

येन ईदृशीम् गतिम् असौ दशमास्यः ईश, संग्राहितः पुरुदयेन भवादृशेन ।
स्वेन एव तुष्यतु कृतेन सः दीननाथः कः नाम तत् प्रति विना अञ्जलिम् अस्य कुर्यात् ॥

शब्दार्थ—

येन	४.	जिस परमात्मा ने	कृतेन	१२.	उपकार से
ईदृशीम् गतिम्	७.	इस प्रकार का, ज्ञान	सः	१०.	सो आप
असौ	६.	उस जीव को	दीननाथः	९.	दीनों के स्वामी
दशमास्यः	५.	दस महीने के	कः	१५.	कौन प्राणी
ईश,	१.	हे स्वामिन !	नाम	१४.	भला
संग्राहितः	८.	दिया है	तत् प्रति	१९.	प्रतिकार
पुरुदयेन	२.	अत्यन्त दयालु	विना	१७.	सिवाय
भवादृशेन ।	३.	आप सरीखे	अञ्जलिम्	१६.	हाथ जोड़ने के
स्वेन एव	११.	अपने ही	अस्य	१८.	इसका
तुष्यतु	१३.	प्रसन्न हों	कुर्यात् ॥	२०.	कर सकता है

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! अत्यन्त दयालु आप सरीखे जिस परमात्मा ने दस महीने के उस जीव को इस प्रकार का ज्ञान दिया है । दीनों के स्वामी सो आप अपने ही उपकार से प्रसन्न हों । भला कौन प्राणी हाथ जोड़ने के सिवाय इसका प्रतिकार कर सकता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

पश्यत्ययं धिषणया ननु सप्तवध्रिः शारीरके दमशरीर्यपरः स्वदेहे ।
यत्सृष्टयाऽऽसं तमहं पुरुषं पुराणं पश्ये बहिर्हृदि च चैत्यमिव प्रतीतम् ॥१९॥

पदच्छेद—पश्यति अयम् धिषणया ननु सप्तवध्रिः शारीरके दमशरीरी अपरः स्वदेहे ।
यत् सृष्टया आसम् तम् अहम् पुरुषम् पुराणम् पश्ये बहिः हृदि च चैत्यम् इव प्रतीतम् ॥

शब्दार्थ—

पश्यति	७.	अनुभव करते हैं	आसम्	१०	हूँ (अतः)
अयम्	२.	ये	तम्	१७.	उस
धिषणया	५.	बुद्धि के द्वारा	अहम्	११.	मैं
ननु	८.	किन्तु (मैं)	पुरुषम्	१९.	पुरुष परमात्मा का
सप्तवध्रिः	१.	रक्त मांसादि सात आवरणों से बंधे	पुराणम्	१८.	पुराण
शारीरके	६.	शरीर के सुख-दुःख का	पश्ये	२०.	दर्शन करता हूँ
दमशरीरी	९.	शम दमादि के साधन, शरीरयुक्त जीव	बहिः	१३.	बाहर
अपरः	३.	दूसरे पशु-पक्षी आदि जीव	हृदि, च	१४.	हृदय में, और
स्वदेहे ।	१२.	अपने शरीर के	चैत्यम्	१५.	आत्मा के
यत् सृष्टया	४.	जिस-परमात्मा से निर्मित	इव, प्रतीतम् ॥	१६.	समान, अनुभव में आने वाले

श्लोकार्थं—रक्त मांसादि सात आवरणों से बंधे ये दूसरे पशु-पक्षी आदि जीव जिस परमात्मा से निर्मित बुद्धि के द्वारा शरीर के सुख-दुःख का अनुभव करते हैं; किन्तु मैं शम-दमादि के साधन शरीर से युक्त जीव हूँ; अतः मैं अपने शरीर के बाहर और हृदय में आत्मा के समान अनुभव में आने वाले उस पुराण पुरुष परमात्मा का दर्शन करता हूँ ॥

विंशः श्लोकः

सोऽहं वसन्नपि विभो बहुदुःखवासं गर्भान्न निर्जिगमिषे बहिरन्धकूपे ।
यत्रोपयातमुपसर्पति देवमाया मिथ्यामतिर्यदनु संसृतिचक्रमेतत् ॥२०॥

पदच्छेद—सः अहम् वसन् अपि विभो बहु दुःख वासम् गर्भात् न निर्जिगमिषे बहिः अन्धकूपे ।
यत्र उपयातम् उपसर्पति देवमाया मिथ्या मतिः यदनु संसृति चक्रम् एतत् ॥

शब्दार्थ—

सः अहम्	२.	वह, मैं	यत्र	१०.	जहाँ
वसन्, अपि	५.	रहने पर, भी	उपयातम्	११.	जाने पर
विभो	१.	हे प्रभो !	उपसर्पति	१३.	घेर लेती है (जिसके कारण)
बहुदुःख	३.	अत्यन्त कष्ट दायक	देवमाया	१२.	आपकी माया
वासम्	४.	गर्भाशय में	मिथ्या, मतिः	१४.	अहंकार, बुद्धि (होती है)
गर्भात्	६.	उस गर्भ से	यदनु	१५.	जिसके फल स्वरूप
न, निर्जिगमिषे	९.	नहीं, निकलना चाहता हूँ	संसृति, चक्रम्	१७. १८.	संसार चक्र (प्राप्त होता है)
बहिः, अन्धकूपे ।	७. ८	बाहर, अज्ञान सागर, में	एतत् ॥	१६.	यह

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! वह मैं अत्यन्त कष्ट दायक गर्भाशय में रहने पर भी उस गर्भ से बाहर अज्ञान सागर संसार में नहीं निकलना चाहता हूँ । जहाँ जाने पर आपकी माया घेर लेती है । जिसके कारण अहंकार बुद्धि होती है । जिसके फल स्वरूप यह संसार चक्र प्राप्त होता है ॥

एकविंशः श्लोकः

तस्मादहं विगतविक्लव उद्धरिष्य आत्मानमाशु तमसः सुहृदाऽऽत्मनैव ।
भूयो यथा व्यसनमेतदनेकरन्ध्रं मा मे भविष्यदुपसादितविष्णुपादः ॥२१॥

पदच्छेद—तस्मात्, अहम् विगत विक्लवः उद्धरिष्ये आत्मानम् आशु तमसः सुहृदा आत्मना एव ।
भूयः यथा व्यसनम् एतद् अनेक रन्ध्रम् मा मे भविष्यत् उपसादित विष्णुपादः ॥

शब्दार्थं—

तस्मात्, अहम्	१.	इसलिये मैं	भूयः	१८.	फिर से
विगत	५.	रहित होकर	यथा	१३.	जिससे कि
विक्लवः	४.	व्याकुलता से	व्यसनम्	१६.	संसार रूप विपत्ति
उद्धरिष्ये	१२.	उद्धार करूँगा	एतद्	१५.	यह
आत्मानम्	९.	अपनी आत्मा का	अनेक, रन्ध्रम्	१४.	बहुत प्रकार के, दोषों से युक्त
आशु	११.	शीघ्र	मा	११.	न
तमसः	१०.	संसार सागर से	मे	१७.	मुझे
सुहृदा	७.	सहायता से	भविष्यत्	२०.	हो सके
आत्मना	६.	अपनी बुद्धि की	उपसादित	३.	स्थापित करके
एव ।	८.	ही	विष्णुपादः ॥	२.	भगवान् विष्णु के चरणों को हृदय में

श्लोकार्थं—इसलिये मैं भगवान् विष्णु के चरणों को हृदय में स्थापित करके व्याकुलता से रहित होकर अपनी बुद्धि की सहायता से ही अपनी आत्मा का संसार सागर से शीघ्र उद्धार करूँगा । जिससे कि बहुत प्रकार के दोषों से युक्त यह संसार रूप विपत्ति मुझे फिर से न हो सके ॥

द्वाविंशः श्लोकः

कपिल उवाच—**एवं कृतमतिर्गर्भे दशमास्यः स्तुवन्नृषिः ।**
सद्यः क्षिपत्यवाचीनं प्रसूत्यै सूतिमारुतः ॥२२॥

पदच्छेद— एवम् कृत मतिः गर्भे दशमास्यः स्तुवन् ऋषिः ।
सद्यः क्षिपति अवाचीनम् प्रसूत्यै सूति मारुतः ॥

शब्दार्थं—

एवम्	३.	इस प्रकार	सद्यः	७.	उसी समय
कृत	५.	करते हुये (भगवान् की)	क्षिपति	१२.	धकेलतो है
मतिः	४.	विवेक	अवाचीनम्	१०.	अधोमुख उस बालक को
गर्भे, दशमास्यः	१.	गर्भ में, दश महीने का	प्रसूत्यै	११.	बाहर आने के लिये
स्तुवन्	६.	स्तुति करता है	सूति	८.	प्रसव की
ऋषिः ।	२.	देहात्मदर्शी वह जीव	मारुतः ॥	९.	वायु

श्लोकार्थं—गर्भ में दश महीने का देहात्मदर्शी वह जीव इस प्रकार विवेक करते हुये भगवान् की स्तुति करता है । उसी समय प्रसव की वायु अधोमुख उस बालक को बाहर आने के लिये धकेलती है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तेनावसृष्टः सहसा कृत्वावाक् शिर आतुरः ।
विनिष्क्रामति कृच्छ्रेण निरुच्छ्वासो हतस्मृतिः ॥२३॥

पदच्छेद—

तेन अवसृष्टः सहसा कृत्वा अवाक् शिरः ।
आतुरः विनिष्क्रामति कृच्छ्रेण निरुच्छ्वासः हत स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

तेन	१.	उस वायु के	आतुरः	४.	व्याकुल होता हुआ वह
अवसृष्टः	३.	धकेलने पर	विनिष्क्रामति	९.	बाहर निकलता है (उस समय)
सहसा	२.	एकाएक	कृच्छ्रेण	८.	बड़े कष्ट से
कृत्वा	७.	करके	निरुच्छ्वासः	१०.	उसकी सांस रुक जाती है (और)
अवाक्	६.	नीचे	हत	१२.	नष्ट हो जाती है
शिरः	५.	सिर को	स्मृतिः	११.	पूर्व जन्म की स्मृति

श्लोकार्थ—उस वायु के एकाएक धकेलने पर व्याकुल होता हुआ वह सिर को नीचे करके बड़े कष्ट से बाहर निकलता है । उस समय उसकी सांस रुक जाती है । और पूर्व जन्म की स्मृति नष्ट हो जाती है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

पतितो भुव्यसृङ्मूत्रे विष्ठाभूरिव चेष्टते ।
रोरूयति गते ज्ञाने विपरीतां गतिं गतः ॥२४॥

पदच्छेद—

पतितः भुवि असृक् मूत्रे विष्ठा भूः इव चेष्टते ।
रोरूयति गते ज्ञाने विपरीताम् गतिम् गतः ॥

शब्दार्थ—

पतितः	४.	पड़ा हुआ वह	चेष्टते ।	८.	अपने अङ्गों को हिलाता है (तथा)
भुवि	१.	पृथ्वी पर (माता के)	रोरूयति	१४.	ज़ोर-जोर से रोता है
असृक्	२.	रुधिर और	गते	१०.	समाप्त हो जाने से
मूत्रे	३.	मूत्र में	ज्ञाने	९.	पूर्व ज्ञान के
विष्ठा	५.	मल के	विपरीताम्	११.	विपरीत अज्ञान
भूः	६.	कीड़े के	गतिम्	१२.	दशा को
इव	७.	समान	गतः ॥	१३.	प्राप्त होकर

श्लोकार्थ— पृथ्वी पर माता के रुधिर और मूत्र में पड़ा हुआ वह मल के कीड़े के समान अपने अङ्गों को हिलाता है । तथा पूर्व ज्ञान के समाप्त हो जाने से विपरीत अज्ञान दशा को प्राप्त होकर ज़ोर-ज़ोर से रोता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

परच्छन्दं न विदुषा पुष्यमाणो जनेन सः ।
अनभिप्रेतमापन्नः प्रत्याख्यातुमनीश्वरः ॥२५॥

पदच्छेद—

परच्छन्दम् न विदुषा पुष्यमाणः जनेन सः ।
अनभिप्रेतम् आपन्नः प्रत्याख्यातुम् अनीश्वरः ॥

शब्दार्थ—

परच्छन्दम्	१. उसके मनो भावों को	सः ।	५. उसका
न	२. नहीं	अनभिप्रेतम्	७. प्रतिकूलता
विदुषा	३. जानने वाले	आपन्नः	८. होने पर (उसका)
पुष्यमाणः	६. पालन-पोषण करते हैं	प्रत्याख्यातुम्	९. निषेध करने में
जनेन	४. लोग	अनीश्वरः ॥	१०. समर्थ नहीं होता है

श्लोकार्थ—उसके मनो भावों को नहीं जानने वाले लोग उसका पालन-पोषण करते हैं। प्रतिकूलता होने पर वह उसका निषेध करने में समर्थ नहीं होता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

शायितोऽशुचिपर्यङ्के जन्तुः स्वेदजदूषिते ।
नेशः कण्डूयनेऽङ्गानामासनोत्थानचेष्टने ॥२६॥

पदच्छेद—

शायितः अशुचि पर्यङ्के जन्तुः स्वेदज दूषिते ।
न, ईशः कण्डूयने अङ्गानाम् आसन उत्थान चेष्टने ॥

शब्दार्थ—

शायितः	६. सुलाया जाता है	न, ईशः	१२. नहीं समर्थ होता है
अशुचि	४. मैली	कण्डूयने	८. खुजलाने में
पर्यङ्के	५. खाट पर	अङ्गानाम्	७. अपने अङ्गों को
जन्तुः	१. उस बालक को	आसन	९. बैठाने
स्वेदज	२. पसीने से होने वाले	उत्थान	१०. उठाने (अथवा)
दूषिते ।	३. खटमल इत्यादि से युक्त	चेष्टने ॥	११. करवट बदलने में

श्लोकार्थ—उस बालक को पसीने से होने वाले खटमल इत्यादि से युक्त मैली खाट पर सुलाया जाता है। वह अपने अङ्गों को खुजलाने में, बैठाने उठाने अथवा करवट बदलने में समर्थ नहीं होता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तुदन्त्यामत्वचं दंशा मशका मत्कुणादयः।
रुदन्तं विगतज्ञानं कृमयः कृमिकं यथा ॥२७॥

पदच्छेद—

तुदन्ति आम त्वचम् दंशाः मशकाः मत्कुण आदयः ।
रुदन्तम् विगत ज्ञानम् कृमयः कृमिकम् यथा ॥

शब्दार्थ—

तुदन्ति	६.	काटते हैं	**रुदन्तम्**	१२.	रोता है
आम, त्वचम्	५.	कच्ची चमड़ी को	**विगत**	११.	नष्ट हो जाने से (वह केवल)
दंशाः	१.	डांस	**ज्ञानम्**	१०.	(तब गर्भावस्था का) ज्ञान
मशकाः	२.	मच्छर	**कृमयः**	८.	छोटे कीड़े
मत्कुण	३.	खटमल	**कृमिकम्**	९.	वड़े कीड़ों को (काटते हैं)
आदयः ।	४.	इत्यादि कीड़े (उसकी)	**यथा ॥**	७.	जैसे

श्लोकार्थ—डांस, मच्छर, खटमल, इत्यादि कीड़े उसकी कच्ची चमड़ी को काटते हैं। जैसे छोटे कीड़े, वड़े कीड़ों को काटते हैं। तब गर्भावस्था का ज्ञान नष्ट हो जाने से वह केवल रोता है।

अष्टाविंशः श्लोकः

इत्येवं शैशवं भुक्त्वा दुःखं पौगण्डमेव च ।
अलब्धाभीप्सितोऽज्ञानादिद्धमन्युः शुचार्पितः ॥२८॥

पदच्छेद—

इति, एवम् शैशवम् भुक्त्वा दुःखम् पौगण्डम् एव च ।
अलब्ध अभीप्सितः अज्ञानात् इद्ध मन्युः शुचः अर्पितः ॥

शब्दार्थ—

इति, एवम्	१.	इस प्रकार, वह	**अलब्ध**	९.	न मिलने से
शैशवम्	२.	वाल्यावस्था के	**अभीप्सितः**	८.	इच्छित भोग
भुक्त्वा	७.	भोग कर (युवावस्था में)	**अज्ञानात्**	१०.	अज्ञान के कारण
दुःखम्	६.	दुःख	**इद्ध**	१२.	बढ़ जाता है (और वह)
पौगण्डम्	४.	किशोरावस्था के	**मन्युः**	११.	उसका क्रोध
एव	५.	भी	**शुचः**	१३.	शोक
च ।	३.	और	**अर्पितः ॥**	१४.	मग्न (हो जाता है)

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह वाल्यावस्था के और किशोरावस्था के भी दुःख भोग कर (युवावस्था में) इच्छित भोग न मिलने से अज्ञान के कारण उसका क्रोध बढ़ जाता है। और वह शोक मग्न हो जाता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सह देहेन मानेन वर्धमानेन मन्युना ।
करोति विग्रहं कामी कामिष्वन्ताय चात्मनः ॥२६॥

पदच्छेद—

सह देहेन मानेन वर्धमानेन मन्युना ।
करोति विग्रहम् कामी कामिषु अन्ताय च आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

सह	२.	साथ-साथ	विग्रहम्	११.	वैर
देहेन	१.	शरीर के	कामी	६.	कामनाओं में आसक्त (वह जीव)
मानेन	३.	अभिमान (और)	कामिषु	१०.	विषयानुरागी (लोगों से)
वर्धमानेन	५.	बढ़ जाने के कारण	अन्ताय	६.	नाश के लिये
मन्युना ।	४.	क्रोध	च	८.	ही
करोति	१२.	करता है	आत्मनः ॥	७.	अपने

श्लोकार्थ—शरीर के साथ-साथ अभिमान और क्रोध बढ़ जाने के कारण कामनाओं में आसक्त वह जीव अपने ही नाश के लिये विषयानुरागी लोगों से वैर करता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

भूतैः पञ्चभिरारब्धे देहे देह्यबुधोऽसकृत् ।
अहंममेत्यसद्ग्राहः करोति कुमतिर्मतिम् ॥३०॥

पदच्छेद—

भूतैः पञ्चभिः आरब्धे देहे देही अबुधः असकृत् ।
अहम् मम इति असद् ग्राहः करोति मतिम् ॥

शब्दार्थ—

भूतैः	७.	महाभूतों से	अहम्, मम	११.	मैं और मेरा
पञ्चभिः	६.	आकाशादि पांच	इति	१२.	इस प्रकार का
आरब्धे	८.	रचित	असद्	४.	मिथ्या
देहे	६.	शरीर के प्रति	ग्राहः	५.	अभिनिवेश होने के कारण
देही	३.	जीव	करोति	१४.	करता है
अबुधः	२.	अज्ञानी	कुमतिः	१.	खोटि बुद्धि वाला
असकृत् ।	१०.	निरन्तर	मतिम् ॥	१३.	दुरभिमान

श्लोकार्थ—खोटि बुद्धि वाला अज्ञानी जीव मिथ्या अभिनिवेश होने के कारण आकाशादि पांच महाभूतों से रचित शरीर के प्रति निरन्तर मैं और मेरा इस प्रकार का दुरभिमान करता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तदर्थं कुरुते कर्म यद्बद्धो याति संसृतिम् ।
योऽनुयाति ददत्क्लेशमविद्याकर्मबन्धनः ॥३१॥

पदच्छेद—

तद् अर्थम् कुरुते कर्म यद् बद्धः याति संसृतिम् ।
यः अनुयाति ददत् क्लेशम् अविद्या कर्म बन्धनः ॥

शब्दार्थ—

तद्, अर्थम्	८.	उसी के लिये (जीव)	**यः**	१.	जो शरीर
कुरुते	१०.	करता है	**अनुयाति**	७.	पीछे लगा रहता है
कर्म	६.	अनेकों प्रकार के कर्म	**ददत्**	६.	देता हुआ
यद्	११.	जिसके	**क्लेशम्**	५.	वृद्धावस्थादि कष्ट को
बद्धः	१२.	बन्धन से (वह)	**अविद्या**	२.	अज्ञान (और)
याति	१४.	पड़ता है	**कर्म**	३.	कर्म से
संसृतिम् ।	१३.	संसार चक्र में	**बन्धनः ॥**	४.	बंधा हुआ (तथा)

श्लोकार्थ—जो शरीर अज्ञान और कर्म से बंधा हुआ तथा वृद्धावस्थादि के कष्ट को देता हुआ पीछे लगा रहता है। उसी के लिये जीव अनेकों प्रकार के कर्म करता है। जिसके बन्धन से वह संसार चक्र में पड़ता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यद्यसद्भिः पथि पुनः शिश्नोदरकृतोद्यमैः ।
आस्थितो रमते जन्तुस्तमो विशति पूर्ववत् ॥३२॥

पदच्छेद—

यदि असद्भिः पथि पुनः शिश्न उदर कृत उद्यमैः ।
आस्थितः रमते जन्तुः तमः विशति पूर्ववत् ॥

शब्दार्थ—

यदि	१.	अगर जीव	**आस्थितः**	६.	चलता हुआ
असद्भिः	४.	दुष्ट लोगों के	**रमते**	७.	बिहार करता है (तो)
पथि	५.	उनके रास्ते पर	**जन्तुः**	८.	(वह) जीव
पुनः	१०.	फिर से	**तमः**	११.	नारकी योनियों में
शिश्न, उदर	२.	जननेन्द्रिय और पेट के ही	**विशति**	१२.	प्रवेश करता है
कृत उद्यमैः ।	३.	निमित्त, उद्योग में लगा हुआ एवं	**पूर्ववत् ॥**	६.	पहले के समान

श्लोकार्थ—अगर जीव जननेन्द्रिय और पेट के ही निमित्त उद्योग में लगा हुआ; एवम् दुष्ट लोगों के साथ उनके रास्ते पर चलता हुआ बिहार करता है तो वह पहले के समान फिर से नारकी योनियों में प्रवेश करता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

सत्यं शौचं दया मौनं बुद्धिः श्रीर्ह्रीर्यशः क्षमा ।
शमो दमो भगश्चेति यत्सङ्गाद्याति सङ्क्षयम् ॥३३॥

पदच्छेद— सत्यम् शौचम् दया मौनम् बुद्धिः श्रीः ह्रीः यशः क्षमा ।
शमः दमः भगः च इति यत् सङ्गात् याति सङ्क्षयम् ॥

शब्दार्थ—

सत्यम्	३.	(उसके) सत्य	शमः	१२.	जितेन्द्रियता
शौचम्	४.	बाहर और भीतर की पवित्रता	दमः	१३.	मन का दमन
दया	५.	दयालुता	भगः	१५.	ऐश्वर्य
मौनम्	६.	मितभाषिता	च	१४.	और
बुद्धिः	७.	विवेक	इति	१६.	ये सब
श्रीः	८.	सम्पत्ति	यत्	१.	जिन दुष्टों के
ह्रीः	९.	लज्जा	सङ्गात	२.	कुसंग से
यशः	१०.	कीर्ति	याति	१८.	हो जाते हैं
क्षमा ।	११.	सहन शीलता	सङ्क्षयम् ॥	१७.	नष्ट

श्लोकार्थ—जिन दुष्टों के कुसंग से उसके सत्य, बाहर और भीतर की पवित्रता, दयालुता, मितभाषिता विवेक, सम्पत्ति, लज्जा, कीर्ति सहनशीलता, जितेन्द्रियता, मन का दमन और ऐश्वर्य ये सब नष्ट हो जाते हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तेष्वशान्तेषु मूढेषु खण्डितात्मस्वसाधुषु ।
सङ्गं न कुर्याच्छोच्येषु योषित्क्रीडामृगेषु च ॥३४॥

पदच्छेद— तेषु अशान्तेषु मूढेषु खण्डित आत्मषु साधुषु ।
सङ्गम न कुर्यात् शोच्येषु योषित् क्रीडा, मृगेषु च ॥

शब्दार्थ—

तेषु	१.	उन	सङ्गम	११.	साथ
अशान्तेषु	५.	अशान्त	न	१२.	नहीं
मूढेषु	६.	मूर्ख	कुर्यात्	१३.	करना चाहिये
खण्डित	८.	अजित	शोच्येषु	२.	अत्यन्त शोचनीय
आत्मषु	९.	इन्द्रिय	योषित्	३.	स्त्रियों के
असाधुषु ।	१०.	दुष्ट जनों का	क्रीडा, मृगेषु	४.	खिलौने
			च ॥	७.	और

श्लोकार्थ—उन अत्यन्त शोचनीय स्त्रियों के खिलौने अशान्त मूर्ख और अजित इन्द्रिय दुष्ट जनों का साथ नहीं करना चाहिये ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

न तथास्य भवेन्मोहो बन्धश्चान्यप्रसङ्गतः ।
योषित्सङ्गाद्यथा पुंसो यथा तत्सङ्गिसङ्गतः ॥३५॥

पदच्छेद—

न तथा अस्य भवेत् मोहः बन्धः च अन्य प्रसङ्गतः ।
योषित् सङ्गात् यथा पुंसः यथा तत् सङ्गि सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

न	८.	नहीं	योषित्	११.	स्त्रियों के
तथा	४.	वैसा	सङ्गात्	१२.	सङ्ग से (अथवा)
अस्य	१.	इस	यथा	१०.	जैसा
भवेत्	९.	हो सकता है	पुंसः	२.	पुरुष को
मोहः	५.	अज्ञान	यथा	१३.	जैसा
बन्धः	७.	बन्धन	तत्	१४.	स्त्रियों के
च	६.	और	सङ्गि	१५.	चक्कर में रहने वालों के
अन्य प्रसङ्गतः ।	३.	किसी और के साथ से	सङ्गतः ॥	१६.	साथ से (होता है)

श्लोकार्थ—इस पुरुष को किसी और के साथ से वैसा अज्ञान और बन्धन नहीं हो सकता है । जैसा स्त्रियों के सङ्ग से अथवा जैसा स्त्रियों के चक्कर में रहने वालों के साथ से होता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

प्रजापतिः स्वां दुहितरं दृष्ट्वा तद्रूपधर्षितः ।
रोहिद्भूतां सोऽन्वधावदृक्षरूपी हतत्रपः ॥३६॥

पदच्छेद—

प्रजापतिः स्वाम् दुहितरम् दृष्ट्वा तद् रूप धर्षितः ।
रोहित् भूताम् सः अन्वधावत् ऋक्षरूपी हत त्रपः ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतिः	४.	प्रजापति ब्रह्मा जी	रोहित्	८.	मृगी का
स्वाम्	१.	एक बार अपनी	भूताम्	९.	रूप धारण करके
दुहितरम्	२.	पुत्री (सरस्वती को)	सः	१०.	उसके भागने पर वे भी
दृष्ट्वा	३.	देखकर	अन्वधावत्	१४.	पीछे-पीछे दौड़ने लगे
तद्	५.	उसके	ऋक्षरूपी	११.	मृग का रूप धारण करके (तथा)
रूप	६.	सौन्दर्य से	हत	१३.	छोड़कर
धर्षितः ।	७.	मोहित हो गये (और)	त्रपः ॥	१२.	लज्जा

श्लोकार्थ—एक बार अपनी पुत्री सरस्वती को देखकर प्रजापति ब्रह्मा जी उसके सौन्दर्य से मोहित हो गये; और मृगी का रूप धारण करके उसके भागने पर वे भी मृग का रूप धारण करके तथा लज्जा छोड़कर पीछे-पीछे दौड़ने लगे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तत्सृष्टसृष्टसृष्टेषु को न्वखण्डितधीः पुमान् ।
ऋषिं नारायणमृते योषिन्मय्येह मायया ॥३७॥

पदच्छेद—

तत् सृष्ट सृष्ट सृष्टेषु कः नु अखण्डित, धीः पुमान् ।
ऋषिम् नारायणम् ऋते योषिन्मय्या इह मायया ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उन ब्रह्मा जी से उत्पन्न	पुमान् ।	११.	मनुष्य है (जो)
सृष्ट	२.	मरीचि आदि से	ऋषिम्	५.	आदि ऋषि
सृष्ट	३.	पैदा हुये कश्यपादि से	नारायणम्	६.	एक नारायण को
सृष्टेषु	४.	रचित मनुष्य में	ऋते	७.	छोड़कर
कः	६.	कौन	योषिन्मय्या	१३.	स्त्री रूपिणी
नु	८.	भला	इह	१२.	इस संसार में
अखण्डित, धीः	१०.	विवेक, बुद्धि वाला	मायया ॥	१४.	माया से (मोहित न हुआ हो)

श्लोकार्थ—उन ब्रह्मा जी से उत्पन्न मरीचि आदि से पैदा हुये कश्यपादि से रचित मनुष्यों में आदि ऋषि नारायण को छोड़कर भला कौन विवेक बुद्धि वाला मनुष्य है, जो इस संसार में स्त्रीरूपिणी माया से मोहित न हुआ हो ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

बलं मे पश्य मायायाः स्त्रीमय्या जयिनो दिशाम् ।
या करोति पदाक्रान्तान् भ्रूविजृम्भेण केवलम् ॥३८॥

पदच्छेद—

बलम् मे पश्य मायायाः स्त्रीमय्याः जयिनः दिशाम् ।
या करोति पद आक्रान्तान् भ्रू विजृम्भेण केवलम् ॥

शब्दार्थ—

बलम्	४.	शक्ति को	या	६.	जो
मे	१.	मेरी	करोति	१४.	देती है
पश्य	५.	देखो	पद	१२.	(अपने) पैरों से
मायायाः	३.	माया की	आक्रान्तान्	१३.	रौंद
स्त्रीमय्याः	२.	स्त्री रूपिणी	भ्रू	७.	अपने भौंहों के
जयिनः	११.	जीतने वाले वीरों को भी	विजृम्भेण	८.	विलास
दिशाम् ।	१०.	चारों दिशाओं को	केवलम् ॥	९.	मात्र से

श्लोकार्थ—मेरी स्त्री रूपिणी माया की शक्ति को देखो; जो अपने भौंहों के विलास मात्र से चारों दिशाओं को जीतने वाले वीरों को भी अपने पैरों से रौंद देती है ।

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सङ्गं न कुर्यात्प्रमदासु जातु योगस्य पारं परमारुरुक्षुः ।
मत्सेवया प्रतिलब्धात्मलाभो वदन्ति या निरयद्वारमस्य ॥३९॥

पदच्छेद— सङ्गम् न कुर्यात् प्रमदासु जातु, योगस्य पारम् परम् आरुरुक्षुः ।
मत् सेवया प्रतिलब्ध आत्म लाभः वदन्ति याः निरयः द्वारम् अस्य ॥

शब्दार्थ—

सङ्गम्	११.	साथ,	मत्,सेवया,	५.	(तथा) मेरी, सेवा भक्ति से
न	१२.	नहीं	प्रतिलब्ध	६.	जिसे
कुर्यात्	१३.	करना चाहिये (क्योंकि)	आत्म	७.	आत्मा के स्वरूप का
प्रमदासु	१०.	स्त्रियों का	लाभः	८.	ज्ञान प्राप्त हो गया है (उसे)
जातु	९.	कभी भी	वदन्ति	१८.	कहते हैं
योगस्य	१.	योग के	याः	१४.	उन्हें
पारम्	३.	पद पर	निरयः	१६.	नरक का
परम्	२.	परम्	द्वारम्	१७.	खुला द्वार
आरुरुक्षुः ।	४.	आरूढ होने के इच्छुक पुरुष को	अस्य ॥	१५.	पुरुष के लिये

श्लोकार्थ—योग के परम् पद पर आरूढ़ होने के इच्छुक पुरुष को तथा मेरी सेवा भक्ति से जिसे आत्मा के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त हो गया है उसे कभी भी स्त्रियों का साथ नहीं करना चाहिये; क्योंकि उन्हें पुरुष के नरक का खुला द्वार कहते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

योपयाति शनैर्माया योषिद्देवविनिर्मिता ।
तामीक्षेतात्मनो मृत्युं तृणैः कूपमिवावृतम् ॥४०॥

पदच्छेद— या उपयाति शनैः माया योषित् देव विनिर्मिता ।
ताम् ईक्षेत् आत्मनः मृत्युम् तृणैः कूपम् इव आवृतम् ॥

शब्दार्थ—

या	४.	जो	ताम्	११.	उसे
उपयाति	७.	पास में आती है	ईक्षेत्	१४.	समझनी चाहिये
शनैः	६.	धीरे-धीरे	आत्मनः, मृत्युम्	१२,१३.	अपनी, मौत
माया	५.	माया	तृणैः	८.	तिनके से
योषित्	३.	स्त्री-रूपी	कूपम्, इव	१०.	कुयें के, समान
देव,विनिर्मिता।	१.२.	भगवान् से, रचित	आवृतम् ॥	९.	ढके हुये

श्लोकार्थ—भगवान् से रचित स्त्री रूपी जो माया धीरे-धीरे पास में आती है; तिनके से ढके कुयें के समान उसे अपनी मौत समझनी चाहिये ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

यां मन्यते पतिं मोहान्मन्मायामृषभायतीम् ।
स्त्रीत्वं स्त्रीसङ्गतः प्राप्तो वित्तापत्यगृहप्रदम् ॥४१॥

पदच्छेद—

याम् मन्यते पतिम् मोहात् मत् मायाम् ऋषभा यतीम् ।
स्त्रीत्वम् स्त्री सङ्गतः प्राप्तः वित्त अपत्य गृह प्रदम् ॥

शब्दार्थ—

याम्	७.	जिस	स्त्रीत्वम्	३.	स्त्री की योनि को
मन्यते	१६.	मानने लगता है	स्त्री	१.	अन्त समय स्त्रियों में
पतिम्	१५.	पति	सङ्गतः	२.	आसक्ति होने से (मनुष्य)
मोहात्	१०.	अज्ञानवश	प्राप्तः	४	प्राप्त होता है (उस समय)
मत्	८.	मेरी	वित्त,अपत्य	११,१२.	धन, पुत्र और
मायाम्	९.	माया को ही (वह)	गृह	१३.	घर
ऋषभा, यतीम् ।	५,६.	पुरुष रूप में, प्रतीत होने वाली	प्रदम् ॥	१४.	प्रदान करने वाला

श्लोकार्थं—अन्त समय स्त्रियों में आसक्ति होने से मनुष्य स्त्री की योनि को प्राप्त होता है । उस समय पुरुष रूप में प्रतीत होने वाली मेरी माया को ही वह अज्ञानवश धन, पुत्र और घर प्रदान करने वाला पति मानने लगता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तामात्मनो विजानीयात्पत्यपत्यगृहात्मकम् ।
दैवोपसादितं मृत्युं मृगयोर्गायनं यथा ॥४२॥

पदच्छेद—

ताम् आत्मनः विजानीयात् पति अपत्य गृह आत्मकम् ।
दैव उपसादितम् मृत्युम् मृगयोः गायनम् यथा ॥

शब्दार्थ—

ताम्	८.	उस माया को	दैव	९.	भगवान् के द्वारा
आत्मनः	११.	अपनी	उपसादितम्	१०.	दिया गया
विजानीयात्	१३.	समझना चाहिये	मृत्युम्	१२.	मौत का कारण
पति	४.	(उसी प्रकार) पति	मृगयोः	२.	व्याध का
अपत्य	५.	पुत्र (और)	गायनम्	३.	गान पक्षियों के नाश का कारण होता है
गृह	६.	घर	यथा ॥	१.	जैसे
आत्मकम् ।	७.	स्वरूप			

श्लोकार्थ—जैसे व्याध का गान पक्षियों के नाश का कारण होता है । उसी प्रकार पति, पुत्र और घर स्वरूप उस माया को भगवान् के द्वारा दिया गया अपनी मौत का कारण समझना चाहिये ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

देहेन जीवभूतेन लोकाल्लोकमनुव्रजन् ।
भुञ्जान एव कर्माणि करोत्यविरतं पुमान् ॥४३॥

पदच्छेद—

देहेन जीव भूतेन लोकात् लोकम् अनुव्रजन् ।
भुञ्जानः एव कर्माणि करोति अविरतम् पुमान् ॥

शब्दार्थ—

देहेन	३.	सूक्ष्म शरीर से	भुञ्जानः	८.	प्रारब्ध कर्मों को भोगता है
जीव	१.	जीव के	एव	११.	भी
भूतेन	२.	उपाधिरूप	कर्माणि	१०.	दूसरे कर्मों को
लोकात्	५.	एक लोक से	करोति	१२.	करता है
लोकम्	६.	दूसरे लोक में	अविरतम्	९.	(तथा) निरन्तर
अनुव्रजन् ।	७.	विचरण करता हुआ	पुमान् ॥	४.	पुरुष

श्लोकार्थ—जीव के उपाधिरूप सूक्ष्म शरीर से पुरुष एक लोक से दूसरे लोक में विचारण करता हुआ प्रारब्ध कर्मों को भोगता है। तथा निरन्तर दूसरे कर्मों को भी करता है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

जीवो ह्यस्यानुगो देहो भूतेन्द्रियमनोमयः ।
तन्निरोधोऽस्य मरणमाविर्भावस्तु सम्भवः ॥४४॥

पदच्छेद—

जीवः हि अस्य अनुगः देहः भूत इन्द्रिय मनोमयः ।
तद् निरोधः अस्य मरणम् आविर्भावः तु सम्भवः ॥

शब्दार्थ—

जीवः	१.	जीव	तद्	९.	सूक्ष्म शरीर और, स्थूल शरीर का
हि	७.	ही (उसका)	निरोधः	१०.	एक साथ न रहना
अस्य	२.	इस उपाधि रूप सूक्ष्म शरीर के	अस्य	११.	इस जीव की
अनुगः	३.	साथ रहता है	मरणम्	१२.	मृत्यु है
देहः	८.	भोगाधिष्ठान है	आविर्भावः	१४.	उन दोनों का, एक साथ प्रकट होना
भूत	४.	पंच महाभूत	तु	१३.	तथा
इन्द्रिय	५.	इन्द्रिय (और)	सम्भवः ॥	१५.	जन्म है
मनोमयः ।	६.	मन कार्य रूप स्थूल शरीर			

श्लोकार्थ—जीव इस उपाधि रूप सूक्ष्म शरीर के साथ रहता है। पंच महाभूत, इन्द्रिय और मन का कार्यरूप स्थूल शरीर ही उसका भोगाधिष्ठान है। सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर का एक साथ न रहना इस जीव की मत्यु है। तथा उन दोनों का एक साथ प्रकट होना जन्म है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

द्रव्योपलब्धिस्थानस्य द्रव्येक्षायोग्यता यदा ।
तत्पञ्चत्वमहंमानादुत्पत्तिर्द्रव्यदर्शनम् ॥४५॥

पदच्छेद—

द्रव्य उपलब्धि स्थानस्य द्रव्य ईक्ष्य अयोग्यता यदा ।
तत् पञ्चत्वम् अहम् मानात् उत्पत्ति द्रव्य दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

द्रव्य	१.	पदार्थ के	तत्	८.	(तब) उसे
उपलब्धि	२.	अनुभव	पञ्चत्वम्	६.	मृत्यु कहते हैं (तथा)
स्थानस्य	३.	स्थान शरीर में	अहम्	१०.	मैं और मेरे पन के
द्रव्य	५.	पदार्थों के	मानात्	११.	अभिमान से
ईक्ष्य	६.	दर्शन की	उत्पत्ति	१४.	जन्म है
अयोग्यता	७.	योग्यता नहीं होती	द्रव्य	१२.	पदार्थों का
यदा ।	४.	जब	दर्शनम् ॥	१३.	अनुभव करना ही

श्लोकार्थ——पदार्थ के अनुभव स्थान शरीर में जब पदार्थों के दर्शन की योग्यता नहीं होती तब उसे मृत्यु कहते हैं । तथा मैं और मेरेपन के अभिमान से पदार्थों का अनुभव करना ही जन्म है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

यथाक्ष्णोर्द्रव्यावयवदर्शनायोग्यता यदा ।
तदैव चक्षुषो द्रष्टुर्द्रष्टृत्वायोग्यतानयोः ॥४६॥

पदच्छेद—

यथा अक्षणोः द्रव्य अवयव दर्शन अयोग्यता यदा ।
तदा एव चक्षुषः द्रष्टुः द्रष्टृत्व अयोग्यता अनयोः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	तदा एव	८.	उसी समय
अक्षणोः	२.	नेत्रों की	चक्षुषः	६.	शक्तिरूप, चक्षुः इन्द्रिय (और)
द्रव्य	४.	पदार्थों के	द्रष्टुः	१०.	जीव
अवयव	५.	रूप	द्रष्टृत्व	३२.	देखने की
दर्शन	६.	दर्शन की	अयोग्यता	३३.	सामर्थ्य नहीं रहती है
अयोग्यता	७.	असामर्थ्य होती है	अनयोः ॥	३३.	इन दोनों में (भी)
यदा ।	३.	जब			

श्लोकार्थ——जैसे नेत्रों की जब पदार्थों के रूप दर्शन की असामर्थ्य होती है। उसी समय शक्ति रूप चक्षुः इन्द्रिय और जीव इन दोनों में भो देखने की सामर्थ्य नहीं रहती है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मान्न कार्यः सन्त्रासो न कार्पण्यं न सम्भ्रमः ।
बुद्ध्वा जीवगतिं धीरो मुक्तसङ्गश्चरेदिह ।।४७।।

पदच्छेद—

तस्मात् न कार्यः सन्त्रासः न कार्पण्यम् न सम्भ्रमः ।
बुद्ध्वा जीव गतिम् धीरः मुक्त सङ्गः चरेत् इह ।

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	बुद्ध्वा	१२.	समझकर
न	३.	न	जीव	१०.	जीव के
कार्यः	६.	करनी चाहिये (अपितु)	गतिम्	११.	वास्तविक स्वरूप को
सन्त्रासः	४.	भय	धीरः	२.	धीर पुरुष को
न	५.	न	मुक्त	१५.	रहित होकर
कार्पण्यम्	६.	दीनता (और)	सङ्गः	१४.	आसक्ति से
न	७.	न	चरेत्	१६.	विचरण करना चाहिये
सम्भ्रमः ।	८.	भ्रान्ति	इह ।।	१३.	इस संसार में

श्लोकार्थ—इसलिये धीर पुरुष को न भय न दीनता और न भ्रान्ति करनी चाहिये । अपितु जीव के वास्तविक स्वरूप को समझकर इस संसार में आसक्ति से रहित होकर विचरण करना चाहिये ।।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

सम्यग्दर्शनया बुद्ध्या योगवैराग्ययुक्तया ।
मायाविरचिते लोके चरेन्न्यस्य कलेवरम् ।।४८।।

पदच्छेद—

सम्यक् दर्शनया बुद्धया योग वैराग्य युक्तया ।
माया विरचिते लोके चरेत् नयस्य कलेवरम् ।।

शब्दार्थ—

सम्यक्	४.	वास्तविक स्वरूप का	माया	१.	माया के द्वारा
दर्शनया	५.	दर्शन करने वाली	विरचिते	२.	निर्मित
बुद्धया	६.	बुद्धि के द्वारा	लोके	३.	संसार
योग	६.	योग (और)	चरेत्	१२.	विचरण करना चाहिये
वैराग्य	७.	विराग से	नयस्य	११.	धरोहर समझकर
युक्त्या ।	८.	सम्पन्न	कलेवरम् ।।	१०.	शरीर को

श्लोकार्थ—माया के द्वारा निर्मित संसार में वास्तविक स्वरूप का दर्शन करने वाली योग और विराग से सम्पन्न बुद्धि के द्वारा शरीर को धरोहर समझकर विचरण करना चाहिये ।।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेयोपाख्याने
जीवगतिर्नामैकत्रिंशोऽध्यायः समाप्तः ।।३१।।

ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

द्वात्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

कपिल उवाच—अथ यो गृहमेधीयान्धर्मानेवावसन् गृहे ।
कामम‍र्थं च धर्मान् स्वान् दोग्धि भूयः पिपर्ति तान् ॥१॥

पदच्छेद—

अथ यः गृहमेधीयान् धर्मान् एव अवसन् गृहे ।
कामम् अर्थम् च धर्मान् स्वान् दोग्धि, भूयः पिपर्ति तान् ॥

शब्दार्थ—

अथ	७.	तथा	कामम्	१०.	काम का
यः	१.	जो पुरुष	अर्थम्	१२.	अर्थ का
गृहमेधीयान्	४.	गृहस्थ के	च	११.	और
धर्मान्	६.	धर्मों का (पालन करता है)	धर्मान्	९.	धर्मों से
एव	५.	ही	स्वान्	८.	अपने
आवसन्	३.	रहता हुआ	दोग्धि, भूयः	१३.	भोग करता है (एवं) फिर से
गृहे ।	२.	घर में	पिपर्ति,	१५.	पालन करता है
			तान् ॥	१४.	उन्हीं का

श्लोकार्थ—जो पुरुष घर में रहता हुआ गृहस्थ के धर्मों का पालन करता है । तथा अपने धर्मों से काम का और अर्थ का भोग करता है । एवं फिर से उन्हीं का पालन करता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

स चापि भगवद्धर्मात्काममूढः पराङ्मुखः ।
यजते क्रतुभिर्देवान् पितॄंश्च श्रद्धयान्वितः ॥२॥

पदच्छेद—

सः च अपि भगवत् धर्मात् काममूढः पराङ्मुखः ।
यजते क्रतुभिः देवान् पितॄन् च श्रद्धया अन्वितः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	यजते	१४.	पूजन करता है
च	४.	और	क्रतुभिः	८.	यज्ञों के द्वारा
अपि	२.	भी	देवान्	११.	देवताओं का
भगवत्	५.	भगवान् की	पितॄन्	१३.	पितरों का
धर्मात्	६.	भक्ति से	च	१२.	और
काममूढः	३.	कामनाओं से मोहित	श्रद्धया	९.	श्रद्धा के
पराङ्मुखः।	७	विमुख होकर	अन्वितः ॥	१०.	साथ

श्लोकार्थ—वह भी कामनाओं से मोहित और भगवान् की भक्ति से विमुख होकर यज्ञों के द्वारा श्रद्धा के साथ देवताओं का और पितरों का पूजन करता है ॥

तृतीयः श्लोकः

तच्छ्रद्धयाक्रान्तमतिः पितृदेवव्रतः पुमान् ।
गत्वा चान्द्रमसं लोकं सोमपाः पुनरेष्यति ॥३॥

पदच्छेद—

तत् श्रद्धया आक्रान्त मतिः पितृ देव व्रतः पुमान् ।
गत्वा चान्द्रमसम् लोकम् सोमपाः पुनः एष्यति ॥

शब्दार्थ—

तत्	२.	उस	गत्वा	१०.	जाकर (और वहाँ)
श्रद्धया	३.	श्रद्धा से	चान्द्रमसम्	८.	चन्द्रमा के
आक्रान्त	४.	युक्त रहती है	लोकम्	९.	लोक में
मतिः	१.	उसकी बुद्धि	सोमपाः	११.	सोमपान करके
पितृ देव	५.	पितर और देवता (उसके)	पुनः	१२.	(पुण्य क्षीण होने पर) फिर से
व्रतः	६.	उपास्य होते हैं	एष्यति ॥	१३.	(इस लोक में) आता है
पुमान् ।	७.	(अतः वह) पुरुष			

श्लोकार्थ—उसकी बुद्धि उस श्रद्धा से युक्त रहती है, पितर और देवता उसके उपास्य होते हैं । अतः वह पुरुष चन्द्रमा के लोक में जाकर और वहाँ सोमपान करके पुण्यक्षीण होने पर फिर से इस लोक में लौट आता है ।

चतुर्थः श्लोकः

यदा चाहीन्द्रशय्यायां शेतेऽनन्तासनो हरिः ।
तदा लोका लयं यान्ति त एते गृहमेधिनाम् ॥४॥

पदच्छेद—

यदा च अहीन्द्र शय्यायाम् शेते अनन्त आसनः हरिः ।
तदा लोकाः लयम् यान्ति ते एते गृहमेधिनाम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जब	तदा	८.	उस समय
च	१.	तथा	लोकाः	१२.	लोक
अहीन्द्र	५.	शेष नाग की	लयम्	१३.	लीन
शय्यायाम्	६.	शय्या पर	यान्ति	१४.	हो जाते हैं
शेते	७.	शयन करते हैं	ते	१०.	प्राप्त होने वाले
अनन्त आसनः	३.	शेषशायी	एते	११.	ये सब
हरिः ।	४.	भगवान् श्री हरि	गृह मेधिनाम् ॥	९.	गृहस्थाश्रमियों को

श्लोकार्थ—तथा जब शेषशायी भगवान् श्री हरि शेष नाग की शय्या पर शयन करते हैं, उस समय गृहस्थाश्रमियों को प्राप्त होने वाले ये सब लोक लीन हो जाते हैं ।

पञ्चमः श्लोकः

ये स्वधर्मान्न दुह्यन्ति धीराः कामार्थहेतवे ।
निःसङ्गा न्यस्तकर्माणः प्रशान्ताः शुद्धचेतसः ॥५॥

पदच्छेद—

ये स्वधर्मात् न दुह्यन्ति धीराः काम अर्थ हेतवे ।
निः सङ्गाः न्यस्त कर्माणः प्रशान्ताः शुद्ध चेतसः ॥

शब्दार्थ—

ये	१. जो	निःसङ्गा	७. अनासक्त
स्वधर्मात्	५. अपने धर्म का	न्यस्त	९. विरत
न दुह्यन्ति	६. उपयोग नहीं करते हैं (वे)	कर्माणः	८. कर्मों से
धीराः	२. विवेकी पुरुष	प्रशान्ताः	१०. अत्यन्तशान्त (और)
काम	३. काम और	शुद्ध	११. निर्मल
अर्थ हेतवे ।	४. अर्थ के लिये	चेतसः ॥	१२. मनवाले (होते हैं)

श्लोकार्थ—जो विवेकी पुरुष काम और अर्थ के लिये अपने धर्म का उपयोग नहीं करते हैं। वे अनासक्त, कर्मों से विरत, अत्यन्तशान्त और निर्मल मन वाले होते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

निवृत्तिधर्मनिरता निर्ममा निरहङ्कृताः ।
स्वधर्माख्येन सत्त्वेन परिशुद्धेन चेतसा ॥६॥

पदच्छेद—

निवृत्ति धर्म निरताः निर्ममाः निरहङ्कृताः ।
स्वधर्म आख्येन सत्त्वेन परिशुद्धेन चेतसा ।

शब्दार्थ—

निवृत्ति	१. वे संन्यास	स्वधर्म	७. अपने धर्म
धर्म	२. धर्म में	आख्येन	८. स्वरूप
निरताः	३. परायण	सत्त्वेन	९. सत्त्वगुण से
निर्ममाः	४. ममता से रहित (और)	परिशुद्धेन	१०. निर्मल हो जाता है
निरहङ्कृताः ।	५. अभिमान से रहित (होते हैं)	चेतसा ॥	६. (तथा उनका) चित्त

श्लोकार्थ— वे संन्यास धर्म में परायण, ममता से रहित और अभिमान से रहित होते हैं। तथा उनका चित्त अपने धर्म स्वरूप सत्त्वगुण से निर्मल हो जाता है ॥

सप्तमः श्लोकः

सूर्यद्वारेण ते यान्ति पुरुषं विश्वतोमुखम् ।
परावरेशं प्रकृतिमस्योत्पत्त्यन्तभावनम् ॥७॥

पदच्छेद—

सूर्य द्वारेण ते यान्ति पुरुषम् विश्वतोमुखम् ।
परावरेशम् प्रकृतिम् अस्य उत्पत्ति अन्त भावनम् ॥

शब्दार्थ—

सूर्य	२.	सूर्य के	परावरेशम्	५.	परात्पर
द्वारेण	३.	द्वार से	प्रकृतिम्	९.	उपादान कारण हैं
ते	१.	वे पुरुष	अस्य	८.	जो इस संसार के
यान्ति	७.	प्राप्त करते हैं	उत्पत्ति	१०.	(और इसका) जन्म
पुरुषम्	६.	परम पुरुष को	अन्त	११.	संहार करते हैं
विश्वतोमुखम् ।	४.	सर्व व्यापक	भावनम् ॥	१२.	पालन एवं

श्लोकार्थ—वे पुरुष सूर्य के द्वार से सर्वव्यापक परात्पर परम पुरुष को प्राप्त करते हैं, जो इस संसार के उपादान कारण हैं और इसका जन्म, पालन एवं संहार करते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

द्विपरार्द्धावसाने यः प्रलयो ब्रह्मणस्तु ते ।
तावदध्यासते लोकं परस्य परचिन्तकाः ॥८॥

पदच्छेद—

द्विपरार्द्ध अवसाने यः प्रलयः ब्रह्मणः तु ते ।
तावद् अध्यासते लोकम् परस्य परचिन्तकाः ॥

शब्दार्थ—

द्विपरार्द्ध	१.	दो परार्धकाल के	ते	७.	वे
अवसाने	२.	अन्त में	तावद्	६.	तब-तक
यः	४.	जो	अध्यासते	१२.	निवास करते हैं
प्रलयः	५.	प्रलय होता है	लोकम्	११.	लोक में
ब्रह्मणः	३.	ब्रह्मा जी का	परस्य	९.	ब्रह्मा जी के
तु	१०.	ही	परचिन्तकाः ॥	८.	ब्रह्मा जी के उपासक

श्लोकार्थ—दो परार्धकाल के अन्त में ब्रह्मा जी का जो प्रलय होता है, तब-तक वे ब्रह्मा जी के उपासक ब्रह्माजी के ही लोक में निवास करते हैं ॥

नवमः श्लोकः

क्ष्माम्भोऽनलानिलवियन्मनइन्द्रियार्थभूतादिभिः परिवृतं प्रतिसञ्जिहीर्षुः ।
अव्याकृतं विशति यर्हि गुणत्रयात्मा कालं पराख्यमनुभूय परः स्वयम्भूः ॥९॥

पदच्छेद—
क्ष्मा अम्भः अनल अनिल वियत् मनः इन्द्रिय अर्थ भूत आदिभिः परिवृतम् प्रतिसञ्जिहीर्षुः ।
अव्याकृतम् विशति यर्हि गुणत्रय आत्मा कालम् पराख्यम् अनुभूय परः स्वयम्भूः ॥

शब्दार्थ—

क्ष्मा, अम्भः	६.	पृथ्वी, जल	अव्याकृतम्	१७.	निर्विशेष परमात्मा में
अनल, अनिल	७.	अग्नि, वायु	विशति	१८.	लीन हो जाते हैं
वियत्, मनः	८.	आकाश, मन	यर्हि	१.	जिस समय
इन्द्रिय	९.	इन्द्रिय	गुणत्रय	१५.	तीनों गुणों के साथ
अर्थ	१०.	उनके शब्दादि विषय (और)	आत्मा	१६.	एक रूप होकर
भूत	११.	अहंकार	कालम्	४.	काल के अधिकार का
आदिभिः	१२.	इत्यादि के	पराख्यम्	३.	अपने दो परार्ध
परिवृतम्	१३.	सहित (सम्पूर्ण विश्व से)	अनुभूय	५.	भोग करके
प्रतिसञ्जिहीर्षुः ।	१४.	संहार करने की इच्छा से	परःस्वयम्भूः ॥	२.	देवतादि से श्रेष्ठ, ब्रह्मा जी

श्लोकार्थ—जिस समय देवता आदि से श्रेष्ठ ब्रह्मा जी अपने दो परार्ध काल के अधिकार का भोग करके पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, इन्द्रिय, उनके शब्दादि विषय और अहंकार इत्यादि के सहित सम्पूर्ण विश्व के संहार करने की इच्छा से तीनों गुणों के साथ एकरूप होकर निर्विशेष परमात्मा में लीन हो जाते हैं ॥

दशमः श्लोकः

एवं परेत्य भगवन्तमनुप्रविष्टा ये योगिनो जितमरुन्मनसो विरागाः ।
तेनैव साकममृतं पुरुषं पुराणं ब्रह्म प्रधानमुपयान्त्यगताभिमानाः ॥१०॥

पदच्छेद—एवम् परेत्य भगवन्तम् अनुप्रविष्टा ये योगिनः जित मरुत् मनसः विरागाः ।
तेन एव साकम् अमृतम् पुरुषम् पुराणम् ब्रह्म प्रधानम् उपयान्ति अगत अभिमानाः ॥

शब्दार्थ—

एवम्, परेत्य	८.	एवम्, शरीर का त्याग करके	एव	१२.	ही
भगवन्तम्	९.	भगवान् ब्रह्मा जी में	साकम्, अमृतम्	१३.	साथ, परमानन्द
अनुप्रविष्टा	१०.	प्रवेश किये रहते हैं	पुरुषम्	२४.	पुरुष
ये, योगिनः	४.	जो, योगिजन	पुराणम्	१४.	पुराण
जित	७.	जीत कर	ब्रह्म	१७.	ब्रह्म में
मरुत्	५	प्राण वायु को (और)	प्रधानम्	१६.	परात्पर
मनसः	६.	मनको	उपयान्ति	१८.	लीन हो जाते हैं
विरागाः ।	१.	(उस समय) अनासक्त (और)	अगत	३.	रहित
तेन	११.	(वे) उनके	अभिमानाः ॥	२.	अभिमान से

श्लोकार्थ—उस समय अनासक्त और अभिमान से रहित जो योगिजन प्राण वायु को और मन को जीत कर एवम् शरीर का त्याग करके भगवान् ब्रह्मा जी में प्रवेश किये रहते हैं, वे उनके ही साथ परमानन्द पुराण पुरुष परात्पर ब्रह्म में लीन हो जाते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

अथ तं सर्वभूतानां हृत्पद्मेषु कृतालयम् ।
श्रुतानुभावं शरणं व्रज भावेन भामिनि ॥११॥

पदच्छेद—

अथ तम् सर्वभूतानाम् हृत् पद्मेषु कृत आलयम् ।
श्रुत अनुभावम् शरणम् व्रज भावेन भामिनि ॥

शब्दार्थ—

अथ	२.	अब तुम	श्रुत	६.	सुना है
तम्	१०.	उन भगवान् की	अनुभावम्	८.	जिनका प्रभाव (हमसे)
सर्वभूतानाम्	४.	सभी प्राणियों के	शरणम्	११.	शरण में
हृत् पद्मेषु	५.	हृदय कमल में	व्रज	१२.	जाओ
कृत	७.	करने वाले (तथा)	भावेन	३.	भक्तिभाव से
आलयम् ।	६.	निवास	भामिनि ॥	१.	हेमातः !

श्लोकार्थ—हे मातः ! अब तुम भक्ति भाव से सभी प्राणियों के हृदय कमल में निवास करने वाले तथा जिनका प्रभाव हमसे सुना है, उन भगवान् की शरण में जाओ ॥

द्वादशः श्लोकः

आद्यः स्थिरचराणां यो वेदगर्भः सहर्षिभिः ।
योगेश्वरैः कुमाराद्यैः सिद्धैर्योगप्रवर्तकैः ॥१२॥

पदच्छेद—

आद्यः स्थिर चराणाम् यः वेदगर्भः सह ऋषिभिः ।
योगेश्वरैः कुमाराद्यैः सिद्धैः योग प्रवर्तकैः ॥

शब्दार्थ—

आद्यः	३.	आदि कारण	योगेश्वरः	८.	योगेश्वर (और)
स्थिर	१.	स्थावर (और)	कुमाराद्यैः	७.	सनकादि कुमार आदि
चराणाम्	२.	जङ्गम रूप संसार के	सिद्धैः	११.	सिद्ध गणों के साथ रहते हैं
यः	४.	जो	योग	६.	योग शास्त्र के
वेदगर्भः	५.	ब्रह्मा जी	प्रवर्तकैः ॥	१०.	संस्थापक
सह ऋषिभिः ।	६.	मरीचि आदि ऋषि			

श्लोकार्थ—स्थावर और जङ्गमरूप संसार के आदि कारण जो ब्रह्मा जी मरीचि आदि ऋषि, सनकादि-कुमार आदि योगेश्वर और योगशास्त्र के संस्थापक सिद्धगणों के साथ रहते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

भेददृष्ट्याभिमानेन निःसङ्गेनापि कर्मणा ।
कर्तृत्वात्सगुणं ब्रह्म पुरुषं पुरुषर्षभम् ॥१३॥

पदच्छेद—

भेद दृष्ट्या अभिमानेन निःसङ्गेन अपि कर्मणा ।
कर्तृत्वात् सगुणम् ब्रह्म पुरुषम् पुरुषर्षभम् ॥

शब्दार्थ—

भेद दृष्ट्या	४.	भेद की दृष्टि होने से (तथा)	कर्तृत्वात्	५.	कर्तापन के
अभिमानेन	६.	अभिमान के कारण	सगुणम्	९.	सगुण
निः सङ्गेन	१.	निष्काम	ब्रह्म	१०.	ब्रह्म को (प्राप्त करते हैं)
अपि	३.	भी (वे ब्रह्मादि)	पुरुषम्	८.	आदि पुरुष
कर्मणा ।	२.	कर्म करने पर	पुरुषर्षभम् ॥	७.	पुरुषों में श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—निष्काम कर्म करने पर भी वे ब्रह्मादि भेद की दृष्टि होने से तथा कर्तापन के अभिमान के कारण पुरुषों में श्रेष्ठ आदि पुरुष सगुण ब्रह्म को प्राप्त करते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

स संसृत्य पुनः काले कालेनेश्वरमूर्तिना ।
जाते गुणव्यतिकरे यथापूर्वं प्रजायते ॥१४॥

पदच्छेद—

सः संसृत्या पुनः काले कालेन ईश्वर मूर्तिना ।
जाते गुण व्यतिकरे यथा पूर्वम् प्रजायते ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वे ब्रह्मा जी	मूर्तिना ।	६.	प्रेरणा से
संसृत्या	१.	(वहाँ) रहकर	जाते	९.	होने पर
पुनः	११.	फिर से	गुण	७.	सत्त्वादि गुणों में
काले	३.	सामने आने पर	व्यतिकरे	८.	क्षोभ
कालेन	४.	कालरूप	यथा पूर्वम्	१०.	पूर्व कल्प के समान
ईश्वर	५.	भगवान् की	प्रजायते ॥	१२.	उत्पन्न होते हैं

श्लोकार्थ—वहाँ रहकर वे ब्रह्मा जी सामने आने पर कालरूप भगवान् की प्रेरणा से सत्त्वादि गुणों में क्षोभ होने पर पूर्व कल्प के समान फिर से उत्पन्न होते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

ऐश्वर्यं पारमेष्ठ्यं च तेऽपि धर्मविनिर्मितम् ।
निषेव्य पुनरायान्ति गुणव्यतिकरे सति ॥१५॥

पदच्छेद—

ऐश्वर्यम् पारमेष्ठ्यम् च ते अपि धर्म विनिर्मितम् ।
निषेव्य पुनरायान्ति गुण व्यतिकरे सति ॥

शब्दार्थ—

ऐश्वर्यम्	७. भोगों को	**निषेव्य**	८. भोगकर
पारमेष्ठ्यम्	६. ब्रह्म लोक के	**पुनरायान्ति**	११. फिर से इहलोक में (ही) आ जाते हैं
च ते	२. वे मरीचि आदि ऋषिगण	**गुण**	९. सत्त्वादि गुणों में
अपि	३. भी	**व्यतिकरे**	१०. क्षोभ होने पर
धर्म	४. सकम धर्मों से	**सति ॥**	१. हे माता जी !
विनिर्मितम् ।	५. प्राप्त		

श्लोकार्थ—हे माता जी ! वे मरीचि आदि ऋषिगण भी सकाम धर्मों से प्राप्त ब्रह्मलोक में भोगों को भोगकर सत्त्वादि गुणों में क्षोभ होने पर फिर से इहलोक में आ जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

ये त्विहासक्तमनसः कर्मसु श्रद्धयान्विताः ।
कुर्वन्त्यप्रतिषिद्धानि नित्यान्यपि च कृत्स्नशः ॥१६॥

पदच्छेद—

ये तु इह आसक्त मनसः कर्मसु श्रद्धया अन्विताः ।
कुर्वन्ति अप्रतिषिद्धानि नित्यानि अपि च कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

ये	२. जो लोग	**अन्विताः ।**	८. युक्त हैं (वे लोग)
तु	१. तथा	**कुर्वन्ति**	१४. करते हैं
इह	३. इस संसार में	**अप्रतिषिद्धानि**	९. वेद-विहित
आसक्त	४. विषयों में आसक्त	**नित्यानि**	१०. नित्य कर्मों को
मनसः	५. चित्त वाले हैं (और)	**अपि**	१२. काम्य कर्मों को भी
कर्मसु	६. सकाम कर्मों के प्रति	**च**	११. और
श्रद्धया	७. श्रद्धा से	**कृत्स्नशः ॥**	१३. विधि विधान से

श्लोकार्थ—तथा जो लोग इस संसार में विषयों में आसक्त चित्त वाले हैं और सकाम कर्मों के प्रति श्रद्धा से युक्त हैं, वे लोग वेदविहित नित्य कर्मों को भी और काम्य कर्मों को भी विधि-विधान से करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

रजसा कुण्ठमनसः कामात्मानोऽजितेन्द्रियाः ।
पितृन् यजन्त्यनुदिनं गृहेष्वभिरताशयाः ॥१७॥

पदच्छेद—

रजसा कुण्ठ मनसः काम आत्मानः अजित इन्द्रियाः ।
पितृन् यजन्ति अनुदिनम् गृहेषु अभिरत आशयाः ॥

शब्दार्थ—

रजसा	१.	रजोगुण से	पितृन्	१२.	पितरों की
कुण्ठ	३.	मन्द रहती है	यजन्ति	१३.	आराधना करते हैं
मनसः	२.	उसकी बुद्धि	अनुदिनम्	११.	प्रतिदिन
काम	५.	कामनाओं का जाल होता है	गृहेषु	८.	वे लोग घर में
आत्मनः	४.	हृदय में	अभिरत	१०.	आसक्त करके
अजित	७.	वश में नहीं रहती है	आशयाः ॥	९.	चित्त को
इन्द्रियः ।	६.	और इन्द्रियाँ			

श्लोकार्थ—रजोगुण से उसकी बुद्धि मन्द रहती है। हृदय में कामनाओं का जाल रहता है। और इन्द्रियाँ वश में नहीं रहती हैं। वे लोग घर में चित्त को आसक्त करके प्रतिदिन पितरों की आराधना करते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

त्रैवर्गिकास्ते पुरुषा विमुखा हरिमेधसः ।
कथायां कथनीयोरुविक्रमस्य मधुद्विषः ॥१८॥

पदच्छेद—

त्रैवर्गिकाः ते पुरुषाः विमुखाः हरि मेधसः ।
कथायाम् कथनीय ऊरु विक्रमस्य मधुद्विषः ॥

शब्दार्थ—

त्रैवर्गिकाः	१.	धर्म, अर्थ और काल में आसक्त	कथायाम्	९.	कथाओं से
ते	२.	वे	कथनीयः	६.	कहने योग्य है उन
पुरुषाः	३.	लोग	ऊरु	४.	जिनका महान
विमुखाः	१०.	विमुख रहते हैं	विक्रमस्य	५.	पराक्रम
हरि मेधसः ।	७.	भव-भय हारी	मधुद्विषः ॥	६.	मधुसूदन भगवान् की

श्लोकार्थ—धर्म, अर्थ, और काम में आसक्त वे लोग जिनका महान् पराक्रम कहने योग्य है; उन भव-भय-हारी मधुसूदन भगवान् की कथाओं से विमुक्त रहते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नूनं दैवेन विहता ये चाच्युतकथासुधाम् ।
हित्वा शृण्वन्त्यसद्गाथाः पुरीषमिव विड्भुजः ॥१९॥

पदच्छेद—

नूनम् दैवेन विहताः ये च अच्युत कथा सुधाम् ।
हित्वा शृण्वन्ति असद् गाथाः पुरीषम् इव विड्भुजः ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	१२.	अवश्य ही वे	**हित्वा**	८.	पान छोड़कर
दैवेन	१३.	विधाता द्वारा	**शृण्वन्ति**	११.	सुनते हैं
विहताः	१४.	मारे गये हैं	**असद्**	९.	बुरे विषयों की
ये च	४.	(उसी प्रकार) वे लोग	**गाथाः**	१०.	बातें
अच्युत	५.	भगवान् श्री हरि की	**पुरीषम्**	३.	विष्ठा की (चाह करते हैं)
कथा	६.	कथा रूपी	**इव**	२.	जैसे
सुधाम् ।	७.	अमृत का	**विड्भुजः ॥**	१.	विष्ठा भोजी (दूसरे कूकरादि जीव)

श्लोकार्थ—विष्ठा भोजी दूसरे कूकरादि जीव जैसे विष्ठा की चाह करते हैं । उसी प्रकार वे लोग भगवान् श्री हरि को कथा रूपी अमृत का पान छोड़कर बुरे विषयों की बात सुनते हैं । अवश्य ही वे विधाता द्वारा मारे गये हैं ॥

विंशः श्लोकः

दक्षिणेन पथार्यम्णः पितृलोकं व्रजन्ति ते ।
प्रजामनु प्रजायन्ते श्मशानान्तक्रियाकृतः ॥२०॥

पदच्छेद—

दक्षिणेन पथा अर्यम्णः पितृलोकम् व्रजन्ति ते ।
प्रजाम् अनु प्रजायन्ते श्मशान अन्त क्रिया कृतः ॥

शब्दार्थ—

दक्षिणे	६.	दक्षिण की ओर	**प्रजाम्**	११.	अपने ही वंश में
पथा	७.	पितृ मार्ग से	**अनु**	१०.	फिर से
अर्यम्णः	५.	सूर्य से	**प्रजायन्ते**	१२.	जन्म लेतें हैं
पितृलोकम्	८.	पितरों के लोक को	**श्मशान अन्त**	१.	जो लोग गर्भाधान से अन्त्येष्टि पर्यन्त
व्रजन्ति	९.	जाते हैं (और)	**क्रिया**	२.	संस्कारों को
ते ॥	४.	वे लोग	**कृतः ॥**	३.	करते हैं

श्लोकार्थ—जो लोग गर्भाधान से अन्त्येष्टि पर्यन्त संस्कारों को करते हैं । वे लोग सूर्य से दक्षिण की ओर पितृ मार्ग से पितरों के लोक को जाते हैं । और फिर से अपने ही वंश में जन्म लेतें हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

ततस्ते क्षीणसुकृताः पुनर्लोकमिमं सति ।
पतन्ति विवशा देवैः सद्यो विभ्रंशितोदयाः ॥२१॥

पदच्छेद—

ततः ते क्षीण सुकृताः पुनः लोकम् इमम् सति ।
पतन्ति विवशाः देवैः सद्यः विभ्रंशित उदयाः ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	तदनन्तर	सति !	१.	हे माता जी !
ते	३.	वे लोग	पतन्ति	१४.	आ जाते हैं
क्षीण	५.	समाप्त होने पर	विवशाः	६.	विवश होकर
सुकृताः	४.	पुण्य	देवैः	६.	देवताओं द्वारा
पुनः	११.	फिर से	सद्यः	१०.	तुरन्त
लोकम्	१३.	लोक में	विभ्रंशितः	८.	वंचित कर दिये जाने के कारण
इमम्	१२.	इस	उदयाः ॥	७.	ऐश्वर्य से

श्लोकार्थं—हे माता जी ! तदनन्तर वे लोग पुण्य समाप्त होने पर देवताओं द्वारा ऐश्वर्य से वंचित कर दिये जाने के कारण विवश होकर तुरन्त फिर से इस लोक में आते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तस्मात्त्वं सर्वभावेन भजस्व परमेष्ठिनम् ।
तद्गुणाश्रयया भक्त्या भजनीयपदाम्बुजम् ॥२२॥

पदच्छेद—

तस्मात् त्वम् सर्वभावेन भजस्व परमेष्ठिनम् ।
तद् गुण आश्रय या भक्त्या भजनीय पद अम्बुजम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये (हे माता जी)	गुण	८.	गुणों को
त्वम्	२.	तुम	आश्रय या	६.	आश्रय बनाने वाली
सर्वभावेन	११.	सब प्रकार से	भक्त्या	१०.	भक्ति के द्वारा
भजस्व	१२.	भजन करो	भजनीय	५.	भजने योग्य हैं
परमेष्ठिनम् ।	६.	उन् भगवान् श्री हरि का	पद	३.	जिनके चरण
तद्	७.	उनके	अम्बुजम् ॥	४.	कमल

श्लोकार्थं—इसलिये हे माता जी ! तुम जिनके चरण कमल भजने योग्य हैं, उन भगवान् श्री हरि का उनके गुणों का आश्रय बनाने वाली भक्ति के द्वारा सब प्रकार से भजन करो ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

वासुदेवे भगवति भक्तियोगः प्रयोजितः ।
जनयत्याशु वैराग्यं ज्ञानं यद्ब्रह्मदर्शनम् ॥२३॥

पदच्छेद—

वासुदेवे भगवति भक्तियोगः प्रयोजितः ।
जनयति आशु वैराग्यम् ज्ञानम् यद् ब्रह्म दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

वासुदेवे	२.	वासुदेव के प्रति	आशु	५.	तत्काल ही
भगवति	१.	भगवान्	वैराग्यम्	६.	संसार से वैराग्य (और)
भक्तियोगः	४.	भक्ति योग	ज्ञानम्	७.	ज्ञान को
प्रयोजितः ।	३.	किया गया	यद् ब्रह्म	९.	जिससे ब्रह्म का
जनयति	८.	प्राप्त कराता है	दर्शनम् ॥	१०.	साक्षात्कार होता है

श्लोकार्थ—भगवान् वासुदेव के प्रति किया गया भक्तियोग तत्काल ही संसार से वैराग्य और ज्ञान को प्राप्त कराता है । जिससे ब्रह्म का साक्षात्कार होता है ।।

चतुर्विंशः श्लोकः

यदास्य चित्तमर्थेषु समेष्विन्द्रियवृत्तिभिः ।
न विगृह्णाति वैषम्यं प्रियमप्रियमित्युत ॥२४॥

पदच्छेद—

यदा चित्तम् अर्थेषु समेषु इन्द्रिय वृत्तिभिः ।
न विगृह्णाति वैषम्यं प्रियम् अप्रियम् इति उत ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	न	१३.	नहीं
अस्य	२.	इस मनुष्य का	विगृह्णाति	१४.	ग्रहण करता है
चित्तम्	३.	अन्तः करण	वैषम्यं	१२.	विषमता का
अर्थेषु	७.	वस्तुओं में	प्रियम्	८.	प्रिय
समेषु	६.	समान	अप्रियम्	१०.	अप्रिय
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों की	इति	११.	इस प्रकार की
वृत्तिभिः ।	५.	वृत्तियों के द्वारा	उत ॥	९.	तथा

श्लोकार्थ—जब इस मनुष्य का अन्तः करण इन्द्रियों की वृत्तियों के द्वारा समान वस्तुओं में प्रिय तथा अप्रिय इस प्रकार की विषमता का ग्रहण नहीं करता है ।।

पञ्चविंशः श्लोकः

स तदैवात्मनाऽऽत्मानं निःसङ्गं समदर्शनम् ।
हेयोपादेयरहितमारूढं पदमीक्षते ॥२५॥

पदच्छेद—

स: तदा एव आत्मना आत्मानम् निः सङ्गम् समदर्शनम् ।
हेय उपादेय रहितम् आरूढम् पदम् ईक्षते ॥

शब्दार्थ—

सः	२.	वह जीव	हेय	५.	त्याज्य (और)
तदा एव	१.	उसी समय	उपादेय	६.	ग्रहण करने योग्य गुणों से
आत्मना	११.	आत्मरूप से	रहितम्	७.	रहित (एवं)
आत्मानम्	१०.	परमात्मा का	आरूढम्	९.	प्रतिष्ठित
निःसङ्गम्	३.	असङ्ग	पदम्	८.	अपनी महिमा में
सम दर्शनम् ।	४.	समान दर्शी	ईक्षते ॥	१२.	दर्शन करता है

श्लोकार्थ—उसी समय वह जीव असङ्ग, समानदर्शी, त्याज्य और ग्रहण करने योग्य गुणों से रहित एवं अपनी महिमा में प्रतिष्ठित परमात्मा का आत्मरूप से दर्शन करता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

ज्ञानमात्रं परं ब्रह्म परमात्मेश्वरः पुमान् ।
दृश्यादिभिः पृथग्भावैर्भगवानेक ईयते ॥२६॥

पदच्छेद—

ज्ञान मात्रम् परम् ब्रह्म परमात्मा ईश्वरः पुमान् ।
दृश्य आदिभिः पृथग् भावैः भगवान् एकः ईयने ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान	१.	वही ज्ञान	दृश्य	१०.	शरीर, इन्द्रिय और विषय
मात्रम्	२.	स्वरूप	आदिभिः	११.	इत्यादि
परम्	३.	परम	पृथग्	१२.	विभिन्न
ब्रह्म	४.	ब्रह्म	भावैः	१३.	रूपों में
परमात्मा	५.	परमात्मा	भगवान्	९.	भगवान्
ईश्वरः	६	ईश्वर (और)	एकः	८.	(वह) एक ही
पुमान् ।	७.	आदि पुरुष हैं	ईयते ॥	१४	प्रतीत होता है

श्लोकार्थ—वही ज्ञान स्वरूप परम् ब्रह्म परमात्मा ईश्वर और आदि पुरुष हैं । वह एक ही भगवान् शरीर, इन्द्रिय और विषय इत्यादि विभिन्न रूपों में प्रतीत होता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एतावानेव योगेन समग्रेणेह योगिनः ।
युज्यतेऽभिमतो ह्यर्थो यदसङ्गस्तु कृत्स्नशः ।।२७।।

पदच्छेद—

एतावान् एव योगेन समग्रेण इह योगिनः ।
युज्यते अभिमतः हि अर्थः यद् असङ्गः तु कृत्स्नशः ।।

शब्दार्थ—

एतावान्	८. यह		**युज्यते**	१३.	माना गया है
एव	६. ही		**अभिमतः**	१०.	अभीष्ठ
योगेन	६. योग साधन से		**हि**	१२.	ही
समग्रेण	५. सम्पूर्ण		**अर्थः**	११.	फल
इह	१. इस संसार में		**यद्**	३.	जो
योगिनः ।	७. योगियों का		**असङ्गः तु**	४.	वैराग्य है
			कृत्स्नशः ।।	२.	सम्पूर्ण विषयों से

श्लोकार्थ—इस संसार में सम्पूर्ण विषयों से जो वैराग्य है, सम्पूर्ण योग साधन से योगियों का यही अभीष्ट फल ही माना गया है ।।

अष्टाविंशः श्लोकः

ज्ञानमेकं पराचीनैरिन्द्रियैर्ब्रह्म निर्गुणम् ।
अवभात्यर्थरूपेण भ्रान्त्या शब्दादिधर्मिणा ।।२८।।

पदच्छेद—

ज्ञानम् एकम् पराचीनैः इन्द्रियैः ब्रह्म निर्गुणम् ।
अवभाति अर्थ रूपेण भ्रान्त्या शब्दादि धर्मिणा ।।

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	३. ज्ञान स्वरूप और	**अवभाति**	१२.	प्रतीत होता है
एकम्	२. केवल	**अर्थ**	१०.	पदार्थ
पराचीनैः	५. बहिर्मुखी	**रूपेण**	११.	रूप में
इन्द्रियैः	६. इन्द्रियों से	**भ्रान्त्या**	७.	भ्रम वश
ब्रह्म	१. (वह) ब्रह्म	**शब्दादि**	८.	शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध, इत्यादि
निर्गुणम्	४. निर्गुण है तथा	**धर्मिणा ।।**	९.	गुणों से युक्त

श्लोकार्थ—वह ब्रह्म केवल ज्ञान स्वरूप और निर्गुण है तथा बहिर्मुखी इन्द्रियों से भ्रमवश शब्द, स्पर्श, रस, गन्ध इत्यादि गुणों से युक्त पदार्थरूप में प्रतीत होता है ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यथा महानहंरूपस्त्रिवृत्पञ्चविधः स्वराट् ।
एकादशविधस्तस्य वपुरण्डं जगद्यतः ॥२९॥

पदच्छेद—

यथा महान् अहंरूपः स्त्रिवृत् पञ्चविधः स्वराट् ।
एकादशविधः तस्य वपुः अण्डम् जगत् यतः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	एकादशविधः	६.	ग्यारह प्रकार की
महान	२.	महत्तत्त्व	तस्य	८.	(उसी प्रकार) उस परमात्मा का
अहंरूपः	४.	अहंकार	वपुः	९.	शरीर रूप
स्त्रिवृत्	३.	सात्त्विक, राजस, तामस (तीन प्रकार का)	अण्डम्	१०.	ब्रह्माण्ड भी (उसका स्वरूप है) क्योंकि
पञ्चविधः	५.	पांच महाभूत (और)	जगत्	१२.	उत्पत्ति होती है
स्वराट् ।	७.	इन्द्रिय उसका स्वरूप है	यतः ॥	११.	उसी से (उसकी)

श्लोकार्थ—जिस प्रकार महत्तत्त्व, सात्त्विक, राजस, तामस तीन प्रकार का अहंकार पाँच महाभूत और ग्यारह प्रकार की इन्द्रिय उसका स्वरूप है। उसी प्रकार उस परमात्मा का शरीररूप ब्रह्माण्ड भी उसका शरीर है। क्योंकि उसी से उसकी उत्पत्ति होती है।

त्रिंशः श्लोकः

एतद्वै श्रद्धया भक्त्या योगाभ्यासेन नित्यशः ।
समाहितात्मा निःसङ्गो विरक्त्या परिपश्यति ॥३०॥

पदच्छेद—

एतद् वै श्रद्धया भक्त्या योगाभ्यासेन नित्यशः ।
समाहित आत्मा निःसङ्गः विरक्तया परिपश्यति ॥

शब्दार्थ—

एतद् वै	१.	इसे वही	समाहित	८.	एकाग्र
श्रद्धया	३.	जो श्रद्धा	आत्मा	९.	चित्त (और)
भक्त्या	४.	भक्ति	निःसङ्गः	१०.	असंग (हो गया है)
योगाभ्यासेन	७.	योगाभ्यास से	विरक्त्या	५.	वैराग्य (और)
नित्यशः ।	६.	निरन्तर के	परिपश्यति ॥	२.	देखता है

श्लोकार्थ—इसे वही देखता है, जो श्रद्धा, भक्ति, वैराग्य और निरन्तर के योगाभ्यास से एकाग्र चित्त और असंग हो गया है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

इत्येतत्कथितं गुर्वि ज्ञानं तद्ब्रह्मदर्शनम् ।
येनानुबुद्ध्यते तत्त्वं प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥३१॥

पदच्छेद—

इति एतत् कथितम् गुर्वि ज्ञानम् तद् ब्रह्म दर्शनम् ।
येन अनुबुद्ध्यते तत्त्वम् प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	यह	दर्शनम्	६.	साक्षात्कार का
एतत्	२.	अब	येन	९.	जिससे
कथितम्	८.	बता दिया	अनुबुद्ध्यते	१४.	बोध होता है
गुर्वि	१.	हे मातः !	तत्त्वम्	१३.	यथार्थ स्वरूप का
ज्ञानम्	७.	साधनभूत ज्ञान (तुम्हें)	प्रकृतेः	१०.	प्रकृति के
तद्	४.	उस	पुरुषस्य	१२.	पुरुष के
ब्रह्म	५.	ब्रह्म के	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ—हे मातः ! अब यह उस ब्रह्म के साक्षात्कार का साधनभूत ज्ञान तुम्हें बता दिया । जिससे प्रकृति के और पुरुष के यथार्थ स्वरूप का बोध होता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

ज्ञानयोगश्च मन्निष्ठो नैर्गुण्यो भक्तिलक्षणः ।
द्वयोरप्येक एवार्थो भगवच्छब्दलक्षणः ॥३२॥

पदच्छेद—

ज्ञानयोगः च मत् निष्ठः नैर्गुण्यः भक्ति लक्षणः ।
द्वयोः अपि एकः एव अर्थः भगवत् शब्द लक्षणः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानयोगः	२.	ज्ञानयोग	द्वयोः अपि	८.	इन दोनों का
च	३.	और	एकः	९.	एक
मत्	४.	मेरे	एव	१०.	ही
निष्ठः	५.	प्रति	अर्थः	११.	फल है (जिसे)
नैर्गुण्यः	१.	निर्गुण ब्रह्म के विषय में	भगवत्	१२.	भगवान्
भक्ति	६.	भक्ति	शब्द	१३.	शब्द से
लक्षणः ।	७.	योग	लक्षणः ॥	१४.	कहते हैं

श्लोकार्थ—निर्गुण ब्रह्म के विषय में ज्ञान योग और मेरे प्रति भक्तियोग इन दोनों का एक ही फल है । जिसे भगवान् शब्द से कहते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यथेन्द्रियैः पृथग्द्वारैरर्थो बहुगुणाश्रयः ।
एको नानेयते तद्वद्भगवान् शास्त्रवर्त्मभिः ॥३३॥

पदच्छेद—

यथा इन्द्रियैः पृथक् द्वारैः अर्थः बहुगुण आश्रयः ।
एकः नाना ईयते तद्वत् भगवान् शास्त्र वर्त्मभिः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	एकः	७.	एक ही
इन्द्रियैः	४.	इन्द्रियों से	नाना	९.	अनेक रूपों में
पृथक्	२.	भिन्न-भिन्न	ईयते	१०.	प्रतीत होता है
द्वारैः	३.	द्वारों वाली	तद्वत्	११.	उसी प्रकार
अर्थः	८.	पदार्थ	भगवान्	१४.	भगवान् का (अनुभव होता है)
बहुगुण	५.	अनेक गुणों का	शास्त्र	१२.	शास्त्रों के
आश्रयः ।	६.	आधार	वर्त्मभिः ॥	१३.	अनेक मार्गों से (एक ही)

श्लोकार्थ—जिस प्रकार भिन्न-भिन्न द्वारों वाली इन्द्रियों से अनेक गुणों का आधार एक ही पदार्थ अनेकरूपों में प्रतीत होता है । उसी प्रकार शास्त्रों के अनेक मार्गों से एक ही भगवान् का अनुभव होता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

क्रियया क्रतुभिर्दानैस्तपः स्वाध्यायमर्शनैः ।
आत्मेन्द्रियजयेनापि संन्यासेन च कर्मणाम् ॥३४॥

पदच्छेद—

क्रियया क्रतुभिः दानैः तपः स्वाध्याय मर्शनैः ।
आत्म इन्द्रिय जयेन अपि न्यासेन च कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

क्रियया	१.	अनेक कर्मों से	आत्म	७.	मन (और)
क्रतुभिः	२.	यज्ञ	इन्द्रिय	८.	इन्द्रियों को
दानैः	३.	दान	जयेन	९.	जीतने से
तपः	४.	तपस्या	अपि	१०.	भी
स्वाध्याय	५.	वेदाध्ययन (और)	न्यासेन	१३.	त्याग से (भगवान् की प्राप्ति होती है)
मर्शनैः	६.	वेद-विचार से		११.	तथा
			कर्मणाम् ॥	१२.	कर्मों के

श्लोकार्थ—अनेक कर्मों से यज्ञ, दान, तपस्या, वेदाध्ययन और वेद विचार से मन और इन्द्रियों को जीतने से भी तथा कर्मों के त्याग से भगवान् को प्राप्ति होती है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

योगेन विविधाङ्गेन भक्तियोगेन चैव हि ।
धर्मेणोभयचिह्नेन यः प्रवृत्तिनिवृत्तिमान् ॥३५॥

पदच्छेद—

योगेन विविध अङ्गेन भक्तियोगेन च एव हि ।
धर्मेण उभय चिह्नेन यः प्रवृत्ति निवृत्तिमान् ॥

शब्दार्थ—

योगेन	३. योग से	धर्मेण	१२. धर्म है (उससे भगवत् प्राप्ति होती है)
विविध	१. अनेक	उभय	१०. सकाम और निष्काम दोनों
अङ्गेन	२. अङ्गों वाले	चिह्नेन	११. लक्षणों से युक्त
भक्तियोगेन	५. भक्ति योग से	यः	९. जो
च एव	४. और	प्रवृत्ति	७. संसार में प्रवृत्ति और उससे
हि ।	६. तथा	निवृत्तिमान् ॥	८. निवृत्ति कराने वाला

श्लोकार्थ—अनेक अङ्गों वाले योग से और भक्ति योग से तथा संसार में प्रवृत्ति और उससे निवृत्ति कराने वाला जो सकाम और निष्काम दोनों लक्षणों से युक्त धर्म है, उससे भगवत्प्राप्ति होती है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

आत्मतत्त्वावबोधेन वैराग्येण दृढेन च ।
ईयते भगवानेभिः सगुणो निर्गुणः स्वदृक् ॥३६॥

पदच्छेद—

आत्म तत्त्व अवबोधेन वैराग्येण दृढेन च ।
ईयते भगवान् एभिः सगुणः निर्गुणः स्वदृक् ॥

शब्दार्थ—

आत्म तत्त्व	१. आत्मा के स्वरूप	इयते	११. प्राप्ति होती है
अवबोधेन	२. ज्ञान	भगवान्	१०. भगवान् की
वैराग्येण	५. वैराग्यादि	एभिः	६. इन साधनों से
दृढेन	४. पुष्ट	सगुणः	७. सगुण (और)
च ।	३. और	निर्गुणः	८. निर्गुण
		स्वदृक् ॥	९. स्वयं प्रकाश

श्लोकार्थ—आत्मा के स्वरूप ज्ञान और पुष्ट वैराग्यादि इन साधनों से सगुण और निर्गुण स्वयं प्रकाश भगवान् की प्राप्ति होती है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

प्रावोचं भक्तियोगस्य स्वरूपं ते चतुर्विधम् ।
कालस्य चाव्यक्तगतेर्योऽन्तर्धावति जन्तुषु ॥३७॥

पदच्छेद—

प्रावोचम् भक्ति योगस्य स्वरूपम् ते चतुर्विधम् ।
कालस्य च अव्यक्त गतेः अन्तः धावति जन्तुषु ॥

शब्दार्थ—

प्रावोचम्	८.	बता दिया	कालस्य	७.	काल का (लक्षण)
भक्ति	२.	भक्ति	च अव्यक्तगतेः	६.	तथा सूक्ष्म स्वरूप वाले
योगस्य	३.	योग का	यः	९.	जो
स्वरूपम्	५.	लक्षण	अन्तः	११.	विकारों का
ते	१.	हे मातः ! मैंने तुम्हें	धावति	१२.	हेतु है
चतुर्विधम् ।	४.	(सात्त्विक, राजस, तामस और निर्गुण) चार प्रकार का	जन्तुषु ॥	१०	प्राणियों के

श्लोकार्थ—हे मातः ! मैंने तुम्हें भक्ति योग का सात्त्विक, राजस, तामस और निर्गुण चार प्रकार का लक्षण तथा सूक्ष्म स्वरूप वाले काल का लक्षण बता दिया, जो प्राणियों के विकारों का हेतु है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

जीवस्य संसृतीर्बह्वीरविद्याकर्मनिर्मिताः ।
यास्वङ्ग प्रविशन्नात्मा न वेद गतिमात्मनः ॥३८॥

पदच्छेद—

जीवस्य संसृतीः बह्वीः अविद्या कर्म निर्मिताः ।
यासु अङ्ग प्रविशन् आत्मा न वेद गतिम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

जीवस्य	५.	जीव की	यासु	८.	जिन गतियों में
संसृतीः	७.	गतियाँ बताई गई हैं	अङ्ग	१.	हे मातः !
बह्वीः	६.	अनेक प्रकार की	प्रविशन्	९.	प्रवेश करने पर
अविद्या	२.	अज्ञान मूलक	आत्मा	१०.	जीव
कर्म	३.	कर्मों से	न वेद	१३.	नहीं जान सकता है
निर्मिता ।	४.	उत्पन्न	गतिम्	१२.	स्वरूप को
			आत्मा ॥	११.	अपनी आत्मा के

श्लोकार्थ—हे मातः ! अज्ञान मूलक कर्मों से उत्पन्न जीव की अनेक प्रकार की गतियाँ बताई गई हैं । जिन गतियों में प्रवेश करने पर जीव अपनी आत्मा के स्वरूप को नहीं जान सकता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

नैतत्खलायोपदिशेन्नाविनीताय कर्हिचित् ।
न स्तब्धाय न भिन्नाय नैव धर्मध्वजाय च ॥३९॥

पदच्छेद—

न एतत् खलाय उपदिशेत् न अविनीताय कर्हिचित् ।
न स्तब्धाय न भिन्नाय न एव धर्मध्वजाय च ॥

शब्दार्थ—

न	१.	न	न	५.	न
एतत्	१३.	इसका	स्तब्धाय	६.	घमंडी को
खलाय	२.	दुष्ट व्यक्ति को	न	७.	न
उपदिशेत्	१५.	उपदेश करना चाहिये	भिन्नाय	८.	दुराचारी को
न	३.	न	न	१०.	न
अविनीताय	४.	उद्दण्ड व्यक्ति को	एव	११.	ही
कर्हिचित् ।	१४.	कभी	धर्मध्वजाय	१२.	दम्भी को
			च ।	९.	और

श्लोकार्थ—न दुष्ट व्यक्ति को, न उद्दण्ड व्यक्ति को, न घमंडी को, न दुराचारी को और न ही दम्भी को ही इसका कभी उपदेश करना चाहिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

न लोलुपायोपदिशेन्न गृहारूढचेतसे ।
नाभायक्त च मे जातु न मद्भक्तद्विषामपि ॥४०॥

पदच्छेद—

लोलुपाय उपदिशेत् न गृह आरूढ चेतसे ।
न अभक्ताय च मे जातु न मद् भक्त द्विषाम् अपि ॥

शब्दार्थ—

न	१.	न	न	७.	न
लोलुपाय	२.	विषयाभिलाषी को	अभक्ताय	९.	भक्ति से रहित
उपदिशेत्	१४.	उपदेश देना चाहिये	च	१०.	और
न	३.	न	मे	८.	मेरी
गृह	४	घर में	जातु	१३.	कभी (इसका)
आरूढ	६.	आसक्त किये हुये (पुरुष को)	न, मद्, भक्त	११.	न मेरे भक्तों से
चेतसे।	५.	चित्त को	द्विषाम् अपि ॥	१२.	वैर करने वालों को ही

श्लोकार्थ—न विषयाभिलाषी को, न घर में चित्त को आसक्त किये हुये पुरुष को, न मेरी भक्ति से से रहित और न मेरे भक्तों से वैर करने वालों को ही कभी इसका उपदेश देना चाहिये ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

श्रद्धानाय भक्ताय विनीतायानसूयवे ।
भूतेषु कृतमैत्राय शुश्रूषाभिरताय च ॥४१॥

पदच्छेद—

श्रद्धानाय भक्ताय विनीताय अनसूयवे भूतेषु ।
कृत मैत्राय शुश्रूषा अभिरताय च ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धानाय	१.	श्रद्धालु	कृत	७.	रखने वाले
भक्ताय	२.	भगवद्भक्त	मैत्राय	६.	मैत्री भाव
विनीताय	३.	विनयी	शुश्रूषा	९.	भगवत् सेवा में
अनसूयवे ।	४.	निन्दा न करने वाले	अभिरताय	१०.	तत्पर (मनुष्य को इसका उपदेश करना चाहिये)
भूतेषु	५.	प्राणीमात्र के प्रति	च ॥	८.	और

श्लोकार्थ—श्रद्धालु, भगवद्भक्त, विनयी, निन्दा न करने वाले, प्राणिमात्र के प्रति मैत्री-भाव रखने वाले और भगवत् सेवा में तत्पर मनुष्य को इसका उपदेश करना चाहिये ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

बहिर्जातविरागाय शान्तचित्ताय दीयताम् ।
निर्मत्सराय शुचये यस्याहं प्रेयसां प्रियः ॥४२॥

पदच्छेद—

बहिर्जात विरागाय शान्त चित्ताय दीयताम् ।
निर्मत्सराय शुचये यस्य अहम् प्रेयसाम् प्रियः ॥

शब्दार्थ—

बहिर्जात	१.	सांसारिक विषयों से जिसे	निर्मत्सराय	६.	जो ईर्ष्यालु नहीं है (तथा)
विरागाय	२.	वैराग्य उत्पन्न हो गया है	शुचये	११.	पवित्र (मनुष्य) को इसका
शान्त	४.	शान्त है	यस्य	७.	जिसका
चित्ताय	३.	जिसका चित्त	अहम्	८.	मैं
दीयताम् ।	१२.	उपदेश करना चाहिए	प्रेयसाम्	९.	प्रियों में भी (अत्यन्त)
			प्रियः ॥	१०.	प्रिय हूँ (उस)

श्लोकार्थ—सांसारिक विषयों से जिसे वैराग्य उत्पन्न हो गया है, जिसका चित्त शान्त है, जो ईर्ष्यालु नहीं है तथा जिसका मैं प्रियों में भी प्रिय हूँ उस पवित्र मनुष्य को इसका उपदेश करना चाहिये ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

य इदं शृणुयादम्ब श्रद्धया पुरुषः सकृत् ।
यो वाभिधत्ते मच्चित्तः स ह्येति पदवीं च मे ॥४३॥

पदच्छेद—

य: इदम् शृणुयात् अम्ब श्रद्धया पुरुषः सकृत् ।
य: वा अभिधत्ते मत् चित्तः सः हि एति पदवीम् च मे ॥

शब्दार्थ—

य:	२.	जो	**अभिधत्ते**	१२.	कथन करता है
इदम्	७.	इस कथा का	**मत्**	४.	मुझमें
शृणुयात्	६.	श्रवण करता है	**चित्तः**	५.	मन लगाकर
अम्ब	१.	हे मातः !	**सः**	१३.	वह
श्रद्धया	६.	श्रद्धा के साथ	**हि**	१४.	अवश्य
पुरुषः	३.	पुरुष	**एति**	१८.	प्राप्त करता है
सकृत् ।	८.	एक बार भी	**पदवीम्**	१७.	परम पद को
य:	११.	जो (इसका)	**च**	१५.	ही
वा	१०.	अथवा	**मे ॥**	१६.	मेरे

श्लोकार्थ— हे मातः ! जो पुरुष मुझमें मन लगा कर श्रद्धा के साथ इस कथा का एक बार भी श्रवण करता है। अथवा जो इसका कथन करता है; वह अवश्य ही मेरे परम पद को प्राप्त करता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां तृतीयस्कन्धे कापिलेये
द्वात्रिंशः अध्यायः समाप्तः ॥३२॥



ॐ श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

तृतीयः स्कन्धः

त्रयस्त्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—

एवं निशम्य कपिलस्य वचो जनित्री सा कर्दमस्य दयिता किल देवहूतिः ।
विस्रस्तमोहपटला तमभिप्रणम्य तुष्टाव तत्त्वविषयाङ्कितसिद्धिभूमिम् ॥१॥

पदच्छेद—एवम् निशम्य कपिलस्य वचः जनित्री सा कर्दमस्य दयिता किल देवहूतिः ।
विस्रस्त मोह पटला तम् अभिप्रणम्य तुष्टाव तत्त्व विषय अङ्कित सिद्धि भूमिम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार के	विस्रस्त	१०.	हट गया
निशम्य	४.	सुनकर	मोह पटला	९.	अज्ञान का परदा
कपिलस्य	१.	कपिल भगवान् के	तम्	१७.	उनको
वचः	३.	वचन को	अभिप्रणम्य	१६.	प्रणाम करके
जनित्री	७.	माता	तुष्टाव	१८.	स्तुति करने लगीं
सा	६.	उस	तत्त्व विषय	१२.	पच्चीस तत्त्वरूप अर्थों के
कर्दमस्य दयिता	५.	कर्दम ऋषि की प्रिय पत्नी	अङ्कित	१३.	प्रतिपादक सांख्यशास्त्र के
किल	११.	तथा (वे)	सिद्धि	१४.	ज्ञान के
देवहूतिः ।	८.	देवहूति के	भूमिम् ॥	१५.	आधार (भगवान् कपिल) को

श्लोकार्थ—कपिल भगवान् के इस प्रकार के वचन को सुनकर कर्दम ऋषि की प्रिय पत्नी उस माता देवहूती के अज्ञान का परदा हट गया तथा वे पच्चीस तत्त्वरूप अर्थों के प्रतिपादक सांख्यशास्त्र के ज्ञान के आधार भगवान् कपिल को प्रणाम करके उनकी स्तुति करने लगीं ।।

द्वितीयः श्लोकः

देवहूतिरुवाच—अथाप्यजोऽन्तःसलिले शयानं भूतेन्द्रियार्थात्ममयं वपुस्ते ।
गुणप्रवाहं सदशेषबीजं दध्यौ स्वयं यज्जठराब्जजातः ॥२॥

पदच्छेद—अथापि अजः अन्तः सलिले शयानम् भूत इन्द्रिय अर्थ आत्ममयम् वपुः ते ।
गुण प्रवाहम् सद् अशेष बीजम् दध्यौ स्वयम् यत् जठर अब्ज जातः ॥

शब्दार्थ—

अथापि	११.	केवल	गुण प्रवाहम्	१४.	गुणों के प्रवाह से युक्त
अजः	३.	ब्रह्मा जी ने	सद्	१५.	सत् स्वरूप (और)
अन्तः सलिले	४.	प्रलय काल के जल में	अशेष बीजम्	१६.	कार्य कारण का मूल है
शयानम्	५.	शयन करने वाले	दध्यौ	१२.	ध्यान किया था
भूत	७.	पञ्च महाभूत	स्वयम्	१०.	अपने आप
इन्द्रिय, अर्थ	८.	इन्द्रिय, शब्दादि विषय (और)	यत्	१३.	जो
आत्ममयम् वपुः	९.	मनोमय शरीर का	जठर अब्ज	१.	नाभि कमल से
ते ।	६.	आपके	जातः ।	२.	उत्पन्न हुये

श्लोकार्थ—नाभि कमल से उत्पन्न हुये ब्रह्मा जी ने प्रलय काल के जल में शयन करने वाले आपके पञ्चमहाभूत इन्द्रिय, शब्दादि विषय और मनोमय शरीर का अपने आप केवल ध्यान किया था, जो गुणों के प्रवाह से युक्त सत् स्वरूप और कार्य कारण का मूल है ।।

तृतीयः श्लोकः

स एव विश्वस्य भवान् विधत्ते गुणप्रवाहेण विभक्तवीर्यः ।
सर्गाद्यनीहोऽवितथाभिसन्धिरात्मेश्वरोऽतर्क्यसहस्रशक्तिः ॥३॥

पदच्छेद—सः एव विश्वस्य भवान् विधत्ते गुणप्रवाहेण विभक्त वीर्यः ।
सर्ग आदि अनीहः अवितथः अभिसन्धिः आत्म ईश्वरः अतर्क्य सहस्र शक्तिः ॥

शब्दार्थ—

सः	९.	वह	सर्ग आदि	१७.	उत्पत्ति आदि
एव	१०.	ही	अनीहः	१.	(आप) निष्क्रिय
विश्वस्य	१६.	सम्पूर्ण जगत् की	अवितथ	२.	सत्य
भवान्	११.	आप	अभिसन्धिः	३.	संकल्प
विधत्ते	१८.	करते हैं	आत्म	४.	सम्पूर्ण जीवों के
गुण	१२.	सत्त्वादि गुणों के	ईश्वरः	५.	स्वामी (और)
प्रवाहेण	१३.	प्रवाह से	अतर्क्य	७.	अचिन्त्य
विभक्त	१५.	ब्रह्मादिरूपों में (विभाग करके	सहस्र	६.	हज़ारों
वीर्यः	१४.	अपने पराक्रम का	शक्तिः ॥	८.	शक्तियों से सम्पन्न हैं

श्लोकार्थ—आप निष्क्रिय, सत्यसंकल्प, सम्पूर्ण जीवों के स्वामी और हज़ारों अचिन्त्य शक्तियों से सम्पन्न हैं। वह ही आप सत्त्वादिगुणों के प्रवाह से अपने पराक्रम का ब्रह्मादि रूपों में विभाग करके सम्पूर्ण जगत् की उत्पत्ति आदि करते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

स त्वं भृतो मे जठरेण नाथ कथं नु यस्योदर एतदासीत् ।
विश्वं युगान्ते वटपत्र एकः शेते स्म मायाशिशुरङ्घ्रिपानः ॥४॥

पदच्छेद— सः त्वम् भृतः मे जठरेण नाथ कथम् नु यस्य उदरे एतद् आसीत् ।
विश्वम् युगान्ते वटपत्रे एकः शेते स्म माया शिशुः अङ्घ्रि पानः ॥

शब्दार्थ—

सः त्वम्	३.	उस आप को	विश्वम्	१०.	सम्पूर्ण जगत्
भृतः	७.	धारण किया	युगान्ते	१२.	प्रलय काल आने पर
मे	४.	मैंने	वटपत्रे	१३.	वट वृक्ष के पत्ते पर
जठरेण	६.	अपने उदर में	एकः	१८.	अकेले
नाथ	१.	हे स्वामिन् !	शेते स्म	१९.	सोते रहते हैं
कथम्	५.	कैसे	माया	१४.	मायामय
नु	२.	आश्चर्य है कि	शिशुः	१५.	बालक के रूप में
यस्य उदरे	८.	जिसके उदर में	अङ्घ्रि	१६.	अपने चरणों का अंगूठा
एतद् आसीत् ।	९.	यह, ११. लीन रहता है (तथा जो)	पानः ॥	१७.	चूसते हुये

श्लोकार्थ—हे स्वामिन् ! आश्चर्य है कि उस आप को मैंने कैसे अपने उदर में धारण किया । जिसके उदर में यह सम्पूर्ण जगत् लीन रहता है । प्रलयकाल आने पर वट वृक्ष के पत्ते पर मायामय बालक के रूप में अपने चरण का अंगूठा चूसते हुये अकेले सोते रहते हैं ।

पञ्चमः श्लोकः

त्वं देहतन्त्रः प्रशमाय पाप्मनां निदेशभाजां च विभो विभूतये।
यथावतारास्तव सूकरादयस्तथायमप्यात्मपथोपलब्धये ॥५॥

पदच्छेद—त्वम् देह तन्त्रः प्रशमाय पाप्मनाम् निदेशभाजाम् च विभो विभूतये।
यथा अवताराः तव सूकर आदयः तथा अयम् अपि विभो आत्मपथ उपलब्धये ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२.	आप	यथा	९.	जिस प्रकार
देह तन्त्रः	८.	शरीर धारण करते हैं	अवताराः	१२.	अवतार हैं
प्रशमाय	४.	दमन के लिये	तव	१०.	आपके
पाप्मनाम्	३.	पापियों के	सूकर आदयः	११.	वाराह आदि
निदेशभाजाम्	६.	आज्ञाकारी भक्तों के	तथा	१३.	उसी प्रकार
च	५.	और	अयम् अपि	१४.	यह कपिलावतार भी
विभो	१.	हे प्रभो!	आत्म पथ	१५.	आत्मज्ञान की
विभूतये।	७.	मंगल के लिये	उपलब्धये ॥	१६.	प्राप्ति करने के लिये है

श्लोकार्थ—हे प्रभो! आप पापियों के दमन के लिये और आज्ञाकारी भक्तों के मंगल के लिये शरीर धारण करते हैं। जिस प्रकार आपके वाराह आदि अवतार हैं। उसी प्रकार यह कपिलावतार भी आत्मज्ञान की प्राप्ति करने के लिये है।

षष्ठः श्लोकः

यन्नामधेयश्रवणानुकीर्तनाद् यत्प्रह्वणाद्यत्स्मरणादपि क्वचित्।
श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते कुतः पुनस्ते भगवन्नु दर्शनात् ॥६॥

पदच्छेद—यत् नामधेय श्रवण अनुकीर्तनात् यत् प्रह्वणात् यत् स्मरणात् अपि क्वचित्।
श्वादः अपि सद्यः सवनाय कल्पते कुतः पुनः ते भगवन् नु दर्शनात् ॥

शब्दार्थ—

यत् नामधेय	२.	जिस आपके नामों का	अपि	१०.	भी
श्रवण	३.	श्रवण (और)	सद्यः सवनाय	११.	तत्काल, सोमयाजी ब्राह्मण के समान
अनुकीर्तनात्	४.	कीर्तन करने से	कल्पते	१२.	पवित्र हो जाता है
यत् प्रह्वणात्	६.	आपके वन्दन से (तथा)	कुतः	१६.	बात ही क्या है
यत् स्मरणात्	७.	आपके स्मरण से	पुनः ते	१३.	फिर आपका
अपि	८.	भी	भगवन्	१.	हे प्रभो!
क्वचित्।	५.	(भूले-भटके) कभी-कभी	नु	१५.	कृत-कृत्य हो जाये (इसमें)
श्वादः	९.	कुक्कुर भोजी चण्डाल	दर्शनात् ॥	१४.	दर्शन करने से

श्लोकार्थ—हे प्रभो! जिस आपके नामों का श्रवण और कीर्तन करने से भूले-भटके कभी-कभी आपके वन्दन से तथा आपके स्मरण से भी कुक्कुर भोजी चाण्डाल भी तत्काल सोमयाजी ब्राह्मण के समान पवित्र हो जाता है। फिर आपका दर्शन करने से कृत-कृत्य हो जाये इसमें बात ही क्या है ॥

सप्तमः श्लोकः

अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान् यज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवुः सस्नुरार्या ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥७॥

पदच्छेद—अहो बत श्वपचः अतः गरीयान् यत् जिह्वा अग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुः तपः ते जुहुवुः सस्नुः आर्याः ब्रह्म अनूचुः नाम गृणन्ति ये ते ॥

शब्दार्थ—

अहो बत	१.	अहो आश्चर्य है कि	तपः	१४.	तपस्या का
श्वपचः	३.	चाण्डाल	ते	१३.	उन्होंने
अतः	२.	इसी से	जुहुवुः	१७.	हवन कर लिया है
गरीयान्	४.	श्रेष्ठ है	सस्नुः	१६.	तीर्थ स्नान कर लिया (और)
यत् जिह्वा अग्रे	५.	जिसकी जीभ के अग्रभाग में	आर्याः	१०.	श्रेष्ठ जन
वर्तते	८.	विराजमान है	ब्रह्म अनूचुः	१८.	वेद का अध्ययन भी कर लिया है
नाम	७.	नाम	नाम गृणन्ति	१२.	नाम का उच्चारण करते हैं
तुभ्यम् ।	६.	आपका	ये	९.	जो
तेपुः	१५.	अनुष्ठान कर लिया है	ते ॥	११.	आपके

श्लोकार्थ—अहो आश्चर्य है कि इसी से चाण्डाल श्रेष्ठ है, जिसकी जीभ के अग्रभाग में आपका नाम विराजमान है। जो श्रेष्ठजन आपके नाम का उच्चारण करते हैं, उन्होंने तपस्या का अनुष्ठान कर लिया है, तीर्थ स्नान कर लिया है, वेद का अध्ययन कर लिया है, हवन कर लिया है ॥

अष्टमः श्लोकः

तं त्वामहं ब्रह्म परं पुमांसं प्रत्यक्स्रोतस्यात्मनि संविभाव्यम् ।
स्वतेजसा ध्वस्तगुणप्रवाहं वन्दे विष्णुं कपिलं वेदगर्भम् ॥८॥

पदच्छेद—तम् त्वाम् अहम् ब्रह्म परम् पुमांसम् प्रत्यक् स्रोतसि आत्मनि संविभाव्यम् ।
स्वतेजसा ध्वस्त गुण प्रवाहम् वन्दे विष्णुम् कपिलम् वेद गर्भम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	१५.	उस	स्वतेजसा	७.	अपने प्रभाव से
त्वाम्	१६.	आप	ध्वस्त	१०.	शान्त कर देते हैं
अहम्	१८.	मैं	गुण	८.	माया के कार्य के
ब्रह्म	१.	(आप) पर ब्रह्म हैं (और)	प्रवाहम्,	९.	वेग को
परम् पुमांसम्	२.	आदि, पुरुष हैं	वन्दे	१९.	वन्दना करती हूँ
प्रत्यक्	४.	अन्तर्मुख करके	विष्णुम्	१४.	विष्णु स्वरूप
स्रोतसि	३.	वृत्तियों के प्रवाह को	कपिलम्	१७.	कपिल भगवान् की
आत्मनि	५.	अन्तः करण में (आपका)	वेद	१३.	वेद तत्त्व स्थित है
संविभाव्यम् ।	६.	चिन्तन किया जाता है (आप)	गर्भम् ॥	१२.	(आपके) उदर में

श्लोकार्थ—आप पर ब्रह्म हैं, और आदि पुरुष हैं, वृत्तियों के प्रवाह को अन्तर्मुख करके अन्तःकरण में आपका चिन्तन किया जाता है। आप अपने प्रभाव से माया के कार्य के वेग को शान्त कर देते हैं।

नवमः श्लोकः

मैत्रेय उवाच–ईडितो भगवानेवं कपिलाख्यः परः पुमान् ।
वाचाविक्लवयेत्याह मातरं मातृवत्सलः ॥९॥

पदच्छेद—

ईडितः भगवान् एवम् कपिलाख्यः परः पुमान् ।
वाचा विक्लवया इति आह मातरम् मातृवत्सलः ॥

शब्दार्थ—

ईडितः	२.	स्तुति करने पर	वाचा	९.	वाणी में
भगवान्	७.	भगवान्	विक्लवया	८.	गम्भीर
एवम्	१.	इस प्रकार	इति	११.	यह
कपिलाख्यः	४.	कपिल नाम के	आह	१२.	बोले
परः	५.	आदि	मातरम्	१०.	माता से
पुमान् ।	६.	पुरुष	मातृवत्सलः ॥	३.	माता पर स्नेह रखने वाले

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्तुति करने पर माता पर स्नेह रखने वाले कपिल नाम के आदि पुरुष भगवान् गम्भीर वाणी में माता से यह बोले ॥

दशमः श्लोकः

कपिल उवाच–मार्गेणानेन मातस्ते सुसेव्येनोदितेन मे ।
आस्थितेन परां काष्ठामचिरादवरोत्स्यसि ॥१०॥

पदच्छेद—

मार्गेण अनेन मातः ते सुसेव्येन उदितेन मे ।
आस्थितेन पराम् काष्ठाम् अचिरात् अवरोत्स्यसि ॥

शब्दार्थ—

मार्गेण	६.	मार्ग का	ते ।	२.	मेरे द्वारा
अनेन	४.	इस	आस्थितेन	७.	सहारा लेने से
मातः	१.	हे माता जी !	पराम्	९.	परम
ते	८.	तुम	काष्ठाम्	१०.	पद को
सुसेव्येन	५.	सुगम	अचिरात्	११.	शीघ्र ही
उदितेन	३.	कहे गये	अवरोत्स्यसि ॥	१२.	प्राप्त कर लोगी

श्लोकार्थ—हे माता जी ! मेरे द्वारा कहे गये इस सुगम मार्ग का सहारा लेने से तुम परम पद को शीघ्र ही प्राप्त कर लोगी ॥

एकादशः श्लोकः

श्रद्धत्स्वैतन्मतं मह्यं जुष्टं यद्ब्रह्मवादिभिः ।
येन मामभवं याया मृत्युमृच्छन्त्यतद्विदः ॥११॥

पदच्छेद—

श्रद्धस्व एतत् मतम् मह्यम् जुष्टम् यद् ब्रह्म वादिभिः ।
येन माम् अभवम् यायाः मृत्युम् ऋच्छन्ति अतद् विदः ॥

शब्दार्थं—

श्रद्धत्स्व	४.	विश्वास रक्खो	येन	९.	जिससे
एतत्	२.	इस	माम्	१०.	मेरे
मतम्	३.	मत पर	अभवम्	११.	मोक्ष पद को
मह्यम्	१.	मेरे	यायाः	१२.	प्राप्त कर लोगी
जुष्टम्	८.	सेवन किया है	मृत्युम्	१५.	जन्म-मरण के चक्र को
यद्	५.	जिसका	ऋच्छन्ति	१६.	प्राप्त करते हैं
ब्रह्म	६.	वेद	अतद्	१३.	उसे नहीं
वादिभिः ।	७.	ज्ञानियों ने	विदः ॥	१४.	जानने वाले लोग

श्लोकार्थं—मेरे इस मत पर विश्वास रक्खो; जिसका वेद-ज्ञानियों ने सेवन किया है। जिससे मेरे मोक्षपद को प्राप्त कर लोगी उसे नहीं जानने वाले लोग जन्म-मरण के चक्र को प्राप्त करते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

मैत्रेय उवाच—इति प्रदर्श्य भगवान् सतीं तामात्मनो गतिम् ।
स्वमात्रा ब्रह्मवादिन्या कपिलोऽनुमतो ययौ ॥१२॥

पदच्छेद—

इति प्रदर्श्य भगवान् सतीम् ताम् आत्मनः गतिम् ।
स्व मात्रा ब्रह्म वादिन्या कपिलः अनुमतः ययौ ॥

शब्दार्थं—

इति	१.	इस प्रकार	स्व	११.	अपनी
प्रदर्श्य	६.	उपदेश देने के पश्चात्	मात्रा	१२.	माता से
भगवान्	७.	भगवान्	ब्रह्म	९.	ब्रह्म
सतीम्	३.	सर्व श्रेष्ठ	वादिन्या	१०.	वादिनी
ताम्	२.	उस	कपिलः	८.	कपिल
आत्मनः	४.	आत्म	अनुमतः	१३.	अनुमति लेकर
गतिम् ।	५.	ज्ञान का	ययौ ॥	१४	वहाँ से चले गये

श्लोकार्थं—इस प्रकार उस सर्व श्रेष्ठ आत्म ज्ञान का उपदेश देने के पश्चात् भगवान् कपिल ब्रह्मवादिनी अपनी माता से अनुमति लेकर वहाँ से चले गये ॥

त्रयोदशः श्लोकः

सा चापि तनयोक्तेन योगादेशेन योगयुक् ।
तस्मिन्नाश्रम आपीडे सरस्वत्याः समाहिता ॥१३॥

पदच्छेद—

सा च अपि तनय उक्तेन योग आदेशेन योगयुक् ।
तस्मिन् आश्रमे आपीडे सरस्वत्याः समाहिता ॥

शब्दार्थ—

सा	१०.	वह माता देवहूति	योगयुक् ।	९.	योगाभ्यास करती हुई
च	१.	तदनन्तर	तस्मिन्	४.	उस
अपि	११.	भी	आश्रमे	५.	आश्रम में
तनय उक्तेन	६.	पुत्र के द्वारा कहे गये	आपीडे	३.	मुकुट स्वरूप
योग	७.	योग के	सरस्वत्याः	२.	सरस्वती नदी के
आदेशेन	८.	साधन से	समाहिता ॥	१२.	समाधि में स्थित हो गईं

श्लोकार्थ—तदनन्तर सरस्वती नदी के मुकुट स्वरूप उस आश्रम में पुत्र के द्वारा कहे गये योग के साधन से योगाभ्यास करती हुई वह माता देवहूति भी समाधि में स्थित हो गईं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अभीक्ष्णावगाहकपिशान् जटिलान् कुटिलालकान् ।
आत्मानं चोग्रतपसा बिभ्रती चीरिणं कृशम् ॥१४॥

पदच्छेद—

अभीक्ष्ण अवगाह कपिशान् जटिलान् कुटिल अलकान् ।
आत्मानम् च उग्र तपसा बिभ्रती चीरिणम् कृशम् ॥

शब्दार्थ—

अभीक्ष्ण	३.	तीनों कालों में	अत्मानम्	११.	शरीर को
अवगाह	४.	स्नान करने से	च	७.	तथा (वे)
कपिशान्	५.	भूरी	उग्र तपसा	८.	कठोर तपस्या के कारण
जटिलान्	६.	जटाओं में बदल गयी थीं	बिभ्रती	१२.	धारण किये थीं
कुटिल	१.	(उनकी) घुंघराली	चीरिणम्	९.	चीर वस्त्र से ढके
अलकान् ।	२	काली अलकें	कृशम् ॥	१०.	अत्यन्त दुर्बल

श्लोकार्थ—उनकी घुंघराली अलकें तीनों कालों में स्नान करने से भूरी जटाओं में बदल गयी थीं। तथा वे कठोर तपस्या के कारण चीर वस्त्र से ढके अत्यन्त दुर्बल शरीर को धारण किये थीं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रजापतेः कर्दमस्य तपोयोगविजृम्भितम् ।
स्वगार्हस्थ्यमनौपम्यं प्रार्थ्यं वैमानिकैरपि ॥१५॥

पदच्छेद—

प्रजापतेः कर्दमस्य तपः योग विजृम्भितम् ।
स्व गार्हस्थ्य अनौपम्यम् प्रार्थ्यम् वैमानिकैः अपि ॥

शब्दार्थ—

प्रजापतेः	१. उन्होंने प्रजापति	स्व	६. अपने
कर्दमस्य	२. कर्दम ऋषि की	गार्हस्थ्य	८. गृहस्थाश्रम सुख को त्याग दिया
तपः	३. तपस्या (और)	अनौपम्यम्	७. अनुपम्
योग	४. योग के प्रभाव से	प्रार्थ्यम	१०. इच्छा करते हैं
विजृम्भितम् ।	५. प्राप्त	वैमानिकैः अपि ॥	९. जिसकी देवगण भी

श्लोकार्थ—उन्होंने प्रजापति कर्दम ऋषि की तपस्या और योग के प्रभाव से प्राप्त अपने अनुपम गृहस्थाश्रम सुख को त्याग दिया, जिसकी देवगण भो इच्छा करते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

पयःफेननिभाः शय्या दान्ता रुक्मपरिच्छदाः ।
आसनानि च हैमानि सुस्पर्शास्तरणानि च ॥१६॥

पदच्छेद—

पयः फेननिभाः शय्या दान्ताः रुक्म परिच्छदाः ।
आसनानि च हैमानि सुस्पर्श आस्तरणानि च ॥

शब्दार्थ—

पयः	१. (उस भवन में) दूध की	आसनानि	८. सिंहासन
फेननिभाः	२. झाग के समान सफेद	च	९. और
शय्या	४. पलंग	हैमानि	७. सुवर्ण के
दान्ताः	३. हाँथी दाँत से वने	सुस्पर्श	१०. अत्यन्त कोमल
रुक्म	५. सुवर्ण के	आस्तरणानि	११ गद्दे
परिच्छदाः ।	६. पात्र	च ॥	१२. विद्यमान थे

श्लोकार्थ—उस भवन में दूध की झाग के समान सफेद हाथी दाँत से वने पलँग सुवर्ण के पात्र, सुवर्ण के सिंहासन और अत्यन्त कोमल गद्दे विद्यमान थे ॥

सप्तदशः श्लोकः

स्वच्छस्फटिककुड्येषु महामारकतेषु च ।
रत्नप्रदीपा आभान्ति ललनारत्नसंयुताः ॥१७॥

पदच्छेद—

स्वच्छ स्फटिक कुड्येषु महामारकतेषु च ।
॥ रत्न प्रदीपाः आभान्ति ललना रत्न संयुता ॥

शब्दार्थ—

स्वच्छ	१.	वहाँ निर्मल	रत्न प्रदीपाः	६.	रत्नों के दीपक
स्फटिक	२.	स्फटिक मणि की	आभान्ति	७.	शोभित थे (तथा)
कुड्येषु	५.	दीवारों पर	ललना	९.	रमणीयों की मूर्तियाँ
महामारकतेषु	४.	महा मरकत मणि की	रत्न	८.	रत्नों से
च ।	३.	और	संयुताः ॥	१०.	बनीं थीं

श्लोकार्थ—वहाँ निर्मल स्फटिक मणि की और महामरकत मणि की दीवारों पर रत्नों के दीपक शोभित थे । तथा रत्नों से रमणीयों की मूर्तियाँ बनी थीं ॥

अष्टादशः श्लोकः

गृहोद्यानं कुसुमितै रम्यं बह्वमरद्रुमैः ।
कूजद्विहङ्गमिथुनं गायन्मत्तमधुव्रतम् ॥१८॥

पदच्छेद—

गृह उद्यानम् कुसुमितैः रम्यम् बहु अमर द्रुमैः ।
कूजत् विहङ्ग मिथुनम् गायत् मत्त मधुव्रतम् ॥

शब्दार्थ—

गृह	४.	(उनके) भवन का	कूजत्	९.	कलरव (और)
उद्यानम्	५.	बगीचा	विहङ्ग	७.	पक्षियों के
कुसुमितैः	१.	फूलों से लदे हुये	मिथुनम्	८.	जोड़ों का
रम्यम्	६.	रमणीक लग रहा था (तथा)	गायत्	१२.	गुन्जार हो रहा था
बहु	२.	अनेकों	मत्त	१०.	मतवाले
अमर द्रुमैः ।	३.	दिव्य वृक्षों से	मधुव्रतम् ॥	११.	भौरों का

श्लोकार्थ—फूलों से लदे हुये अनेकों दिव्य वृक्षों से उनके भवन का बगीचा पक्षियों के जोड़ों का कलरव और मतवाले भौंरों का गुन्जार हो रहा था था ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यत्र प्रविष्टमात्मानं विबुधानुचरा जगुः ।
वाप्यामुत्पलगन्धिन्यां कर्दमेनोपलालितम् ॥१९॥

पदच्छेद—

यत्र प्रविष्टम् आत्मानम् विबुध अनुचरा जगुः ।
वाप्याम् उत्पल गन्धिन्याम् कर्दमेन उपलालितम् ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जहाँ	वाप्याम्	६.	बावली में
प्रविष्टम्	७.	क्रीडा के लिये प्रवेश करने पर	उत्पल	४.	कमल की
आत्मानम्	१०.	उनकी (कीर्ति का)	गन्धिन्याम्	५.	सुगन्ध से सुवासित
विबुध	८.	देवताओं के	कर्दमेन	२.	कर्दम ऋषि का
अनुचराः	९.	सेवक (गन्धर्वगण)	उपलालितम् ॥	३.	लाड-प्यार पाकर
जगुः ।	११.	गान करते थे			

श्लोकार्थ—जहाँ कर्दम ऋषि का लाड़-प्यार पाकर कमल की सुगन्ध से सुवासित बावली क्रीड़ा के लिए प्रवेश करने पर देवताओं के सेवक गन्धर्वगण उनकी कीर्ति का गान करते थे ॥

विंशः श्लोकः

हित्वा तदीप्सिततममप्याखण्डलयोषिताम् ।
किञ्चिचकार वदनं पुत्रविश्लेषणातुरा ॥२०॥

पदच्छेद—

हित्वा तद् ईप्सित तमम् अपि आखण्डल योषिताम् ।
किञ्चित् चकार वदनम् पुत्र विश्लेषण आतुरा ॥

शब्दार्थ—

हित्वा	६.	त्याग दिया	किञ्चित्	१०.	कुछ
तद्	५.	उस भवन को (उन्होंने)	चकार	१२.	हो गया था
ईप्सित तमम्	४.	अत्यन्त, लालायित रहती थीं	वदनम्	९.	मुख
अपि	३.	भी	पुत्र	७.	पुत्र के
आखण्डल	१.	जिसके लिये इन्द्र की	विश्लेषण	८.	वियोग से (उनका)
योषिताम् ।	२.	पट रानियाँ भी	आतुरा ॥	११.	उदास

श्लोकार्थ—जिसके लिये इन्द्र की पटरानियाँ भी अत्यन्त लालायित रहती थीं; उस भवन को उन्होंने त्याग दिया । किन्तु पुत्र के वियोग से उनका मुख कुछ उदास हो गया था ॥

एकविंशः श्लोकः

वनं प्रव्रजिते पत्यावपत्यविरहातुरा ।
ज्ञाततत्त्वाप्यभून्नष्टे वत्से गौरिव वत्सला ॥२१॥

पदच्छेद—

वनम् प्रव्रजिते पत्यौ अपत्य विरह आतुरा ।
ज्ञात तत्त्वा अपि अभूत् नष्टे वत्से गौः इव वत्सला ॥

शब्दार्थ—

वनम्	६.	वन	तत्त्वा	८.	आत्म ज्ञान से
प्रव्रजिते	७.	चले जाने पर	अपि	१०.	भी
पत्यौ	५.	(माता देवहूति) पति के	अभूत्	१४.	हो गयीं
अपत्य	११.	पुत्र के	नष्टे	२.	बिछुड़ जाने पर
विरह	१२.	वियोग से	वत्से	१.	बछड़े के
आतुरा।	१३.	दुःखी	गौः इव	३.	गाय के समान
ज्ञात	९.	सम्पन्न होने पर	वत्सला॥	४.	वात्सल्यभाव रखने वाली

श्लोकार्थ—बछड़े के बिछुड़ जाने पर गाय के समान वात्सल्य भाव रखने वाली माता देवहूति पति के वन चले जाने पर आत्मज्ञान से सम्पन्न होने पर भी पुत्र के वियोग से दुःखी हो गयीं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तमेव ध्यायती देवमपत्यं कपिलं हरिम् ।
बभूवाचिरतो वत्स निःस्पृहा तादृशे गृहे ॥२२॥

पदच्छेद—

तम् एव ध्यायती देवम् अपत्यम् कपिलम् हरिम् ।
बभूव अचिरतः वत्स निःस्पृहा तादृशे गृहे ॥

शब्दार्थ—

तम् एव	३.	उन ही	बभूव	१२.	हो गयीं
ध्यायती	७.	ध्यान करती हुई (माता देवहूती)	अचिरतः	१०.	शीघ्र
देवम्	५.	देव	वत्स	१.	हे विदुर जी !
अपत्यम्	२.	पुत्र स्वरूप	निःस्पृहा	११.	विरत
कपिलम्	४.	कपिल	तादृशे	८.	उस प्रकार
हरिम्।	६.	भगवान् श्री हरि का	गृहे॥	९.	वैभव सम्पन्न घर से

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! पुत्र स्वरूप उन्हीं कपिल देव भगवान् श्री हरि का ध्यान करती हुई माता देवहूति उस प्रकार के वैभव सम्पन्न घर से शीघ्र विरत हो गयीं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

ध्यायती भगवद्रूपं यदाह ध्यानगोचरम् ।
सुतः प्रसन्नवदनं समस्तव्यस्तचिन्तया ॥२३॥

पदच्छेद—

ध्यायती भगवत् रूपम् यद् आह ध्यान गोचरम् ।
सुतः प्रसन्न वदनम् समस्त व्यस्त चिन्तया ॥

शब्दार्थ—

ध्यायती	१३.	ध्यान करने लगीं	सुतः	१.	पुत्र (कपिल देव भगवान् ने)
भगवत्	६.	भगवान् के	प्रसन्न	४.	हँसमुख
रूपम्	८.	स्वरूप का	वदनम्	५.	मुखारविन्द वाले
यद्	७.	जिस	समस्त	११.	सम्पूर्ण (अवयवों) का
आह	९.	वर्णन किया था (उसके)	व्यस्त	१०.	एक-एक अवयवों का (और)
ध्यान	२.	ध्यान करने	चिन्तया ॥	१२.	चिन्तन करती हुईं (माता देवहूति)
गोचरम् ।	३.	योग्य			

श्लोकार्थ—पुत्र कपिलदेव भगवान् ने ध्यान करने योग्य हँसमुख मुखारविन्द वाले भगवान् के जिस स्वरूप का वर्णन किया था; उसके एक-एक अवयवों का और सम्पूर्ण अवयवों का चिन्तन करती हुई माता देवहूति ध्यान करने लगीं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

भक्तिप्रवाहयोगेन वैराग्येण बलीयसा ।
युक्तानुष्ठानजातेन ज्ञानेन ब्रह्महेतुना ॥२४॥

पदच्छेद—

भक्ति प्रवाह योगेन वैराग्येण बलीयसा ।
युक्त अनुष्ठान जातेन ब्रह्म हेतुना ॥

शब्दार्थ—

भक्ति	१.	भगवद् भक्ति के	युक्त अनुष्ठान	६.	उचित कर्मों के अनुष्ठान से (उनमें)
प्रवाह	२.	वेग के	जातेन	१०.	उत्पन्न हो गया
योगेन	३.	प्रभाव से	ज्ञानेन	९.	ज्ञान
वैराग्येण	५.	वैराग्य से (और)	ब्रह्म	७.	पर ब्रह्म का
बलीयसा ।	४.	प्रबल	हेतुना ॥	८.	साक्षात्कार कराने वाले

श्लोकार्थ—भगवद् भक्ति के वेग के प्रभाव से, प्रबल वैराग्य से और उचित कर्मों के अनुष्ठान से उनमें परब्रह्म का साक्षात्कार कराने वाला ज्ञान उत्पन्न हो गया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

विशुद्धेन तदाऽऽत्मानमात्मना विश्वतोमुखम् ।
स्वानुभूत्या तिरोभूतमायागुणविशेषणम् ॥२५॥

पदच्छेद—

विशुद्धेन तदा आत्मानम् आत्मना विश्वतोमुखम् ।
स्व अनुभूत्या तिरोभूत माया गुण विशेषणम् ॥

शब्दार्थ—

विशुद्धेन	२.	निर्मल हुई	स्व अनुभूत्या	६.	(जो) अपने प्रकाश से
तदा	१.	उस समय	तिरोभूत	१०.	दूर कर देते हैं
आत्मानम्	५.	परमात्मा का ध्यान करने लगीं	माया	७.	माया के
आत्मना	३.	आत्मा से (वे)	गुण	८.	कार्य
विश्वतोमुखम् ।	४.	सर्व व्यापक	विशेषणम् ॥	९.	आवरण को

श्लोकार्थ—उस समय निर्मल हुई आत्मा से वे सर्व व्यापक परमात्मा का ध्यान करने लगीं जो अपने प्रकाश से माया के कार्य आवरण को दूर कर देते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

ब्रह्मण्यवस्थितमतिर्भगवत्यात्मसंश्रये ।
निवृत्तजीवापत्तित्वात्क्षीणक्लेशाऽऽप्तनिर्वृतिः ॥२६॥

पदच्छेद—

ब्रह्मणि अवस्थित मतिः भगवति आतम संश्रये ।
निवृत्त जीव आपत्तित्वात् क्षीण क्लेश आप्त निवृत्तिः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मणि	३.	पर ब्रह्म	निवृत्त	८.	समाप्त हो गया
अवस्थित	६.	स्थिर होने से (उनका)	जीव आपत्तित्वात्	७.	जीव-भाव
मतिः	५.	बुद्धि	क्षीण	१०.	नष्ट हो गये (और वे)
भगवति	४.	भगवान् श्री हरि में	क्लेश	९.	सारे कष्ट
आतम	१.	जीव के	आप्त	१२.	निमग्न हो गईं
संश्रये ।	२.	आश्रय	निवृत्तः ॥	११.	ब्रह्मानन्द में

श्लोकार्थ—जीव के आश्रय पर ब्रह्म भगवान् श्री हरि में बुद्धि के स्थिर होने से उनका जीव-भाव समाप्त हो गया; सारे कष्ट नष्ट हो गये और वे ब्रह्मानन्द में निमग्न हो गईं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

नित्यारूढसमाधित्वात्परावृत्तगुणभ्रमा ।
न सस्मार तदाऽऽत्मानं स्वप्ने दृष्टमिवोत्थितः ॥२७॥

पदच्छेद—

नित्य आरूढ समाधित्वात् परावृत्त गुण भ्रमा ।
न सस्मार तदा आत्मानम् स्वप्ने दृष्टम् इव उत्थितम् ॥

शब्दार्थ—

नित्य	१. निरन्तर	न सस्मार	१२. सुध नहीं रही
आरूढ	३. स्थिर रहने से (उनकी)	तदा	१०. उस समय (उन्हें)
समाधित्वात्	२. समाधि में	आत्मानम्	११. अपने शरीर की
परावृत्त	६. मिट गई	स्वप्ने	८. स्वप्न में
गुण	४. विषयों के	दृष्टम्	९. देखे हुये शरीर की (उसी प्रकार स्मृति नहीं रहती है)
भ्रमा ।	५. सत्यत्व की भ्रान्ति	इव उत्थितम् ॥	७. जैसे जगे हुये मनुष्य को

श्लोकार्थ—निरन्तर समाधि में स्थित रहने से उनकी विषयों के सत्यत्व की भ्रान्ति मिट गई। जैसे जगे हुये मनुष्य को स्वप्न में देखे हुये शरीर की स्मृति नहीं रहती है, उसी प्रकार उस समय उन्हें अपने शरीर की सुध नहीं रही ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तद्देहः परतः पोषोऽप्यकृशश्चाध्यसम्भवात् ।
बभौ मलैरवच्छन्नः सधूम इव पावकः ॥२८॥

पदच्छेद—

तद् देहः परतः पोषः अपि अकृशः च आधि असम्भवात् ।
बभौ मलैः अवच्छन्नः सधूमः इव पावकः ॥

शब्दार्थ—

तद् देहः	१. उनके शरीर का	बभौ	१२. सुन्दर लगता था
परतः	३. दूसरों से होता था	मलैः	७. वह मैल से
पोषः अपि	२. पोषण भी	अवच्छन्नः	८. ढका रहने पर भी
अकृशः	६. अत्यन्त दुर्बल नहीं था	सधूमः	९. धूम से युक्त
च आधि	४. किन्तु मानसिक क्लेश	इव	११. समान
असम्भवात् ।	५. न होने से (वह)	पावकः ॥	१०. अग्नि के

श्लोकार्थ—उनके शरीर का पोषण भी दूसरों से होता था। किन्तु मानसिक क्लेश न होने से वह अत्यन्त दुर्बल नहीं था। वह मैल से ढका रहने पर भी धूम से युक्त अग्नि के समान सुन्दर लगता था ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

स्वाङ्गं तपोयोगमयं मुक्तकेशं गताम्बरम् ।
दैवगुप्तं न बुबुधे वासुदेवप्रविष्टधीः ॥२९॥

पदच्छेद—

स्वाङ्गम् तपो योगमयम् मुक्त केशम् गत अम्बरम् ।
दैव गुप्तम् न बुबुधे वासुदेव प्रविष्ट धीः ॥

शब्दार्थ—

स्वाङ्गम्	३.	उनका शरीर	दैव	४.	भाग्य से
तपो	१.	तपस्या (और)	गुप्तम्	५.	सुरक्षित (था)
योगमयम्	२.	योग से युक्त	न	१३.	(उसकी) नहीं
मुक्त	७.	खुले थे (और)	बुबुधे	१४.	सुध रही
केशम्	६.	(उनके) बाल	वासुदेव	१०.	भगवान् श्री हरि में
गत	९.	गिर गया था	प्रविष्ट	१२.	लग जाने से (उन्हें)
अम्बरम् ।	८.	वस्त्र	धीः ॥	११.	चित्त के

श्लोकार्थ—तपस्या और योग से युक्त उनका शरीर भाग्य से सुरक्षित था । उनके बाल खुले थे और वस्त्र गिर गया था । भगवान् श्री हरि में चित्त के लग जाने से उन्हें उसकी सुध नहीं रही ॥

त्रिंशः श्लोकः

एवं सा कपिलोक्तेन मार्गेणाचिरतः परम् ।
आत्मानं ब्रह्म निर्वाणं भगवन्तमवाप ह ॥३०॥

पदच्छेद—

एवम् सा कपिल उक्तेन मार्गेण अचिरतः परम् ।
आत्मानम् ब्रह्म निर्वाणम् भगवन्तम् अवाप ह ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	आत्मानम्	८.	आत्म स्वरूप
सा	२.	माता देवहूति ने	ब्रह्म	७.	पर ब्रह्म
कपिल	३.	भगवान् कपिल के द्वारा	निर्वाणम्	९.	नित्य मुक्त
उक्तेन मार्गेण	४	बताये हुये मार्ग से	भगवन्तम्	१०.	भगवान् श्री हरि को
अचिरतः	५.	थोड़े ही समय में	अवाप	११.	प्राप्त कर लिया
परम् ।	६	परात्पर	ह ॥	१२.	यह प्रसिद्ध है

श्लोकार्थ—इस प्रकार माता देवहूति ने भगवान् कपिल के द्वारा बताये हुये मार्ग से थोड़े ही समय में परात्पर पर ब्रह्म, आत्म स्वरूप, नित्य मुक्त भगवान् श्री हरि को प्राप्त कर लिया, यह प्रसिद्ध है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तद्वीरासीत्पुण्यतमं क्षेत्रं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
नाम्ना सिद्धपदं यत्र सा संसिद्धिमुपेयुषी ॥३१॥

पदच्छेद—

तद् वीर आसीत् पुण्यतमम् क्षेत्रम् त्रैलोक्य विश्रुतम् ।
नाम्ना सिद्ध पदम् यत्र सा संसिद्धिम् उपेयुषी ॥

शब्दार्थ—

तद्	६.	वह	नाम्ना	१२.	नाम से
वीर	१.	हे विदुर जी !	सिद्ध	१०.	सिद्ध
आसीत्	१४.	हुआ	पदम्	११.	पद
पुण्यतमम्	७.	परम पवित्र	यत्र	२.	जहाँ पर
क्षेत्रम्	८.	स्थान	सा	३.	देवहूति ने
त्रैलोक्य	९.	त्रिलोकी में	संसिद्धिम्	४.	सिद्धि
विश्रुतम् ।	१३.	विख्यात	उपेयुषी ॥	५.	प्राप्त की थी

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! जहाँ पर देवहूति ने सिद्धि प्राप्त की थी; वह परम पवित्र स्थान त्रिलोकी में सिद्धपद नाम से विख्यात हुआ ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तस्यास्तद्योगविधुतमार्त्यं मर्त्यमभूत्सरित् ।
स्रोतसां प्रवरा सौम्य सिद्धिदा सिद्धसेविता ॥३२॥

पदच्छेद—

तस्याः तद् योग विधुतम् आर्त्यम् मर्त्यम् अभूत् सरित् ।
स्रोतसाम् प्रवरा सौम्य सिद्धिदा सिद्ध सेविता ॥

शब्दार्थ—

तस्याः	३.	उनके	स्रोतसाम्	७.	नदियों में
तद् योग	२.	उस योग साधन से	प्रवरा	८.	प्रसिद्ध
विधुतम्	६.	धुल गये (और वे)	सौम्य	१.	हे विदुर जी !
आर्त्यम्	५.	सारे मैल	सिद्धिदा	१३.	सिद्धि देने वाली है
मर्त्यम्	४.	शरीर के	सिद्ध	११.	सिद्ध महात्माओं से
अभूत्	१०.	परिणत हो गईं (जो)	सेविता ॥	१२.	सेवित (और)
सरित्	९.	नदी के रूप में			

श्लोकार्थ—हे विदुर जी ! उस योग साधन से उनके शरीर के सारे मैल धुल गये; और वे नदियों में प्रसिद्ध नदी के रूप में परिणत हो गईं; जो सिद्ध महात्माओं से सेवित और सिद्धि देने वाली है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कपिलोऽपि महायोगी भगवान् पितुराश्रमात् ।
मातरं समनुज्ञाप्य प्रागुदीचीं दिशं ययौ ॥३३॥

पदच्छेद—

कपिलः अपि महायोगी भगवान् पितुः आश्रमात् ।
मातरम् समनुज्ञाप्य प्राग् उदीचीम् दिशम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

कपिलः	२.	कपिल	मातरम्	५.	माता की
अपि	४.	भी	समनुज्ञाप्य	६.	अनुमति पाकर
महायोगी	१.	महान् योगिराज	प्राग्	९.	पूर्व (और)
भगवान्	३.	भगवान्	उदीचीम्	१०.	उत्तर के
पितुः	७.	पिता के	दिशम्	११.	ईशान कोण में
आश्रमात् ।	८.	आश्रम से	ययौ ॥	१२.	चले गये

श्लोकार्थ——महान् योगराज कपिल भगवान् भी माता की अनुमति पाकर पिता के आश्रम से पूर्व और उत्तर के ईशान कोण में चले गये ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

सिद्धचारणगन्धर्वैर्मुनिभिश्चाप्सरोगणैः ।
स्तूयमानः समुद्रेण दत्तार्हणनिकेतनः ॥३४॥

पदच्छेद—

सिद्ध चारण गन्धर्वैः मुनिभिः च अप्सरोगणैः ।
स्तूयमानः समुद्रेण दत्त अर्हण निकेतनः ॥

शब्दार्थ—

सिद्ध	१.	(उस समय) सिद्ध	स्तूयमानः	७.	उनकी स्तुति करने लगीं (तथा)
चारण	२.	चारण	समुद्रेण	८.	समुद्र ने (भी उनकी)
गन्धर्वैः	३.	गन्धर्व	दत्त	११.	दिया
मुनिभिः	४.	ऋषिगण	अर्हण	९.	पूजा करके
च	५.	और	निकेतनः ॥	१०.	निवास स्थान
अप्सरोगणैः ।	६.	अप्सरायें			

श्लोकार्थ——उस समय सिद्ध, चारण, गन्धर्व, ऋषिगण और अप्सरायें उनकी स्तुति करने लगीं तथा समुद्र ने भी उनकी पूजा करके निवास स्थान दिया ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

आस्ते योगं समास्थाय सांख्याचार्यैरभिष्टुतः।
त्रयाणामपि लोकानामुपशान्त्यै समाहितः ॥३५॥

पदच्छेद—

आस्ते योगम् समास्थाय सांख्य आचार्यैः अभिष्टुतः।
त्रयाणाम् अपि लोकानाम् शान्त्यै समाहितः ॥

शब्दार्थ—

आस्ते	११.	स्थित हो गये	त्रयाणाम्	४.	(उस समय वे) तीनों
योगम्	८.	योग मार्ग का	अपि	५.	ही
समास्थाय	९.	सहारा लेकर	लोकानाम्	६.	लोकों की
सांख्य	१.	सांख्य शास्त्र के	शान्त्यै	७.	शान्ति के लिये
आचार्यैः	२.	आचार्यगण भी	समाहितः ॥	१०.	समाधि में
अभिष्टुतः।	३.	उनकी स्तुति करने लगे			

श्लोकार्थ—सांख्य शास्त्र के आचार्यगण भी उनकी स्तुति करने लगे; उस समय वे तीनों ही लोकों की शान्ति के लिये योग मार्ग का सहारा लेकर समाधि में स्थित हो गये।

षट्त्रिंशः श्लोकः

एतन्निगदितं तात यत्पृष्टोऽहं तवानघ।
कपिलस्य च संवादो देवहूत्याश्च पावनः ॥३६॥

पदच्छेद—

एतद् निगदितम् तात यत् पृष्टः अहम् तव अनघ।
कपिलस्य च संवादः देवहूत्याः च पावनः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	९.	यह	कपिलस्य	५.	भगवान् कपिल
निगदितम्	१२.	सुनाया	च	६.	और
तात	२.	हे विदुर जी !	संवादः	११.	संवाद
यत् पृष्टः	३.	(तुमने) जो, पूछा था	देवहूत्याः	७.	माता देवहूति का
अहम् तव	४.	मैंने तुम्हें	च	८.	और
अनघ।	१.	निष्पाप	पावनः ॥	१०.	पवित्र

श्लोकार्थ—निष्पाप हे विदुर जी ! तुमने जो पूछा था; मैंने तुम्हें भगवान् कपिल और माता देवहूति का यह पवित्र संवाद सुनाया ॥

ॐ तत्सत

श्रीगणेशाय नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वितीयः स्कन्धः

अथ प्रथमः अध्यायः

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

वरीयानेष ते प्रश्नः कृतो लोकहितं नृप ।
आत्मवित्संमतः पुंसां श्रोतव्यादिषु यः परः ।।१।।

पदच्छेद—

वरीयान् एषः ते प्रश्नः, कृतः लोक हितम् नृप ।
आत्मवित् सम्मतः पुंसाम्, श्रोतव्य आदिषु यः परः ।।

शब्दार्थ—

वरीयान्	७.	बहुत उत्तम (है)	आत्मवित्	९.	आत्मज्ञानियों से
एषः	५.	यह	सम्मतः	१०.	मान्य (एवं)
ते	४.	आपका	पुंसाम्	११.	मनुष्यों के
प्रश्नः	६	प्रश्न	श्रोतव्य	१२.	श्रवण
कृतः	३.	किया गया	आदिषु	१३.	स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में
लोक, हितम्	२.	संसार के, कल्याण के लिए	यः	८.	यह
नृप।	१.	हे राजन् !	परः ।।	१४.	सर्वश्रेष्ठ (है)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! संसार के कल्याण के लिए किया गया आपका यह प्रश्न बहुत उत्तम है। यह आत्मज्ञानियों से मान्य एवं मनुष्यों के श्रवण, स्मरण तथा कीर्तनीय बातों में सर्वश्रेष्ठ है ।

द्वितीयः श्लोकः

श्रोतव्यादीनि राजेन्द्र नृणां सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यतामात्मतत्त्वं गृहेषु गृहमेधिनाम् ।।२।।

पदच्छेद—

श्रोतव्य आदीनि राजेन्द्र, नृणाम् सन्ति सहस्रशः ।
अपश्यताम् आत्म तत्त्वम्, गृहेषु गृह मेधिनाम् ।।

शब्दार्थ—

श्रोतव्य	७.	सुनने (और)	सहस्रशः ।	९.	हजारों (बातें)
आदीनि	८.	स्मरण, कीर्तनादि के योग्य	अपश्यताम्	४.	न जानने वाले
राजेन्द्र	१.	हे राजन् !	आत्म तत्त्वम्	३.	आत्मा के स्वरूप को
नृणाम्	६.	मनुष्यों के	गृहेषु	२.	घर में (उलझे हुए तथा)
सन्ति	१०.	हैं	गृहमेधिनाम् ।।	५.	गृहस्थ

श्लोकार्थ—हे राजन् ! घर में उलझे हुए तथा आत्मा के स्वरूप को न जानने वाले गृहस्थ मनुष्यों के सुनने और स्मरण, कीर्तनादि के योग्य हजारों बातें हैं ।

तृतीयः श्लोकः

निद्रया ह्रियते नक्तं व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा चार्थेहया राजन् कुटुम्बभरणेन वा ।।३।।

पदच्छेद—

निद्रया ह्रियते नक्तम्, व्यवायेन च वा वयः ।
दिवा च अर्थ ईहया राजन्, कुटुम्ब भरणेन वा ।।

शब्दार्थ—

निद्रया	२.	नींद से	दिवा	११.	दिन
ह्रियते	१४.	बिता देते हैं	च	१२.	इस प्रकार
नक्तम्	५.	रात	अर्थ, ईहया	७.	धन की, इच्छा से
व्यवायेन	४.	स्त्री प्रसंग से	राजन्	१.	हे राजन् ! (मनुष्य)
च	६.	और	कुटुम्ब	९.	परिवार के
वा	३.	अथवा	भरणेन	१०.	पालन-पोषण से
वयः ।	१३.	(सारी) आयु	वा ।।	८.	अथवा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मनुष्य नींद से अथवा स्त्री-प्रसंग से रात और धन की इच्छा से अथवा परिवार के पालन-पोषण से दिन, इस प्रकार सारी आयु बिता देते हैं ।

चतुर्थः श्लोकः

देहापत्यकलत्रादिष्वात्मसैन्येष्वसत्स्वपि ।
तेषां प्रमत्तो निधनं पश्यन्नपि न पश्यति ।।४।।

पदच्छेद—

देह अपत्य कलत्र आदिषु, आत्म सैन्येषु असत्सु अपि ।
तेषाम् प्रमत्तः निधनम्, पश्यन् अपि न पश्यति ।।

शब्दार्थ—

देह	१.	शरीर	तेषाम्	९.	उनकी
अपत्य	२.	सन्तान	प्रमत्तः	८.	पागल हुआ (मनुष्य)
कलत्र	३.	स्त्री	निधनम्	१०.	मृत्यु को
आदिषु	४.	इत्यादि	पश्यन्	११.	देखता हुआ
आत्म सैन्येषु	५.	अपने सम्बन्धियों के	अपि	१२.	भी
असत्सु	६.	असत् होने पर	न	१३.	नहीं
अपि ।	७.	भी (उनके मोह में)	पश्यति ।।	१४.	देखता है

श्लोकार्थ—शरीर, सन्तान, स्त्री इत्यादि अपने सम्बन्धियों के असत् होने पर भी उनके मोह में पागल हुआ मनुष्य उनकी मृत्यु को देखता हुआ भी नहीं देखता है।

पञ्चमः श्लोकः

तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम् ।।५।।

पदच्छेद—

तस्मात् भारत सर्व आत्मा, भगवान् ईश्वरः हरिः ।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यः च, स्मतव्यः च इच्छता अभयम् ।।

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिए	श्रोतव्यः	१२.	श्रवण
भारत	२.	हे परीक्षित् !	कीर्तितव्यः	११.	कीर्तन
सर्व	५.	सब की	च	१३.	और
आत्मा	६.	आत्मा (एवं)	स्मर्तव्यः	१४.	स्मरण करना चाहिए
भगवान्	८.	भगवान्	च	१०.	ही
ईश्वरः	७.	सर्वशक्तिमान्	इच्छता	४.	चाहने वाले (प्राणियों) को
हरिः ।	९.	श्री हरि की (लीलाओं का)	अभयम् ।।	३.	अभयपद

श्लोकार्थ—इसलिए हे परीक्षित् ! अभयपद चाहने वाले प्राणियों को सबकी आत्मा एवं सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीहरि की लीलाओं का ही कीर्तन, श्रवण और स्मरण करना चाहिए।

षष्ठः श्लोकः

एतावान् सांख्ययोगाभ्यां स्वधर्मपरिनिष्ठया ।
जन्मलाभः परः पुंसामन्ते नारायणस्मृतिः ॥६॥

पदच्छेद—

एतावान् सांख्य योगाभ्याम्, स्व धर्म परिनिष्ठया ।
जन्म लाभः परः पुंसाम्, अन्ते नारायण स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	३.	यही	लाभः	५.	फल (है कि)
सांख्य	७.	ज्ञान	परः	४.	सर्वोत्तम
योगाभ्याम्	८.	भक्ति (तथा)	पुंसाम्	१.	मनुष्यों के
स्व, धर्म	९.	अपने, धर्म में	अन्ते	६.	मृत्यु के समय
परिनिष्ठया।	१०.	श्रद्धा के कारण	नारायण	११.	भगवान् नारायण का
जन्म	२.	शरीर धारण का	स्मृतिः ॥	१२	स्मरण रहे

श्लोकार्थ—मनुष्यों के शरीर धारण का यही सर्वोत्तम फल है कि मृत्यु के समय ज्ञान, भक्ति तथा अपने धर्म में श्रद्धा के कारण भगवान् नारायण का स्मरण रहे ।

सप्तमः श्लोकः

प्रायेण मुनयो राजन्निवृत्ता विधिषेधतः ।
नैर्गुण्यस्था रमन्ते स्म गुणानुकथने हरेः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रायेण मुनयः राजन्, निवृत्ताः विधि षेधतः ।
नैर्गुण्यस्थाः रमन्ते स्म, गुण अनुकथने हरेः ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	६.	अधिकतर	नैर्गुण्यस्थाः	५.	निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर(भी)
मुनयः	४.	मुनिजन	रमन्ते स्म	१०.	रमे रहते हैं
राजन्	१.	हे परीक्षित् !	गुण	८	अनन्त लीलाओं के
निवृत्ताः	३.	संन्यास लिए हुए	अनुकथने	९.	कीर्तन में
विधि, षेधतः।	२.	(शास्त्रीय) विधि, और निषेध से	हरेः॥	७.	श्री हरि की

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! शास्त्रीय विधि और निषेध से संन्यास लिए हुए मुनिजन निर्गुण ब्रह्म में लीन रहने पर भी अधिकतर श्री हरि की अनन्त लीलाओं के कीर्तन में रमे रहते हैं ।

अष्टमः श्लोकः

इद भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।
अधीतवान् द्वापरादौ पितुर्द्वैपायनादहम् ॥८॥

पदच्छेद—

इदम् भागवतम् नाम, पुराणम् ब्रह्म सम्मितम् ।
अधीतवान द्वापर आदौ, पितुः द्वैपायनात् अहम् ॥

शब्दार्थ—

इदम्	६.	इस	अधीतवान्	१२.	पढ़ा था
भागवतम्	४.	श्रीमद्भागवत	द्वापर	१०.	द्वापर युग के
नाम	५.	नाम के	आदौ	११.	प्रारम्भ में
पुराणम्	७.	पुराण को	पितुः	८.	पिता
ब्रह्म	२.	वेद के	द्वैपायनात्	९.	वेदव्यास जी से
सम्मितम् ।	३.	समान ही	अहम् ॥	१	मैंने

श्लोकार्थ—मैंने वेद के समान ही श्रीमद्भागवत नाम के इस पुराण को पिता वेदव्यास जी से द्वापर युग के प्रारम्भ में पढ़ा था ।

नवमः श्लोकः

परिनिष्ठितोऽपि नैर्गुण्य उत्तमश्लोकलीलया ।
गृहीतचेता राजर्षे आख्यानं यदधीतवान् ॥९॥

पदच्छेद—

परिनिष्ठितः अपि नैर्गुण्ये उत्तम श्लोक लीलया ।
गृहीत चेताः राजर्षे, आख्यानम् यत् अधीतवान् ॥

शब्दार्थ—

परिनिष्ठितः	३.	श्रद्धा होने पर	गृहीत	८.	खिंच जाने से
अपि	४.	भी	चेताः	७.	हृदय के
नैर्गुण्ये	२.	निर्गुण ब्रह्म में	राजर्षे	१.	हे राजन् !
उत्तम श्लोक	५.	पवित्र कीर्ति (श्री कृष्ण की)	आख्यानम्	१०.	कथा
लीलया ।	६.	लीलाओं में	यत्	९.	(मैंने) जो
			अधीतवान् ॥	११.	पढ़ी थी (उसे कहूँगा)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! निर्गुण ब्रह्म में श्रद्धा होने पर भी पवित्र-कीर्ति भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं में हृदय के खिंच जाने से मैंने जो कथा पढ़ी थी, उसे कहूँगा ।

दशमः श्लोकः

तदहं तेऽभिधास्यामि महापौरुषिको भवान् ।
यस्य श्रद्दधतामाशु स्यान्मुकुन्दे मतिः सती ।।१०।।

पदच्छेद—

तद् अहम् ते अभिधास्यामि, महापौरुषिकः भवान् ।
यस्य श्रद्दधताम् आशु, स्यात् मुकुन्दे मतिः सती ।।

शब्दार्थ—

तद्	५.	वह (कथा)	श्रद्दधताम्	८.	श्रद्धा रखने वाले (प्राणियों) की
अहम्	३.	मैं	आशु	१२.	तत्काल
ते	४.	आपको	स्यात्	१३.	लग जाती है
अभिधास्यामि	६.	सुनाऊँगा	मुकुन्दे	११.	भगवान् श्रीकृष्ण में
महापौरुषिकः	२.	परम भक्त (हैं अतः)	मतिः	१०.	बुद्धि
भवान् ।	१.	आप	सती ।।	९.	उत्तम
यस्य	७.	जिस पर			

श्लोकार्थ--आप परम भक्त हैं; अतः मैं आपको वह कथा सुनाऊँगा, जिस पर श्रद्धा रखने वाले प्राणियों की उत्तम बुद्धि भगवान् श्रीकृष्ण में तत्काल लग जाती है ।

एकादशः श्लोकः

एतन्निर्विद्यमानानामिच्छतामकुतोभयम् ।
योगिनां नृप निर्णीतं हरेर्नामानुकीर्तनम् ।।११।।

पदच्छेद—

एतद् निर्विद्यमानानाम्, इच्छताम् अकुतोभयम् ।
योगिनाम् नृप निर्णीतम्, हरेः नाम अनुकीर्तनम् ।।

शब्दार्थ—

एतद्	२.	सांसारिक विषयों से	नृप	१.	हे राजन् !
निर्विद्यमानानाम्	३.	विरक्त (तथा)	निर्णीतम्	१०.	निश्चित किया गया है
इच्छताम्	५.	इच्छुक	हरेः	७.	श्रीहरि के
अकुतोभयम् ।	४.	अभयपद के	नाम	८.	नाम का
योगिनाम्	६.	योगियों के लिए	अनुकीर्तनम् ।।	९.	कीर्तन

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सांसारिक विषयों से विरक्त तथा अभयपद के इच्छुक योगियों के लिए श्रीहरि के नाम का कीर्तन निश्चित किया गया है ।

द्वादशः श्लोकः

किं प्रमत्तस्य बहुभिः परोक्षैर्हायनैरिह ।
वरं मुहूर्त्तं विदितं घटेत श्रेयसे यतः ॥१२॥

पदच्छेद—

किम् प्रमत्तस्य बहुभिः, परोक्षैः हायनैः इह ।
वरम् मुहूर्त्तम् विदितम्, घटेत श्रेयसे यतः ॥

शब्दार्थ—

किम्	६.	क्या (लाभ ? इसके विपरीत)	वरम्	६.	उत्तम (है)
प्रमत्तस्य	२.	असावधान (प्राणियों) को	मुहूर्त्तम्	८.	एक क्षण (भी)
बहुभिः	४.	अनेकों	विदितम्	७.	ज्ञान-पूर्वक विताया हुआ
परोक्षैः	३.	अज्ञान में बीतने वाले	घटेत	१२.	प्रयास किया जाता है
हायनैः	५.	वर्षों से	श्रेयसे	११.	परम कल्याण के लिए
इह ।	१.	इस संसार में	यतः ॥	१०.	जिसमें

श्लोकार्थ—इस संसार में असावधान प्राणियों को अज्ञान में बीतने वाले अनेकों वर्षों से क्या लाभ ? इसके विपरीत, ज्ञान-पूर्वक विताया हुआ एक क्षण भी उत्तम है, जिसमें परम कल्याण के लिए प्रयास किया जाता है ।

त्रयोदशः श्लोकः

खट्वाङ्गो नाम राजर्षिर्ज्ञात्वेयत्तामिहायुषः ।
मुहूर्त्तात्सर्वमुत्सृज्य गतवानभयं हरिम् ॥१३॥

पदच्छेद—

खट्वाङ्गः नाम राजर्षिः, ज्ञात्वा इयत्ताम् इह आयुषः ।
मुहूर्त्तात् सर्वम् उत्सृज्य, गतवान अभयम् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

खट्वाङ्गः	१.	खट्वाङ्ग	मुहूर्तात्	७.	दो घड़ी में (ही)
नाम, राजर्षिः	२.	नाम के, राजा ने	सर्वम्	८.	सबका
ज्ञात्वा	६.	जानने के पश्चात्	उत्सृज्य	९.	त्याग कर
इयत्ताम्	५.	अवधि को	गतवान्	१२.	प्राप्त कर लिया था
इह	३.	संसार में	अभयम्	११.	धाम को
आयुषः ।	४.	(अपनी) आयु की	हरिम् ॥	१०.	श्रीहरि के

श्लोकार्थ—खट्वाङ्ग नाम के राजा ने संसार में अपनी आयु की अवधि को जानने के पश्चात् दो घड़ी में ही सबका त्याग कर श्रीहरि के धाम को प्राप्त कर लिया था ।

चतुर्दशः श्लोकः

तवाप्येतर्हि कौरव्य सप्ताहं जीवितावधिः ।
उपकल्पय तत्सर्वं तावद्यत्सांपरायिकम् ।।१४।।

पदच्छेद—

तव अपि एतर्हि कौरव्य, सप्ताहम् जीवित अवधिः ।
उपकल्पय तत् सर्वम्, तावत् यत् सांपरायिकम् ।।

शब्दार्थ—

तव अपि	२.	तुम्हारे तो	उपकल्पय	१०.	कर लो
एतर्हि	५.	अभी	तत्	८.	वह
कौरव्य	१.	हे कुरु नन्दन परीक्षित्	सर्वम्	९.	सब
सप्ताहम्	६.	सात दिनों की (है)	तावत्	७	इस बीच (तुम)
जीवित	३.	जीवन की	यत्	११.	जो
अवधिः ।	४.	अवधि	सांपरायिकम् ।।	१२.	परम कल्याण को देने वाला (है)

श्लोकार्थ—हे कुरु नन्दन परीक्षित् ! तुम्हारे तो जीवन की अवधि अभी सात दिनों की है । इस बीच तुम वह सब कर लो, जो परम कल्याण को देने वाला है ।

पञ्चदशः श्लोकः

अन्तकाले तु पुरुष आगते गतसाध्वसः ।
छिन्द्यादसङ्गशस्त्रेण स्पृहां देहेऽनु ये च तम् ।।१५।।

पदच्छेद—

अन्तकाले तु पुरुषः, आगते गत साध्वसः ।
छिन्द्यात् असङ्ग शस्त्रेण, स्पृहाम् देहे अनु ये च तम् ।।

शब्दार्थ—

अन्तकाले	२.	अन्त काल	शस्त्रेण	७.	शस्त्र से
तु	१.	तथा	स्पृहाम्	१३.	ममता-बन्धन को
पुरुषः	४.	मनुष्य को	देहे	८.	शरीर के
आगते	३.	आने पर	अनु	११.	सम्बन्धी (हैं)
गत साध्वसः ।	५.	निडर होकर	ये	१०.	जो
छिन्द्यात्	१४.	काट देना चाहिए	च	९.	और
असङ्ग	६.	वैराग्य रूप	तम् ।।	१२.	उनके (भी)

श्लोकार्थ—तथा अन्त काल आने पर मनुष्य को निडर होकर वैराग्य रूप शस्त्र से शरीर के और जो सम्बन्धी हैं, उनके भी ममता-बन्धन को काट देना चाहिए ।